कविवर पं० परिमल्लजी विरचित—

श्रीपाल-चरित्र

(छन्दबद्ध)

प्रकाशक:—

मूलचन्द किसनदास कापड़िया,

दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गांधीचौक–सूरत।

द्वितीयावृत्ति] वीर सं० २४८५ [वि० सं० २०१५

"जैनमित्र" साप्ताहिक पत्रके ६० वें वर्षके ग्राहकोंको स्व० ब्र० सीतल स्मारक-ग्रन्थमालाकी ओरसे भेंट।

'जैनविजय' प्रिन्टिंग प्रेस, गांधीचौक–सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

मूल्य—तीन रुपये।

श्रीपालचरित्रकी प्रथम आवृत्तिकी

भूमिका

लाहौर नगर शुभ थान है, देश पंजाव मंझार।
ज्ञानचन्द्र जैनी तहां, निवसत वृद्ध अकार॥

बड़ो पुत्र जु शुमेरचंद, है वकील शुभ चित्त।
उनसे छोटा जयचंद, डाकटर परम पवित्त॥

श्रीपाल चारित्र यह, उत्तम ग्रन्थ वसेख।
छापनको तिनने कहो, कथन रसीला देख॥

हस्त लिखत शुभ ग्रन्थ यह, शुद्ध करो चित लाय।
कठिन शब्दका अर्थ भी, तामें लिखो वनाय॥

छापेखाने भेज कर, सुन्दर अक्षर माय।
जैन लालमणि मित्रसे, तुरत लियो छपवाय॥

जयवन्तो परिमल्ल कवि, जिन यह लिखो पुराण।
सोलहसै क्यावन विषे, विक्रम संवत् जाण॥

नर नारी जे भव्यजन, पढ़ें सुनें मन लाय।
रिद्ध सिद्ध अति ते लहैं, पावें सुख्य अथाय॥

वढ़े कुटम्ब वहु संपदा, पुत्रादिक परवार।
चक्रीवत सुख भोग कर, होवें भवदधि पार॥

लधो वधो कुल वेल अति, सगरी जैनसमाज।
ज्ञानचन्द्रकी प्रार्थना, मानो श्रीजिनराज॥
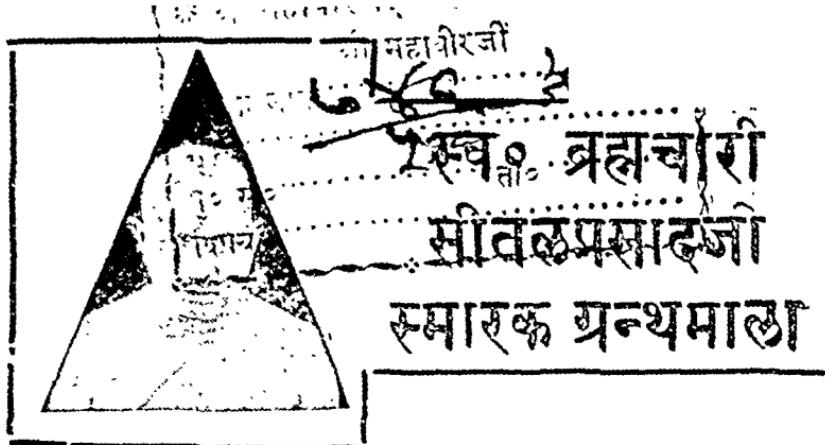
३०–४० जैनधर्म-ग्रन्थोंके लेखक, अनुवादक, टीकाकार व सम्पादक तथा दि० जैन समाजमें अनेक विद्या-संस्थाओंको जन्म दिलानेवाले व जैनधर्म प्रचारके लिये रात दिन अथक् परिश्रम करनेवाले और 'जैनमित्र' साप्ताहिक पत्रकी सम्पादकी करीब ३०–३५ वर्ष तक अविरल रूपसे करनेवाले श्रीमान् जैन धर्मभूषण धर्म-दिवाकर श्री ब्र० सीतलप्रसादजी (लखनऊ नि०) का दुःखद स्वर्गवास पं० अजितप्रसादजी एडवोकेटके सानिध्यमें जब वीर सं० २४६८ (१७ वर्ष पर) लखनऊमें हुआ तब हमने आपकी धर्मसेवा व जाति सेवाके स्मारकके लिये आपके नामकी एक सुलभ ग्रन्थमाला 'जैनमित्र' के ग्राहकोंके लाभार्थ निकालनेके लिये 'जैनमित्र' में कमसे कम १००००) की अपील प्रकट की थी लेकिन उसमें करीब ६०००) ही आये थे तौभी हमने जैसे तैसे प्रबन्ध करके इस ग्रंथमालाका प्रारम्भ वीर सं० २४७० में किया था जो आजतक चालू है व जिसके द्वारा आजतक ८ ग्रन्थ प्रकट होकर 'जैनमित्र' के ग्राहकोंको भेंटमें दिये जा चुके हैं जिनके नाम व परिचय इस प्रकार हैं—

१–स्वतन्त्रताका सोपान—(ब्र० सीतलकृत) अप्राप्य मू० ३)

२—श्री आदिपुराण—स्व० कवि पं० तुलसीदासजी जैन देहली कृत छन्दोबद्ध ४)

३—श्री चन्द्रप्रभ पुराण—स्व० कविरत्न पं० हीरालालजी जैन बड़ौत रचित छन्दोबद्ध ५)

४—श्री यशोधर चरित्र—महाकवि पुष्पदंत रचित ग्रंथका पं० हजारीलालजी जैन कृत हिन्दी अनुवाद ४)

५—सुभौम चक्रवर्ति चरित्र—भट्टारक श्री रत्नचन्द्रजी विरचित मूल व पं० लालारामजी शास्त्री कृत हिंदी टीका ३)

६—श्री नेमिनाथ पुराण—ब्र० नेमिदत्त रचित संस्कृत ग्रन्थका स्व० पं० उदयलालजी काशलीवाल कृत हिंदी अनुवाद ४)

७—श्री प्रश्नोत्तर श्रावकाचार—भट्टारक श्री सकलकीर्तिजी विरचित मूल ग्रन्थकी पं० लालारामजी शास्त्री कृत हिंदी टीका ४)

८—श्री अमितगति श्रावकाचार—आचार्यश्री अमितगति कृत मूल संस्कृत श्लोक तथा पं० भागचन्दजी कृत वचनिका ४)

[सिर्फ प्रथमका छोड़कर ये सभी ग्रन्थ दि० जैन पुस्तकालय सूरतसे मूल्यसे मिलते हैं]

और अब यह नववाँ ग्रँथ—

श्री श्रीपाल-चरित्र छन्दबद्ध

—जो कविवर श्री परिमल्लजी विरचित हैं व जो आजसे ५४ वर्ष पर लाहोर नि० श्री बा० ज्ञानचन्द्रजी जैनीने अपने दि० जैन धर्म पुस्तकालय लाहौरकी ओरसे ऐसे विकट समयमें प्रकट किया था जब कि दि० जैन समाजमें छापेका प्रचार नहीं जैसा था और धर्मग्रन्थ छपानेवाले घृणाकी दृष्टिसे देखे जाते थे। तो भी बा० ज्ञानचन्द्रजी जैनीने इसे प्रकट कर दि० जैन समाजका बड़ा उपकार किया और इसका ऐसा प्रचार हुआ कि इसपरसे तो कवि न्यायतसिंहजी हिसारने

मैनासुन्दरी नाटक रचा तथा उसके बाद श्रीपाल–चरित्र हिंदीमें भी प्रकट हुआ व कवि भगवत् कृत 'भग्न' नाटक भी बना।

यह श्रीपाल–चरित्र खतम हो जानेसे आज ४० वर्षोंसे मिलता ही नहीं था अतः हमने सूरतके चन्दावाड़ीवाले दि० जैन मंदिरसे इसे प्राप्त करके इसकी दूसरी आवृत्ति प्रकट करके "जैनमित्र"के ग्राहकोंको भेंट करनेका तथा विक्रयार्थ अलग निकालनेका साहस किया है जो सबको रुचिकर होगा।

प्रथम आवृत्तिमें इसमें नोटमें कठिन शब्दोंके अर्थ छपे हुए थे, हमने इस आवृत्तिमें छापना ठीक नहीं समझा है; क्योंकि सुप्रसिद्ध श्रीपाल चरित्र जो नन्दीश्वरव्रत (अष्टाह्निका व्रत) का माहात्म्य बतानेवाला सुपरिचित ग्रन्थ है और कथानक प्रायः सभी जैन भाई जानते हैं अतः यह छंदबद्ध ग्रंथ जो दोहा चौपाईमें है तौभी अच्छी तरहसे समझमें आ जायगा।

*　　　*　　　*

कविवर परिमल्लजीका परिचय

इस ग्रंथके रचयिता कविवर पं० परिमल्लजीका विशेष परिचय तो नहीं मिलता तो भी इस ग्रन्थकी भूमिका व अन्त प्रशस्तिके संस्कृत श्लोक व हिन्दी छन्दसे मालूम होता है कि—

कविवर परिमल्ल गोपागिरगढ़के निवासी थे जहांके राजा शूरवीर थे। वहां वरैया दि० जैन जातिके श्री चन्दन चौधरी बसते थे उनके पुत्र रामदास हुए व रामदासके पुत्र परिमल्ल हुए जो आगरामें रहते थे जिन्होंने संस्कृत व छन्द शास्त्रका ज्ञान प्राप्त किया था। अतः आपने हस्त लिखित श्रीपाल चरित्र संस्कृत ग्रन्थसे इस श्रीपाल–चरित्रकी हिन्दीमें छन्दबद्ध रचना की थी जो हस्त लिखित थी उसे

श्री० बाबू ज्ञानचन्द्र जैनी लाहोरने प्रकट कर दि० जैन समाजका बड़ा कल्याण किया है। मूल संस्कृत ग्रन्थ कौन आचार्य भट्टारक या पंडितने बनाया था उसका पता तो नहीं चल सका है तो भी एक प्रशस्तिसे मालूम होता है कि यह ग्रन्थ संस्कृत रचना परसे ही तैयार किया गया था।

श्री बा० ज्ञानचन्द्रजी जैनी लाहौरने इसकी प्रथम आवृत्तिमें जो भूमिका कवितामें लिखी थी वह भी इसमें प्रकट की जाती है। जिससे मालूम होता है कि यह ग्रन्थ कविश्रीने विक्रम सं० १६५१ में रचा था तथा ग्रन्थारम्भसे यह भी मालूम होता है कि ग्रन्थ रचनाकी मिति आषाढ़ सुदी अष्टमी और शुक्रवार थी तथा यह रचना अकबर बादशाहके राज्यकालमें आगरामें की गई थी। सारांश कि करीब ४०० वर्ष पर इस ग्रन्थकी रचना हुई है जिसको प्रथम प्रकट करनेके लिये श्री० बा० ज्ञानचन्दजी जैनी लाहौरका नाम अतीव स्मरण करनेयोग्य है।

निवेदन

'जैनमित्र' की ग्राहक संख्या बहुत है और ६०००) के स्थायी फण्डकी आयमें क्या हो सकता है अतः प्रत्येक ग्राहकसे सिर्फ १) अधिक लेकर यह महान् ग्रन्थ 'जैनमित्र' के ६० वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट किया जाता है।

यदि शीतल स्मारक फण्डमें कोई श्रीमान् बड़ी रकम प्रदान कर दें तो यह स्थायी फण्ड बढ़ सकता है।

विक्रम सं० २०१५
वीर सं० २४८५
पौष सुदी १५
ता० २४-१-५९

निवेदक—
मूलचन्द किसनदास कापड़िया,
—प्रकाशक।

विषय-सूची

(वास्तवमें ४१ ही विषय हैं)

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः

मङ्गलाचरण ।

दोहा ।

सिद्ध सिद्धिदायक सदा, तिहूँ लोक तिहूँ काल ।
मुनिगण ध्यावें ध्यान धर, गृहस्थ जपत ले माल ॥१॥
विघ्न हरण मङ्गल करण, नाम जिन्होंका जान ।
मन वच काया सों नमूँ, कर हो सम कल्यान ॥ २ ॥
सिद्धचक्रव्रत है महा, रिद्धि सिद्धि दातार ।
पायो फल श्रीपाल जो, कहूँ सुनो नर नार ॥ ३ ॥

पञ्चपरमेष्ठीकी स्तुति ।

चौपाई ।

सिद्धचक्र विधि केवल रिद्धि, गुण अनन्त फल वाको सिद्धि ।
प्रणमों परम सिद्ध गुरु सोई, भविक संग ज्यों मंगल होई ॥ ४ ॥
सिद्धपुरी सिद्धनको थान, सिद्ध पुरुष आनन्द निधान ।
प्रगट ज्योति त्रिभुवनमें आहि, अलख देवको लखय न ताहि ॥५॥

अञ्जन रहित निरंजन जानि, हीन बुद्धि क्यों सकूँ वखानि ।
जय जय नमो देव अरहंत, हैं प्रसिद्ध गुण जाहि अनन्त ॥ ६ ॥

जय जय आचारज मुनिराय, अमर खचर जन वन्दहि पाय ।
जय जय नमो परम उवज्झाय, उदित गुण तप कह्यो न जाय ॥ ७ ॥
जय जय साधु लोय वखीर, अमृत बुद्धि वखाणो धीर ।
जिहको नमस्कार कर जोर, नासों काटे यमकी डोरि ॥ ८ ॥
जय जिनन्द आदीश्वर देव, सुर नर कृत पद पंकज सेव ।
जय अजितेश्वर गुण ही निधान, मान रहित मिथ्यातन भान ॥९॥

जय जिन संभव हरे विकार, सुमिरत अभय दान दातार ।
जय अभिनन्दन नन्दन वीर, गुण गरिष्ठ भव भंजन धीर ॥१०॥

सुय सुमतीश्वर परम उदास, सुमति प्रकाशक कुमति विनाश ।
जय जय पद्मप्रभु पहुपाय, श्रीसंजुत कमलासन आय ॥११॥
जय सुपास उपहास निकन्द, प्रणमत दूर होय भ्रम फन्द ।
जय चन्द्रप्रभु केवल नाम, होहु कृपाल सवैं सुख धाम ॥१२॥
जय जय पुष्प हत्यो जिहि मार, दुद्धर धरियो चारित्र भार ।
जय जय शीतलनाथ मुनिन्द, असुर यक्ष सेवें सुरवृन्द ॥१३॥
जय श्रेयांस रहित विष नेश, उदित मुक्ति वधू परमेश ।
जय जय वासुपूज्य व्रत लीन, जैन धर्म उपदेश प्रवीन ॥१४॥
जय श्रीविमल देव तन चंग, विमल वर्ण गुण विमल अभंग ।
जय अनंत जिनवर शुभ थान, मन वच क्रम कर जान प्रमान ॥१५॥
जय श्री धर्मनाथ सुख गेह, कंचन वर्ण विराजत देह ।
जय श्री शांति पयासी शांति, दुःख हरण मूर्ति सो भांति ॥१६॥

जय श्री कुन्थ कुपंथ विनाश, केवल उदित ज्ञान परकाश।
जय श्री अरहनाथ जगनाह, अति बलिष्ठ जिहि मोह नसाह ॥१७॥

जय श्री मल्लि मलो जिहमान, पुण्य तीर्थ महि जो परधान।
जय श्री मुनिसुव्रत मुनिराय, इन्द्र चन्द्र सुर सेवें पाय ॥१८॥

जय जय नमि रत्नत्रय धार, मनके छाडे सकल विकार।
जय श्री नेमिनाथ गुण धाम, तजि राजुल पहुँचे निर्वाण ॥१९॥

जय श्री पार्श्वनाथ जिनन्द, फणमणि मंडित त्रिभुवन चन्द।
जय श्री वर्द्धमान जिन राय, केहरि लक्षण आसन पाय ॥२०॥

चतुर्विंश जिन ये गुणमाल, प्रणमत दूर होय भव-जाल।
और जे विहरमान जिन बास, महाविदेहमें हैं जगधीस ॥२१॥

तीन लोक जिन मंदिर जिते, ऊरध मध्य अधोमें तिते।
कीनो नमस्कार परिमल्ल, जिन तैं दूर होय सब सल्ल ॥२२॥

अथ ग्रन्थ प्रारम्भ।

दोहा।

पंच परम गुरुको नमूं, नमूं चौविस जिन राय।
श्रीपाल चारित्रकी, भाषा कहूं वनाय ॥ २३ ॥

मैं मतिहीन अशक्त हूँ, शारद करो सहाय।
शारद माता जगतकी, तिष्ठो मुझ उर आय ॥ २४ ॥

अशुभ हरणी जग बन्दनी, विद्याके बल संग।
देह बुद्धि महाधनी, होय उक्त नवरंग ॥ २५ ॥

चौपाई ।

जिनमुख अम्बुजसे उच्चरी, त्रिभवन माहि कला विस्तरी ।
द्वादशांग भाषत भगवती, जासु प्रसन्न होय बहुमती ॥२६॥
विमल वर्ण वेदनमें कही, निज निरपेक्ष अभंग भा रही ।
निर्गुण ताहि कहे बहु चंग, गुण जामें राजे सरवंग ॥२७॥
सारद गुण गाढो करि गहैं, मूर्खसे पण्डित पद लहैं ।
षट् दर्शन मुख मण्डन शार, मिथ्या कुमति विनाशन हार ॥२८॥
स्वामिनी जन पर होहु दयाल, बढ़ै कथा जो होय रसाल ।
तोहि सुमरि करि लेखन गहूं, सिद्धचक्र विधि वर्णन कहूं ॥२९॥
जो शारद पसाय मन लहूं, नवरस कथा प्रगट करि कहूं ।
गुरु गौतम सो देहु पसाव, बाढे कथा होय मन चाव ॥३०॥

ॐ ॐ ॐ

कोटी भट्ट श्रीपाल चरित, वरनन करूँ सुनो धर चित्त ।
पढ़त सुनत मन उपजे चाव, कवि परिमल्ल हिए धरि भाव ॥३१॥
कैसे श्रीपाल अवतरो, कैसे कुष्ट व्याधि कर भरो ।
कैसे बन उद्यान हि गयो, कैसे सिद्ध चक्रव्रत लयो ॥३२॥
कैसे सागर डूबा जाय, कैसे कोढ जु गयो पलाय ।
कैसे दल तिन पायो घणो, क्यों तिन प्रगट्यो बल आपणो ॥३३॥
कैसे राज कियो परवान, कैसे प्रगट्यो चल्यो पुराण ।
मूल ग्रन्थके मैं अनुसार, भाषा करूँ पढ़ें नर नार ॥३४॥
सम्वत् सोलहसे उचरो, ता उप्पर इक्यावन धरो ।
मास असाढ़ पहुँचो आय, वर्षाऋतुको कहै बढ़ाय ॥३५॥
पक्ष उजालो आठें जाणि, सुकरवार वार परवांणि ।
कवि परमल्ल शुद्धकर चित्त, आरंभ्यो श्रीपाल चरित्त ॥३६॥

बाबर बादशाह हो गयो, ता सुत शाह हुमायुं भयो ।
तासुत अकबर शाह प्रमाण, सो तप तपे दूसरो भाण ॥३७॥
ताके राज न होय अनीत, वसुधा सकल करी बस जीत ।
केतेक देश तासकी आण, दूजो और न ताहि समान ॥३८॥
ताके राज कथा यह करी, कवि परमल्ल प्रगट विसतरी ।
जम्बूद्वीप प्रगट शुभ थान, योजन लक्ष तास परमान ॥३९॥
जा चहुँ ओर सिंधु जल बहै, कोऊ जाको पार न लहै ।
तामें भरतक्षेत्र परधान, बहुत देश तामें परवान ॥४०॥

※ ※ ※

मगध नाम राजे तहां देश, भूमण्डलमें सुयश अशेष ।
नगरी राजग्रही सुवसाइ, ताकी शोभा कही न जाय ॥४१॥
अमरपुरी अमरनकी जिसी, है प्रसिद्ध महिमण्डल तिसी ।
सुन्दर गेह शत खने अवास, बाडी बाग कुवा चहुँ पास ॥४२॥
श्रेणिक राज तहां अरिमल्ल, करै राज प्रगटो भुविमल्ल ।
एक छत्र निवसे इह रीति, वसुधा घणो करी वश जीति ॥४३॥
कथा नाथ है ताको नाम, पुण्यवन्त सबको सुखधाम ।
ताको सत सील जाणिये, धर्म्मात्मा सबै बाणिये ॥४४॥
कोऊन ताकै दुःखीयन लोई, दया दान पालें सब कोई ।
ताके बहुसुत महा सुजाण, तामें वारिषेण परधान ॥४५॥
चेलना राणी है प्रधान, सत्य शील अरु गुणहि निधान ।
बहु सुन्दरी कछु कहि नहि पैरै, दर्शन होत पापको हरै ॥४६॥
मिथ्यादर्शन रहित सुजान, समकितकी परतीति बखान ।
अति ही जैनधर्म करि लीन, दया दान पालन परवीन ॥४७॥

करै राज्य श्रेणिक नरपार, बहुत राय सेवैं दरबार।
एक दिवस सिंहासन आय, बैठे सिरपर छत्र धराय ॥४८॥
सेवक लक्ष सेवता करैं, हय गय गाय चवर द्वै दुरैं।
तहं अवसर आयो बनपार, हर्षवन्त मनमांहि अपार ॥४९॥
छह ऋतुके फूल फल जु भये, अति मनोज्ञ राजाको दए।
विपुलाचल गिरवर परधान, आयो समोशरण तिहि थान ॥५०॥

卐 卐 卐

चतुर वीसमों वीर जिणन्द, दरसण तें दुःख दूर निकन्द।
कोलूहल कछु कह्यो न जाय, सुरग लोक तहं ठैरो आय ॥५१॥
इन्द्र चन्द्र धरणेंद्र फणेश, तिनको बहुत होय परवेश।
स्तुति करत जोर दोउ हाथ, ठाड़े रहत सुणा हो नाथ ॥५१॥
अमर खचर गण गन्धर्व जिते, सेव करण आवत हैं तिते।
ऐसी सुणि आनन्धो राय, शीघ्र ताहि तेहि कियो पयाव ॥५३॥
कर कंकण आभरण अपार, दीनो ताहि न लागी बार।
आसन ते उठी ठाड़ो भयो, मनको भरम सबै भजि गयो ॥५४॥
तिहते उपज्यो सुख अशेष, तीन प्रदक्षिण दई नरेश।
परोक्ष नमो मनमें सुख पाय, फूलो अंग न आंगन माय ॥५५॥
आनन्दभेर दिवाय सुख लह्यो, परिजन सहित राव उमगह्यो।
पाटवर्धना गुणन अभंग, नारी चेलना ताके संग ॥५६॥
गुण वरणत सो पहुंचो तहां, समोसरण श्रीजिनको जहां।
द्वादश कोठा देखण लए, धनपति आय आप निरमए ॥५७॥
तिनकी शोभा वरण जो कहुं, कहत कथा कछु अन्त न लहूं।
मानस्थंभ जु पेखियो राव, अतिआनन्द भयो चित चाव ॥५८॥

तब जिनवर थुति लागो करण, जय जय जन्म जरा भवहरण।
जय जय उदित जोत जिनेश, जय जय मुक्तिवधू परमेश ॥५९॥
जय जय छियालिस गुणमंड, जय अतिशय चवतीस प्रचंड।
तीन लोककी शोभा ताहि, कोऊ और न उपमा आहि ॥६०॥

जय जय केवल णाणपयास, जय जय निर्नाशिन भवत्रास।
जय जय मान रहित जिनदेव, सुरनर असुर करें तुम सेव ॥६१॥
जय जय जय जिनस्तुति करेय, वार तीन पादक्षिणा देय।
भयो प्रत्यक्ष सब दुख भजिगयो, मनवचकाय सुखी अति भयो ॥६२॥
गौतम स्वामी गणधर आहि, नमस्कार कियो नृप ताहि।
जिहठां अर्जिकानको साथ, वंदन तहां करो नृपनाथ ॥६३॥
और छुल्लक तहां जुरे जो आय, समाधान तिन पूछो राय।
ताके हृदय न कछु कुभाव, नर कोठें तहां बैठो राव ॥६४॥

१-अंग देशमें चम्पापुरका वर्णन

श्रेणिक पूछे वीर जिनेश, सिद्धचक्र फल कहो परमेश।
गुण अनन्त राजैं सर्वंग, वाणी तब उचरी जो अभंग ॥६५॥
गौतमस्वामी गुणह निधान, लागे पूछन केवलज्ञान।
सुन सुन श्रेणिक रायप्रधान, सिद्धचक्र व्रत कह्यो बखान ॥६६॥
जम्बूद्वीप मनोज्ञ अपार, योजन लक्ष तास विस्तार।
क्षार सिंधु ता चहुंधा वहै, अति अथाहको पार न लहै ॥६७॥
तामें भरतक्षेत्र सो सार, सब ही क्षेत्रनमें अधिकार।
तामें अंगदेश परधान, अवर देश नहीं ता सम आन ॥६८॥
तहां नगर चम्पापुर बसै, देखत जाहि चित्त उलहसै।
साहैं तहां सतखने अवास, द्वारे कंचन कलश निवास ॥६९॥
घर घर प्रतिमा चैत्य सुठान, अति उज्ज्वल ते फटिक समान।
विच विच ही ते बने सुरंग, चमकत तिनमें कञ्चन रंग ॥७०॥

❀ ❀ ❀

घर घर सबै लोग परधान, लक्ष्मीवन्त सर्व गुण जान।
घर घर सूरि वेद ध्वनि करें, संस्कृत भाषा ते उच्चरें ॥७१॥
सामुद्रिक व्याकरण पुराण, घर घर करते अर्थ बखान।
ज्योतिष अर वैदिक गुण लीन, सब नर कोष कला परवीण ॥७२॥
सब ही दया धर्मको धरें, पर हिंसा नहीं कोऊ करें।
अति रमणिक हाट बाजार, वसें तहां नर साहूकार ॥७३॥
वणजें नग निर्मोलक चुनी, जिनको यश बोले सब दुनी।
कहूँ होय बालक पेखणो, सो कछु ताहि कहत नहीं बणो ॥७४॥
कहीं कहीं नाटक नाचे ठाट, कहीं कहीं याचें ब्राह्मण भाट।
कुल छत्तीस वसें जहां लोग, कुलकी रीति न छांडे कोय ॥७५॥

अपने अपने चित सब सुखी; तिह पुर माहि न कोऊ दुःखी।
आस पास खातिका सुथाण, बहु बावड़ी कुआ निर्माण ॥७६॥
अर तहां बाग रवाने खरे, सघन दास दाडम द्रुम फरे।
बहुत भांति अमृत फल रूख, देखत नयन न लागे भूख ॥७७॥
फ़ल नारियल अम्ब अभङ्ग, बहुत फली नारङ्ग सुरङ्ग।
अगणित केला और खजूर, रहे बिजोरा तहां भरपूर ॥७८॥
कुसम कदम्ब रहे बहु फूल, रहे भ्रमर तिनके रस भूल।
तिहकी शोभा कही न जाय, योजन वास रही महकाय ॥७९॥

वस्तुबन्ध छन्द।

क़ेवरो केतकी मरवो मगरो अरजाय,
गुलाब कुँजो अवर करणो रह्यो तहां महकाय।
मंजरी अरजु ही चम्पो राइ वेलि सुवास,
पाण्डरु निवारो राइ चम्पो देखत बढ़े हुल्लास।
फूली चमेली सरषडी मुचकुन्द शोभित फूल,
और अनेक सुगन्ध जितकित बहुत फूले फूल ॥८०॥

चौपाई।

तहां फूल फूले बहु भाय, शोभा कछु कही नहिं जाय।
बहु कोकिल बोलें मधु भाख, सारस सूवा अगणित लाख ॥८१॥
पांडु खूमरी अवर चकोर, कहूं कहूं बोलें विचबिच मोर।
जो सब पँछी वर्णन कहूं, कहत कथा कछु अन्त न लहूं ॥८२॥
और तहां जो करोवर भले, मनो उमगि आप ही चले।
तिनमें अम्बुज बहुत विसाल, लेते बास बन्धे अलि माल ॥८३॥

चकवा चकवी केलि करांय, जलकी कूकरी तहां फहरांय।
जिनकी शोभे मधुरी चाल, रहे निकट बहू यूथ मराल ॥८४॥
जलचर जीव रहत जहं जिते, बढे कथा जो वर्णे तिते।
है मनोज्ञ सब ही विधि खरी, मानों इन्द्रपुरी खिस परी ॥८५॥

२-राजा अरिदमन व राणी कुन्दप्रभा

करे राज अरिदमन नरेश, ताको बहुत आहि अलवेश।
वीरदमन ता लहुरो वीर, कोटीभट्ट अरु साहस धीर ॥८६॥
हय गय पायक अगम अपार, परिग्रह बहुत लहेको पार।
शूर असंख रहैं दरबार, जे दाबें छत्तीस हथ्यार ॥८७॥
आज्ञा देश देशांतर दूर, सुयश रह्यो महि मंडल पूर।
पट्टणगढ़ नगरी भूपाल, तिनकी आवे बहुत रसाल ॥८८॥
एकछत्र सो आहि नरिंद, मानो सो है दूजो इन्द।
कुन्दप्रभा राणी तसु अंग, पाटप्रधान जो गुणन अभंग ॥८९॥
शीलवन्त सुन्दरी अतिसोय, तासम त्रिया अवर नहीं कोय।
जैसे रामचन्दके सिया, प्रगट पुराण जनककी धिया ॥९०॥
जैसे शशिकैं रोहिणी नेह, जैसे कमला हरिके गेह।
समय समयके सुख हैं जितो, त्रिलपति पियके संगसो तितो ॥९१॥

३–श्रीपालका जन्म

एकै दिन सो रैन अवास, सोय गई कर भोगविलास ।
तीन याम निश बीती जबै, चौथो याम आइयो तबै ॥९२॥
भयो प्रफुल्लित ताको हियो, अति उत्तम सुपनों पेखियो ।
धवल महागिरि कंचन वर्ण, कल्पवृक्ष देख्यो सोरवण ॥९३॥
तब तहं अन्धकार मिट गयो, पहु पाटी भुणसारो भयो ।
बहु बुधिवन्त सयानी खरी, नाह पास भाखे सुन्दरी ॥९४॥
राय भने सुन सुन्दर नार, सुपनेको फल कहूं विचार ।
भूधर सुरतरु धवल सुदीठ, है है सो फल तुमको ईठ ॥९५॥
बहुरो जंपै राई सु जान, महाकुशल अर विनय प्रमाण ।
सकल परिग्रहको सुखकार, होवै सुन्दरी तोहि कुमार ॥९६॥
कञ्चन गिरि सम है है धीर, शोभित निर्भय होय शरीर ।
कल्पवृक्ष सम होय उदार, दुखित जननको करे प्रतिपार ॥९७॥
धर्म धुरन्धर लीजहु जान, बहुत कहां लो कहूँ बखान ।
यह सुन दम्पती बहु सुख भयो, निवसत धर्म करत दिग गयो ॥९८॥

ॐ ॐ ॐ

सुरग थकी स्वर चय कर गिरो, राणी गर्भ आय संचरो ।
मुह पांडुक देखियो अतिखिन्न, पुण्य भव्य दोहग उत्पन्न ॥९९॥
थूल पयोधर भये पय भरे, अरु ता नैन देखिये हरे ।
दशों मास भये गर्भ प्रमाण, अति उदित रवि किरण समान ॥१००॥
जन्मों नन्दन कुलह पयास, दुर्जन जन प्रगट्यो अति त्रास ।
सज्जन जनमन भयो आनन्द, लक्षणवन्त उगो कुलचन्द ॥१०१॥

ताको मुख देखियो नरेश, मनवांछित सुख भयो अशेष ।
कांसा ताल बजें अनिवार, ब्राह्मण वेद पढ़ें झुणकार ॥१०२॥
अतिप्रमोद मन भयो अपार, कहैं सुहागणि मंगलचार ।
अरिदमन आनन्दोचित्त, आदर कियो बन्धू अर मित्त ॥१०३॥
भयो उदार अति फूल्यो गात, धन विलसैं भाषें शुभ बात ।
हीनदीन जे दुःखनिधान, तिनको दीने विन उन्मान ॥१०४॥
हय हाटक मुक्ताभरि थार, बहु धन दीनो मंगनहार ।
तब तिन जन्म सफल कैचयो, बालक तीस दिवसको भयो ॥१०५॥
राजा राणी भयो सुख अंग, बालक लियो उठाय उचंग ।
श्री जिन भवन पहुँचो जाय, परसे महामुनिवरके पाय ॥१०६॥
जाको निर्विकार है हियो, भवसुख सकल छांड़ि जिन दियो ।
ताके चरणन परो बाल, रूपवन्त शोभै सुकुमाल ॥१०७॥
मुनिवर आप उठायो सोय, धर्मवृद्धि दीनी मुख जोय ।
जीके कर मुनि दर्शन दीठ, ह्वै है यह सबको मन ईठ ॥१०८॥

मुनिवर बन्द गेह जब गए, बहुत हर्ष हिरदयमें भए ।
निमती एक बुलायो जहां, कुमर नाम नृप पूछे तहां ॥१०९॥
निमती भाषे निमत विचार, याहि नाम श्रीपालकुमार ।
अरु यामें हैं गुण अधिकार, वरणत मोह होयगी बार ॥११०॥
यह सुन नमस्कार तब कियो, दिये दान जोतिषि घर गयो ।
जननी जनक लाडियां जान, वरस आठको भयो प्रमान ॥१११॥
पंडित पास पढनसो गयो, ओंकार परथम ही लियो ।
गण अक्षरमें मति भयो लीन, तर्क छन्द भया कोष प्रवीन ॥११२॥

सामुद्रिक सीख्यो शुभ सार, पढो ग्रन्थ व्याकरण कुमार।
सब ही विधि सो कला विद्वान, सीखो बहु सो अर्थ पुराण ॥११३॥
कला बहत्तर प्रगट विद्वान, करे नाद गन्धर्व समान।
हय गय वाहन रथ विधि आहिं, गुण छत्तोस प्रसिद्ध हैं ताहि ॥११४॥
जल तरिवो सीखो तिहवार, तर्क वितर्क पढ्यो अनिवार।
ज्योतिष वैदिक गत सीख्यो, आगम अध्यातम पढ लियो ॥११५॥
हैं प्रसिद्ध विद्या पद जिते, पढ्यो कुमर पंडित पै तिते।
यौवन कर आरूढ्यो जबै, राजा चित्त हुल्हासो तबै ॥११६॥

४—श्रीपालको राजतिलक

महाबली श्रीपाल सुजान, रूपवन्त अर गुण ही निधान ।
अति प्रचण्ड कोटी भट सोय, जाके दर्शन अघ क्षय होय ॥११७॥
कब हू भूलन भाषै कूर, साहस धीर धर्मको मूर ।
ऐसी जुगति काल कछु गयो, राजतिलक श्रीपाल हि दियो ॥११८॥
भयो निशल्लको कहे बढाय, आप कालवश भयो सो राय ।
हाहाकार कियो संसार, वीरदवणि दुःख कियो अपार ॥११९॥
श्रीपाल राजा दुख लह्यो, हिरदै विचारि सोच कर रहो ।
तीन लोक देख्यो अवगाहि, यहि मारग सबहीको आहि ॥१२०॥
यह विचार अपने जिय धर्यो, मनको सोच दूर सब कर्यो ।
कुन्दप्रभा राखी समझाय, देख विचार रीति यह माय ॥१२१॥
जो माता अब कीजे सोग, तो सब हंसे देशके लोग ।
क्षत्रिय कुल जाको अवतार, श्रीपाल यों कहे पुकार ॥१२२॥
ताहि शोक हूजे नहीं जान, बहुत कहांलो करूं बखान ।
मोसे कछु होयगी जिती, माजी सेवा करसूं तिती ॥१२३॥
बात सुणत सुख ताको भयो, हिरदे शोक मातको गयो ।
करे राज श्रीपाल प्रचंड, लीयो सर्व राजनसे दण्ड ॥१२४॥
ताकी सेव सातसै वीर, जे बहु सहैं झूज्झकी पीर ।
ताकी कीर्त्ति भई अशेष, कीने वश तिसने सब देश ॥१२५॥
धर्म रूप राजा व्योहरे, परत्रिय परधन लोभ न करे ।
दुर्जन जीत सकल वश कीए, महादण्ड तिनपे से लीए ॥१२६॥
कोउ अवर न ता आगवे, एक छत्र प्रगट्यो चक्कवे ।
करते राज्य काल कछु गयो, पूर्व पाप उदय तब भयो ॥१२७॥
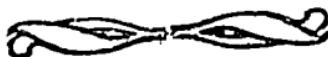
५–राजा श्रीपालको कुष्ट होना

कुष्ट व्याधि राजाको भई, धीरे धीरे बधती गई।
अंग सातसै अति है नेह, तिन हू कोढ व्यापियो देह ॥१२८॥
राध चले पंडे जो शरीर, तहां दुर्गंधित बहे समिर।
कोढ़ उदम्बर वेढो राय, नासा अंगुरी गरिगए पाय ॥१२९॥
रक्त पित्त जाको तन दीस, ढारै चमर रायके शीश।
झरे प्रस्वेद छत्र सो गहै, देह दाह भण्डारी रहे ॥१३०॥
श्याम दाघ जाके असमान, सो राजे हि खवावे पान।
मरदन कर ही जाहि नहीं कान, खजुआ करवावे अस्नान ॥१३१॥
रुधर फुवारे धरें अजेज, भूपतिकी सो बिछावें सेज।
कंठ गूमरा है कुतवार, सूरज वर्ण सूर असवार ॥१३२॥
जाको बहु गरगयो है शरीर, सो नर वैको आहि वजीर।
उर दुर्गंध मक्षिका जान, सो नरिंद्रको है परधान ॥१३३॥
काछ दाघ जाकै तन माहि, सो दलको सेनापति आहि।
बहै नाकव घिना न करैं, ते राजाके पानी भरैं ॥१३४॥
जिनके गात गए सब सार, ते पायक देखियें अपार।
जे सिर तेरु पावते गले, सोई निशान बजावें भले ॥१३५॥
जाकै रक्त बहे अति वास, सो नर वैको आहि खवास।
जातन खुजल पीर बहु करै, सो नृप आगे भोजन धरे ॥१३६॥
महारवाव मृदंग झनकार, जरदोनिया बजावै तार।
जाकै माखी लागैं दौर, बीन बजावें सो सिरमोर ॥१३७॥
गूरै खाखरे गावे गीत, पातरि नाचें करी विपरीत।
ऐसो तहां अखारा होय, राव काढ जाना सब कोय ॥१३८॥

जो सब काढ वर्ण कर कहूँ, बढे कथा कछु अन्त न लहूँ ।
यह सामग्री राज कराय, सगळी सभा जुहारे आय ॥१३९॥
कबहु न राजा आवे वार, कै अन्दरके सभा मझार ।
सेवक सह जहारे जिते, राजा देख विसूरे तिते ॥१४०॥
मनमें कहत सबै सत भाव, यह श्रीपाल महाबल राव ।
अरु यह धर्म दया परवीन, राज नीति पालै गुणलीन ॥१४१॥
ताको कहां कर्म यह भयो, कुष्ट रोग ताकै तन लयो ।
कर्म गति कछु कही न जाय, महा नीच नीचको राय ॥१४२॥
उत्तमको मध्यम गति करै, मध्यमको उत्तम पद धरै ।
नृपसेती तो कछु न कहाय, घर घर आपसमें पछिताय ॥१४३॥
महाकढ राजाके अंग, कोढे अंग सातसे संग ।
तहँ दुर्गन्ध बढी जो अपार, फैल गई सब नगर मझार ॥१४४॥
जबै बयार बडे नहीं घटै, तब ही नाक सबनकी फटै ।
बहुत बातको कहै बढाय, कोऊ नगर नहीं भोजन खाय ॥१४५॥
कोउ बीनती सकै न मांडि, बहुतक लोग गए घर छांडि ।
घर घर एक बुलावो फिरो, रैयत लोग नगरको घिरो ॥१४६॥

जो आवे सो कहे विचार, महाकुष्ट किम सकें सहार ।
कोऊ कहे भागो इसवार, जैसे राजा लहे नही सार ॥१४७॥
कोऊ कहे ऐसी न करेय, आयस मांगि राय पै लेय ।
वन ही भजैं छाड घर धाय, मर हैं दुख देखा नहीं जाय ॥१४८॥
आपसमें सब मतो कराहि, आवो वीरदमन पै जाहि ।
जो वह आयस दे हम जोग, सोई मान लेहु सब लोग ॥१४९॥
मोती रत्न थाल भर लए, सब मिल वीरदमन पै गए ।
आय भेट तिस आगे धरी, सब सिर नाय बीनती करी ॥१५०॥

महादुख सभीको सन्देहु, स्वामी हमको आयस देहु।
तेरे देश अन्त कहुं रहें, राजा सों किम निकसन कहें ॥१५१॥
जाके राज सुख हम लयो, दुख दालिद्र सबनको गयो।
जाके राज धर्मको वास, सबै करत हैं भोग विलास ॥१५२॥
जाके राज पापकी हान, जाके हृदय दयाकी बान।
जाकै राज्य शूल सब गए, हम धन परियन पूरे भए ॥१५३॥
जाके राज सुवश ह्वै वसैं, कब हू दुर्जन दुष्ट न कसैं।
जाके राज सबै जन सुखी, जीव रूप कोई नहीं दुखो ॥१५४॥
कुष्ट व्याधि अब ताके भयो, नासा पाय अंग गरि गयो।
अर जे अंग सातसे वीर, तिनहूंको गर गए शरीर ॥१५५॥
तिनका महा दुर्गन्धता होय, सब ही पुरमें फैली सोय।
दिन दो चार अन्न विन भए, कछू मूए कछू भज गए ॥१५६॥
जो ऐसी कहूं सुनिए कान, तो भोजन नहीं जावे खान।
हुई दुर्गंधित सकली मही, अब लों हम तुम सों नहीं कही ॥१५७॥
महाकष्ट सूं लेहुं वचाव, सब ही नगर भयो कहराव।
क्योंहू क्योंहू धीरक धरे, स्वामी हमसों रह्यो न परे ॥१५८॥

६–श्रीपालका वीरदमनको राज्य दे उद्यानको जाना।

चिंते वीरदमन तब राव, अब यह कीजे कौन उपाव।
जो घरमें श्रीपाल रहाय, तो मोतैं सब रैयत जाय ॥१५९॥
रैयत बिन शोभा नहीं रहे, रैयत बिन राजाको कहै।
बिना पंख है पंखी जिसो, रैयत बिन राजा है तिसो ॥१६०॥
बिना पान तरुवर ज्यों ताहि, रैयत बिन त्यों राजा आहि।
बिन पाणी ज्यों होय तलाव, रैयत बिन है तैसो राव ॥१६१॥
जैसो है उडुगण बिन चन्द, रैयत बिन है तैसे नरिंद।
बिन रूखनि जैसो उद्यान, बिना रैयत भूपति त्यों जान ॥१६२॥
जैसे सघन घटा बिन मेह, रैयत बिन त्यों राजा एह।
बिन हथयार ज्यों सुभट अनूप, तैसे रैयत बिन है भूप ॥१६३॥
बारंबार सो विचारे राव, अब तो कीजे कहा उपाव।
तब ही सब रैयत यह रहे, श्रीपाल बन मारग गहे ॥१६४॥
रैयत बसे हमरी बाह, रैयत बसे हमारी छाह।
ऐसे कहें सयाने लोय, राजा प्रजा बराबर दोय ॥१६५॥
वीरदमन यह चित्तमें साज, रैयत राखे ऊबरे राज।
तीन पानको बीड़ो लियो, आपण श्रीपालको दियो ॥१६६॥

❀　❀　❀

बन उद्यानन साहस धीर, आज अशुभ भुंजो वरवीर।
जौलौं कुष्ट व्याधि तुम अंग, तौलौं गैल सातसे संग ॥१६७॥
जोलौं उदे कंवर तो पाप, तोलौं नहि कीजे संताप।
जोलौं शुभ प्रगटे नहीं आय, तोलौं घरमति आवो राय ॥१६८॥
होइ पुण्य प्रगटे तुम तनो, आइ राज कीजे आपनो।

जाको राज भार तुम देहु, सोई करे धरे तुम नेहु ॥१६९॥
यह सुन श्रीपाल उच्चरो, कछु कुभाव मनमें नहीं धरो।
सुनहु तात भाखे श्रीपार, मेरे भी है यही विचार ॥१७०॥
मेरी बढी दुर्गन्धाघणी, होत दुखी नगरी मो तणी।
विनती कर न सके कोइ आय। मेरे चित यह बीती राय ॥१७१॥
मेरो भी दुःख व्यापो हियो, मैं हूं बन ही को मन कियो।
भली हुई तुम निकसन कहो, याको सुख मैं बहुत ही लहो ॥१७२॥
तुम सब लेहु राज्यको भार, परजाको कीजो प्रतिपार।
न्याय नीति कर कीजो सुखी, सुपने कोई न होवे दुःखो ॥१७३॥

सोरठा।

जो उबरोंगे प्रान, कुष्ट रोग जब नाशिये।
तब हो इन्द्र समान, राज्य करुंगो आय के ॥ १७४ ॥

दोहा।

जब लग पूर्व पाप मो, उदय फिरेगो साथ।
तब लग अपनो भुंजहुं, राज तुम्हारे हाथ ॥ १७५ ॥

चौपाई।

सबै राज मैं दीनो तोहि, मनमें तात राखियो मोहि।
कुन्दप्रभाको देय अभार, निकस्यो तब श्रीपाल कुमार ॥१७६॥
ताके बली सातसै अङ्ग, कोढी सबें लागियो सङ्ग।
बुरे भेष दीसे सब जना, ओढें कम्बल अरु वेदना ॥१७७॥
राज विभूति जैसी वरनई, सामग्री सब गोहनि भई।
जब वे गांव बाहरे भए। लोचन वीरदमन भर लए ॥१७८॥
रोवें सब नगरीके लोग, विधनातें कित कियो वियोग।
घर घर शोक सबैं जन धरें, अति विलखों बहु करुणा करें ॥१७९॥
घर घर करें अमंगलचार, भूले सब ही सुख नर नार।

घर घर सून सान होगई, पुरमें रात धौंवते भई ॥१८०॥
वे चलि दूर पहुँचे जबैं, कुन्दप्रभा सुध पाई तबैं ।
तिस मनमें दुख कियो अशेष, आजि मूवो अरिदमन नरेश ॥१८१॥
गहि भरि नैनन मूंकी धाह, अबहूं निज घर भई अनाह ।
विधना ये बूझी नहीं तोहि, पूत विछाह कीयो कित मोह ॥१८२॥

ॐ　ॐ　ॐ

वीरदमन राखी समझाय, कछु कर्मगति कही न जाय ।
शुभ अर अशुभ लिखा जो लीलार, कोहै ताहि मिटावन हार ॥१८३॥
भावी होनहार सो भई, सब सामग्री देखत गई ।
कुन्दप्रभा मन गाढो कियो, धर्मध्यान पर चित राखियो ॥१८४॥
श्रीपाल पहुंचो उद्यान, रहैं सबें भट देवल थान ।
राज विभूति सबै तासंग, कोढारूढ सबनको अंग ॥१८५॥
कुष्टकुष्ट दीखे सब ओर, रक्त बहे सब हीकी खोर ।
देखो पाप करम परभाव, कुष्ट भयो कोटी भटराव ॥१८६॥
पाप करम अतही बलवान, पाप न माने काहू आन ।
पाप उदय आवे जिस घरी, छाडत नाहीं चक्री हरी ॥१८७॥
तातें पाप करो मति कोय, पाप महा दुखदाई होय ।
पहली संधि पूरण भई, भाषा मूल अर्थ वरणई ॥१८८॥

छन्द त्रिभङ्गी ।

श्रीपालचरित्रे महापुराणे भव्य संग मंगल करणम् ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण चौपई बंधपरिमल्लकृतम् ।
सातसै अंगं ताके संगं श्रीपाल उद्यान भ्रमम् ॥ १८९ ॥

इति प्रथमसन्धिः ।

७-उज्जैनीके राजा पहुपालकी पुत्री मैनासुन्दरीका वर्णन।

चौपाई।

श्रीपाल उद्यानहि रहे, कुष्ट व्याधि व्यापै दुख सहे।
यह तो कथा रही इस ठौर, आगे सुनो कहूं जो और ॥१९०।
राज पुत्री मैनासुन्दरी, ताकी कथा सुनो रस भरी।
देश मालवो सो सुखधाम, मध्यलोकमें प्रगट्यो नाम ॥१९१॥
दुख नहीं दीठे वासर रैन, सुवस बसे जहां नगर उज्जैन।
नव कोसनकी बसे चौराय, बारा कोस बसे लम्बाय ॥१९२॥
आनिवास महाजन जहां, चौथा काल प्रवर्ते तहां।
कनक रेण मणि मण्डप जरी, अति रमणीक मनोहर खरी ॥१९३॥
राज करे पहुपाल नरेश, ताके परिग्रह बहुत अशेष।
योधा बहुत सेवता रहैं, रण संग्राम बलातें वहैं ॥१९४॥
एक छत्र सो राज्य कराय। ताकी कीरति कही न जाय।
ज्यों माता सुत उपरि भाव, तैसे परजा पाले राव ॥१९५॥
ताकें कामनां बहुतक गेह, अति गुणवन्त रूपकी रेह।
जो सब नाम वर्णिके कहूं, कहत कथा कछु अन्त न लहूं ॥१९६॥
पाट प्रधान निपुण सुन्दरी, माना आ रम्भा अवतरी।
अति स्वरूप दूं उपमा काहि, कामदेवके ज्यों रति आहि ॥१९७॥
जैसे शंकर कै पारवती, अतिस्वरूप सीतासम सती।
ताकै गर्भ सुता द्वै भई, रूपवती अति पंडित कही ॥१९८॥
दोऊ अतिगुणज्ञ अवरी, अतिलावण्य विराजे खरी।
प्रथम कवरि सुरसुन्दरि ताहि, बहुत रूप शोभत है जाहि ॥१९९॥

पर शिवधर्म वसे जा चित्त, कुगुरु कुदेव सुध्यावे नित्त ।
कछु विवेक जो ताह नही होय, वछे संसारा सुख सोय ॥२००॥

लघु कन्या मैनासुन्दरी, रूपवती अर सब गुणभरी ।
अंग अंगकी शोभा जिसी, बढ़ै कथा जो वरणो तिसी ॥२०१॥
अर अति जैनधर्म परवीन, शीलवन्त समकित कर लीन ।
निर्मल जाके हिरदै जोई, कपट वचन बोलै नहीं कोई ॥२०२॥
बहुत विवेक चित्त ता रहै, मिथ्या वचन भूलि नही कहै ।
सब सखियनमें शोभै खरी, ज्यों सरितामें है सुरसरी ॥२०३॥
मधुर वचन बोलै विहसाय, सब कुटुम्ब रंजै सुख पाय ।
धाइ धाइ त्रिय अंको भरै, रहसि खिलाय लगावै गरै ॥२०४॥
और बहुतको करै वखाण, तिहिको उपज्यो बहुत सयाण ।
आपण मंत्र विचारै राय, अर तिन्ह लीन्ही प्रिया बुलाय ॥२०५॥
जुगल रीवाणो दीसै यह, देखत नैनन उपजै नेह ।
मेरे जी यह कहूँ विचार, इन्हें पढाऊँ सुण वर नार ॥२०६॥
सुणो राय इन भावे जहां, दोउ कुमरी पढावो तहां ।
तिन्है विहसि करि पूछै राव, पुत्री कहो आपणो भाव ॥२०७॥
जो गुर भावै तुम्हैं सुजान, तापैं विद्या पढा पुराण ।
सुरसुन्दरी कहै सुणहो तात, सांची कहूँ अपनी वात ॥२०८॥
दिन दिन बुद्धि होई गुण चढूँ, अबहूँ निज शिव गुरुपै पढूँ ।
राजा भली भली वरणई, कवरि उठाई उछँगा लई ॥२०९॥
शिवगुरु तब बालियो बुलाई, नाम कुणसको कहै बढाई ।
बोल्यो निकट कहै तब राय, विद्या सुरसुन्दरी ही पढाय ॥२१०॥

जितनी होय कला अर ज्ञान, सब सिखायदे अर्थ पुराण ।
भली भली पांडे उच्चरी, मोपरि कृपा गुसांई करी ॥२११॥
जो मेपें गुण होसी राय, याहि पढाऊँ सब निकुताय ।
सुणी बात तब विगसो राव, कछुक तांको कीयो पसाव ॥२१२॥
तब तिन भुपई दई असीस, जुग जुग जीवो कोडि वरीस ।
महिमण्डलमें प्रगटा आन, राज तेज वृद्धो दिन मान ॥२१३॥

सोरठा ।

जोलौं शशि अर भान, जल गिर मेरु सुथिर रहैं ।
तलौं इन्द्र समान, मंगल होउ नरेश घर ॥२१४॥

चौपाई ।

विप्र गयो घर कुवरि लिवाय, लागो ताहि पढावण जाय ।
मैनासुन्दरि सों नृप कहे, पुत्री कहा तोहि मन रहे ॥२१५॥
सुणों तात हूं कहूं सुभाय, पढहों जिन चैत्यालय जाय ।
दंपति सुख अति भयो अभंग, पुत्री लई उठाय उछंग ॥२१६॥
राणी राव और जन भये, पुत्री ले देवालय गये ।
पूजा अष्ट प्रकारी ठई, जैसी परम गुरु वरणई ॥२१७॥
जल गंधाक्षत पुष्प अनूप, नेवज दीप महा गुरु धूप ।
नाना विधि फल धरे बनाय, अर्घ दियो मन वचकर काय ॥२१८॥
फुनि तिह पीछे पेखा मुनिन्द, जय जय तब उच्चरे नरिन्द ।
धर्म वृद्धि दियो मुनिराज, भव समुद्रसो तारत जिहाज ॥२१९॥
ध्यावें आतम गुण जु अखंड, तीन गुप्त पालें गुणमण्ड ।
भव्य कुमद परि फुल्लण चन्द, दरसत जाहि बढ़े आनन्द ॥२२०॥
मिथ्या तिमिर विनाशन भान, जिन निज कै छंड्यो अभिमान ।
शत्रु मित्र जाके इकसार, मनके सबहि तजे विकार ॥२२१॥

बाईस परिषह सहण समत्थ, केहरि दलन पंचमृग मत्थ ।
तीन परदक्षिण दई समीप, नमस्कार तब कियो महीप ॥२२२॥
हरषवंत मन मांहि अपार, बंदे चरण कमल नरनार ।
दंपती पुनि मैनासुन्दरी, बैठे तहां शुद्ध मन करी ॥२२३॥
जपै राय हरष अति गात, स्वामी सुनों कहुं इक बात ।
लघु पुत्री मनासुन्दरी; अपने जी यह इच्छा करी ॥२२४॥
पुत्री कहै जोर दोउ हाथ, विद्या दान देहु जगनाथ ।
नरपति कह्यां सुनो मुनि जाम, दया करी ता ऊपरि ताम ॥२२५॥

अर्जिका एक शीलकी खान, दया धर्म जिह लियो मान ।
मन वच काय शुद्ध ता चित्त, जानै एक शत्रु अर मित्त ॥२२६॥
रत्नत्रय व्रत पालन आहि, मुनिवर पुत्री समीपी ताहि ।
राणी राव हर्ष अति भए, नमस्कार कर तब घर गए ॥२२७॥
मैनासुन्दरीके मन चाव, आर्जिको ता ऊपर भाव ।
प्रथम पढ़ायो तिह ओंकार, दुःख हरण त्रिभुवनमें सार ॥२२८॥
पढ़ायें बारा वर्ण विशेष, जासें उपजे बुद्धि अशेष ।
पढ़ लीनो नीके कर चाहिं, लघु दीर्घ जे अक्षर आहि ॥२२९॥
जान लियो है चिनव चित, पढिया चरित पुराण पवित्त ।
गुण अरु अगुण निरमई जान, काव्य अनेक सु कहैं बखान ॥२३०॥
ज्योतिष पढ्या इसो परवान, आगम अर अध्यातम जान ।
सीखो नृत्य संगीत पुराण, नाटक षाटक कहे बखाण ॥२३१॥
तर्क छन्द पुत्री पढ़ लियो, छह दर्शन पुत्री उर दियो ।
भाषा सोय अठारा पढ़ी, विद्या कर दिन ही दिन चढी । २३२॥

कला निधान विचक्षण भई, फुन मुनिवर ही पढावण लई ।
चार ध्यान अणुव्रत जो सब, सोला कारण भावना सब ॥२३३॥
रत्नत्रय विधि गुण ही निधान, दश लक्षण जो धर्म प्रधान ।
जो कछु द्वादशांगमें कहा, सो विधा पढ़ सुन्दरि लही ॥२३४॥

दोहा ।

मुनिवर पै सब गुण पढ़ो, कियो कुवरि आनन्द ।
मन वच काय विशुद्ध है, जानो पाप निकन्द ॥२३५॥

चौपाई ।

मनमें पुत्री कियो आनन्द, जाना निश्चय पाप निकन्द ।
श्रीजिन पूजा कर मन लाय, मुनिवरके तब बन्दे पाय ॥२३६॥
मैनासुन्दरि पढ़ घर गई, निज जननी पर पहुचत भई ।
प्रथम पुत्रि सुर सुन्दरी जेह, पढ़ी पुराण बहुत धर नेह ॥२३७॥
कोककला नाटक गुण जिते, सामुद्रिक व्याकरण सतिते ।
पढ़ गुण महा विचक्षण भई, तब पांडे सो गहण लई ॥२३८॥
राजा पास सो पहुचो जाय, पुत्री देख राज विहसाय ।
तब विप्र बोलो हो देव, मैं तुम बहुत करी है सेव ॥२३९॥
सुन राय अति हर्षित भयो, बहुत दान पांडेको दयो ।
दे असीस शिवगुरु घर गय, पुत्री सभी देख सुख भयो ॥२४०॥
जे जे बात पयासे कोई, ते ते पण भाषें कहि सोई ।
चपल चित्त यौवन श्री लही, राजा पास बात तिन कही ॥२४१॥
अधे सिंहासन आइ बईठ, चहुं दिस जावे चञ्चल दीठ ।
राजा कही समस्या तेण, लहिए कुमरि तो कहा पुनेण ॥२४२॥

पुन्नुपाय–सोरठा ।

पुण्यहि लहिए येह, विद्या यौवन रूप धन ।
वरपरिणयसो नेह, मन वंछित सुख पाईए ॥२४३॥

चौपाई ।

तब नृप गह्यो महा मुह चाहि, नीचे कर मुख चाख्यो ताहि ।
मांग पुत्रि वर जो मन बसे, देखत जाहि चित्त उल्हसे ॥२४४॥
सुनहु तात हूं भाषों तिसी, मेरे मनमें वीतत जिसी ।
कौशांवीपुरको नृप जान, हय गय रथ बहु सुभट बखान ॥२४५॥
ता नन्दन हरिवाहण वीर, ताहि रूपको कहे सुधीर ।
नीको वर भायो मो सोय, सांची बात कहूं हिय जाय ॥२४६॥
सुन कर राय विचारयो हिए, वाही योग्य बने यह दिए ।
बोलो विप्र राय सो भने, शुभ दिन योग महूरत गिने ॥२४७॥
ताको विधि सो कियो विवाह, सब ही जन मन भयो उछाह ।
उन हूं सुख मन भयो अनन्त, कौशांवीपुर गयो तुरन्त ॥२४८॥
मैनासुन्दरि पहुंची तहां, आदीश्वरकी प्रतिमा जहां ।
पूजा करी शुद्ध मन कियो, भर बेला गन्धोदक लियो ॥२४९॥
कछू न चित्त विचारी और, गई जहां राजा जिस ठौर ।
आव आव राजा उच्चरो, गन्धोदक ले आगे धरो ॥२५०॥

कहे राव वह पुत्रि विचार, यह कह कहां कहे सो कुवार ।
मैनासुन्दरी उचरे बात, गन्धोदक जिनवरको तात ॥२५१॥
होइ दुर्गंध देह जा दगे, सुन्दर दिव्य होय जा लगे ।
नयन निरख निरखे प्यार, नेक लगे देखे संसार ॥२५२॥
नेक लगे अरिकम निकन्द, जाकी इच्छा करत है इन्द ।
जन्म भयो तीर्थंकर जबे, सायर ते सुर लाए तबै ॥२५३॥
कलश हाथ अठोतर भरे, लाय जिनेश्वरके सिर ढरे ।
सुर अर असुर इन्द हर्षियो, बारम्बार अंग परसियो ॥२५४॥

तात सुनहु गन्धोदक सोय, कर वन्दना परमगति होय।
तब भूपतिने वन्दन करी, धर्मलीन पुत्री है खरी ॥२५५॥
राजा हर्षित हूवो सुजाम, अर्ध सिंहासन बैठी ताम।
सीस चूम्ब पूछे भर नेह, पुत्री कहे परीक्षा येह ॥२५६॥
काजे पुण्य चित्त धाइये, ताते कहा लब्ध पाइये।
सुन सुन तात पयांसु ताह, जं नीके कर पूछो मोह ॥२५७॥

पुत्र्युवाच-दोहा।

जिनशासन निर्ग्रंथ गुरु, व्रत है निर्मल येह।
मुक्ति धाम शिव सुख करण, पुण्य हो लहिए येह ॥२५८॥

चौपाई।

सुर नरिन्द भए लोचन लीन, कही बात पुत्री परवीन।
पुनि तिन भाष्यो मन अविवेक, मलिन वचन तिन कह्यो एक ॥२५९॥

राजोवाच-दोहा।

अति सुन्दर गुणवन्त नर, ज्यों कोऊ भावे ताहि।
आज सुउत्तर समझ कर, दीजे पुत्री मोहि ॥२६०॥

चौपाई।

राजन माहि जो कोई होय, मन भायो वर मांगो सोय।
ताहि समर्प्यो जाग जा आहि, सा वो सेन देय बहु ताहि ॥२६१॥
तात वचन जब सुनियो कान, तब चित्त माहि गई अवमान।
मनमें भयो बहुत अपभाव, मानो भयो वज्रका घाव ॥२६२॥
ऐसो बोल शत्रु नहीं कहे, चहुं दिश जोवे चुप कर रहे।
बार बार सो लेइ उसास, बल न सके रायके त्रास ॥२६३॥
राय वचन मन रह्यो दिढाइ, तापै कछु कह्यो नहीं जाय।
मनमें दुष्ट दुष्ट उच्चरो, कहा पाप इन जियमें धरो ॥२६४॥

अति अविवेक लीन सो जान, कुछ मारग तह हत्यो प्रमान ।
अलियो बंल चयो मति हीन, मूरख कछु लाज नहीं कीन ॥२६५॥
बहुत बात कहा कहूं बढाव, याको है सब नीच स्वभाव ।
जाके नहीं कुल मारग देव, नहीं जानो दशलक्षण भेव ॥२६६॥
जाके गुरु निर्ग्रंथ न होय, ताहि विवेक कहासे होय ।
यह पुत्री मनमें चिंतई, नीचा दृष्ट नहीं ऊँचो भई ॥२६७॥
रही मूरछ मैनासुन्दरी, अति विचित्र सबही गुण भरी ।
तातहि उत्तर कछुयन दियो, पा सुन बात तें कम्पे ह्रियो ॥२६८॥
आवै नेक न बात विचारी, संशय ही में परि कुमारी ।
धरती खोदे दुचिति भई, पुणि नरेशने उससे कही ॥२६९॥
पुति पुति कहो जो उत्तर भासि, कहां चित्त चिन्तइ परकासि ।
जैसे सुरसुन्दरि वांछियो, मांग्यो ताहि व्याह कर दियो ॥२७०॥
त्यों तू काहू राज हि जान, परण कुवर मनको सुख मान ।
बारंबार तात यों भणे, पुत्रि धिक्कारे अवगणे ॥२७१॥

卐 卐 卐

चिन्तै शुद्ध अजानो राव, अति निकृष्ट मूरख अधिकाव ।
जिस निरंकुश होय गयन्द, करे आप भयो मतिमन्द ॥२७२॥
जैसे बालक होव अयाण, ज्यों ज्यों बाले कछुयक जाण ।
जैसे अन्ध बहुत दुख दहे, चहुँ दिश जोवे पंथ न लहे ॥२७३॥
त्यों नृप लाज दई छिटकाय, जो रुचतो सो कहत बनाय ।
सो गुरु सुन तो वच यह जबें, होनो सन्तोषित वह तबें ॥२७४॥
यह सुन्दरि चिन्तई सुजान, शीलधुरन्धर गुणहि निधान ।
जंपै तात सुनो करि नेह, अजुगती बात कही तुम एह ॥२७५॥
जिन सूत्रनमें मुनिवर भणि, सुनहु तात सबही अवगणी ।
वर सुन्दरि जो होय कुलीन, लोकलाज नहीं तजै प्रवीन ॥२७६॥

अपयश अधम आहि जो बात, सोई तुम भाखत हो तात।
लोक विरुद्ध आहि यह कर्म, मन वांछित कर रहै न धर्म ॥२७७॥
मन भायो जो करे विवाह, लोग सुने हुवे हासि उछाह।
कछु रहे नहीं कुलकी रीति, सब काई भाषे महा अनीति ॥२७८॥
अर जीत ही तित होय विचार, कोउ न धरे शीलको भार।
ता अपयश सब कोउ करे, आपन इच्छो वर जो करे ॥२७९॥
और कहानी सुन हो राय, तासों कहों कथा समुझाय।
श्री आदीश्वर प्रथम जिनन्द, जाकै वारे पाप निकन्द ॥२८०॥
प्रगट पुराणनमें वरणए, कच्छ सुकच्छ राज द्वै भए।
तिनके भई सुभग द्वै सुता, नन्द सुनन्द नाम गुणयुता ॥२८१॥
जोबनवन्त हुई ते बाल, रूपवन्त अर गुणह विशाल।
तिनहु यूँ नहीं वंछियो हिए, रही सदा कुल रीति जु लिए ॥२८२॥
तात बंधु जाको जो दई, आदीश्वर तिनको परणई।
ते भई लीन जिनेश्वर पाय, बहुत बातकों कहे बढाय ॥२८३॥
जो मारग प्रगट्यो सुन बात, मो पै छांड्यो आय न तात।
पुन ब्राह्मी सुन्दरी द्वै पुति, जगत भई विख्यात गुणजुति ॥२८४॥
माता पिता नहीं दीनी कास, तिन सब छाड्यो भोगविलास।
मनमें लाज भई अवगाह, दोहु न छांड्यो छिनमें व्याह ॥२८५॥

❀ ❀ ❀

भई अर्जिका ते शुभ चित्त, जाने एक शत्रु अर हित।
भेदाभेद कछु नहीं जान, जिनवर भाषित करे वखान ॥२८६॥
लोक विरुद्ध व्याहकी लाज, सब सुख छाड दियो शुभ काज।
अर सुन उत्तर कहुं विचार, यों दैठ्यो निज नयन गिहार ॥२८७॥

तुम हूं देखी सुर सुन्दरी, हीनबुद्धि तिन मनमें धरी।
ताहि दोष नहीं दीजे राय, इह कारण सब कुगुरु पसाय ॥२८८॥
जैसे जीव विचक्षण जान, है त्रैलोक्य माहि परधान।
खोटा संग कर्मके रहे, ताते जीव बहुत दुःख सहे ॥२८९॥
छिनमें नीच कहावे सोय, छिनहीमें उत्तम पद होय।
छिनहीमें दुख पावे घणो, छिनहीमें सुख है तुम तणो ॥२९०॥
छिनहीमें सु कहावें राय, छिनहीमें सुरंक हो जाय।
छिनहीमें शंका परहरे, छिनमें मूढ महा भय करे ॥२९१॥
छिनहीमें सो दुर्गति जाय, छिनमें स्वर्ग पहुंचे धाय।
जितना दुःख पावे जड येह, तितनो कहां कहूं धर नेह ॥२९२॥
यह कछु जीवै खोर न जान, कर्म कुसंगतिको फल मान।
सुर सुन्दरी कुमती त्यों लही, कुगुरु पढ़ाई तैसी कही ॥२९३॥
अरु सुन राय वचन दे कान, जातें सुयश होय परवान।
माय बाप जाए गुण सार, कुल उत्तम जाको अवतार ॥२९४॥
यौवनवंती देखे तात, छिन छिन मन चितवै सुबात।
मन इच्छयो वर मांगै जोय; शीलवंती नहि गिणिये सोय ॥२९५॥
बाप विचारै जाको चित, पुत्रीको जब देखे नित्त।
निर्भय होय यह दीजे काष, को वर योग्य सुकुली पयास ॥२९६॥
यह चितै परिजन जे महंत, सकल बैठ कीजे शुभमन्त।
उत्तम कुल सोधिए परवान, विद्यावन्त अर आप समान ॥२९७॥
सज्जन मिल सब मंगल करें, हो विवाह दोउ कुल उच्चरें।
कन्या दान भार वर लेइ, सो वो तूठि बहुत करि देइ ॥२९८॥
विनती करें जोड़ दोउ हाथ, सब कुटुम्ब सौंपे जा साथ।
भावें अन्ध होउ मतिहीन, भावें होउ कला परवीन ॥२९९॥

भावैं कूब होउ तन बुरो, भावैं गूंगा होउ पांगरो।
भावैं रोगी वाय पितपीर, भावैं कुष्टी होउ शरीर ॥३००॥
भावैं बालक होउ अयाण, भावैं होउ सर्व गुणठाण।
भावैं वृद्ध होउ विकरार, भावैं जोगी होउ गंवार ॥३०१॥

सब परियण सौप जा बांह, चलै कुलीन तासकी छांह।
यह कुलधर्म सुनो चितलाय, अर विभ्रम सब दो छिटकाय ॥३०२॥
चलिहों कुल मारग सुन तात, होवै है कर्म लिखी जो बात।
कर्म लिखे ते हूजे राय, कर्म ही तै रंक व्है जाय ॥३०३॥
कर्मही तै यश होय शशंक, कर्म ही तै नर होय कलंक।
होय कर्म तैं आछी भाम, कर्म ही तै पावै शुभ धाम ॥३०४॥
कर्मही तै त्रिय होय सुहाग, कर्म ही तै प्रगटे शुभ भाग।
अरु अति सुख कर्म तैं होय, दुखी दुहागण कर्मसे जोय ॥३०५॥
कर्मही तै जु होय तन भंग, कर्मही तै है शोभित अंग।
यह परपंच कर्मको सर्व, कोउ और करो मति गर्व ॥३०६॥
विधना जो कुछ लिख्यो लिलार, शुभ अर अशुभ अंक शुभ सार।
जैसे निमित जास को होय, ताहि मिटाय सके नहीं कोय ॥३०७॥
अमर खचर अरु गण गन्धर्व, भासुर सुरगुरु रवि शशि सर्व।
जो ये सब मिल करैं सब सहाय, कर्म खरे नहि मिटरे काय ॥३०८॥
पूर्वसे पछिम रवि उवै, नर फुणिमेरु चूलिको छुवै।
सायर हीमें धूल उडाय, भावी तोउ न मेटो जाय ॥३०९॥
पवनें महि मण्डल पर हरैं, प्राणी काल हुवा ऊवरैं।
वासर थे जु निशा फुन होय, भावी लिख्यो न मेटै कोय ॥३१०॥

ऐसे वचन सुने जब राव, मन कांपन्त भयो तब गात्र ।
सुन सुन पुत्री अजा अयाण, कहां कर्म तेरो दिन मान ॥ २११ ॥
पंचामृत शाल्योदन होय, छह रस भोजन मेरे होय ।
तेसुख पुत्री भुकन लेय, तूतो कहै कर्म मो देय ॥ २१२ ॥
मोकू आहि बहुत सन्देह, ते गुरुने पढायो तेह ।
जब नृप निंदा गुरुकी करी, तब बोली मैनासुन्दरी ॥ २१३ ॥
सुन अविवेकी तात विचार, तोसों कहुं कथा विस्तार ।
मैं शुभ कर्म कमायो सार, तेरे घर पायो अवतार ॥ २१४ ॥
तातैं भोजन भुक्तो सुख, नैकन पाऊं कहुं न दुःख ।
हो तो अशुभ कियो न काम, नीच घरां तो लेती जाम ॥ २१५ ॥
तहां दुख लहती अधिकाय, सुख तू तहां न देतो आय ।
कहां अयाण होहु नर नाथ, शुभ अर अशुभ कर्मके हाथ ॥ २१६ ॥
पुत्री वचन सुने जब कान, राजा रिस उठी तह थान ।
मनमें धरत दुष्टमति गयो, मूक रह्यो उत्तर नहीं दियो ॥ २१७ ॥
कवि परिमल्ल कहै सतभाव, मनमें ऐसा चितयो राव ।
अबहूं याको परखों जिसो, देखों कर्म याहि फल किसो ॥ २१८ ॥
याको कियो बहुत दिढाव, देखों ताको कम सहाव ।
जिय मैं ऐसी पिशुनता धरी, मूह कहै धन मैनासुन्दरी ॥ २१९ ॥
पुत्री उठ चलियो निज गेह, करो पारणो खीनी देह ।
तात वचन सुन उठी तुरन्त, परफल्लित मनमें विहसन्त ॥ २२० ॥
पंथ मांह सो निकसी जाय, पुरजन देखि रहे निकुताय ।
सोखे रहे मुहा मुह चाहि, यह सो कुमरि कौणकी आहि ॥ २२१ ॥
काहू तो ऐसी वरणइ, सुरकन्या सुरगां ते चइ ।
कोऊ कहै यह विचारो होय, यह तो नागकुमारी होय ॥ २२२ ॥

काहू काहू ऐसी भणी, यह पुत्री विद्याधर तणी ।
काहू तो यह उपमा दिया, काहू आहि जनककी धिया ॥३२३॥
कोऊ कहे यह देवी आहि, पटतर देख सके को ताहि ।
षोडश वर्ष तणी परवान, कोऊ रूप न ताहि समान ॥३२४॥

श्रृंगार वर्णन ।

तिहको मुख सोहे मकरन्द, मानों ऊग्यो पूणवो चन्द ।
लोचन अरुण सुभग अति वर्ण, ज्यों चकित मृगशाव तरण ॥३२५॥
करे कटाक्ष दिष्टि जो बाण, भृकुटि कुटिल मनोजकमाण ।
माथे मांग विराजे चारु, अति कोमल अति श्याम सु टारु ॥३२६॥
श्रवण कुण्डल राजत द्वैवृन्द, मानों बात करें दोय चन्द ।
नीके शोभित अधर अभंग, विद्रुम सुप कविराजहि रंग ॥३२७॥
ऊँची नाक इसी उनहार, मानों कंचन धरी सवार ।
दसनपंति दीसे चमकन्ति, कुदलि दाडिमकी शोभन्ति ॥३२८॥
छोटी ग्रीव मुतीकी मार, ताकी जोति जगें अविकार ।
मृगपति लङ्क मध्य अतिक्षीण, त्रिवली तरंग शोभाकर लीण ॥३२९॥
कोमल कमल पाणि तावाल, बांह जुगल शोभियो विशाल ।
चम्पक वरण पहुप तन जाणि, अति कोमलको कहे वखाण ॥३३०॥
अति सुगन्ध है तास शरीर, आवे लपटें बहुत समीर ।
हंस चाल सो पहुँची तहां, निज घर जननी जोवत जहां ॥३३१॥
दिव्य अम्बर पहरे मानो शची, तव जिनवरकी पूजा रची ।
अष्टप्रकारी जिय धर नेह, मन वच काय छाड़ सन्देह ॥३३२॥
द्वारापेखण तिन सब कियो, मुनि कोउ न तहां देखियो ।
पुण्य हमारो वोछो आहि, मुनि कोउ तह पहुँचो नाहि ॥३३३॥

भावना भाई पूजी आस, फुनि भोजनको गई अवास ।
शाल्योदन छह रस शुभ चित्त, रस तज भोजन परणो पवित्त ॥३३४॥
अति सुन्दर मुख सोध जु लई, तब रुचि सो उठ ठाड़ी भई ।
ऐसे सुख भुँजे वहु काल, शीलवन्त अर गुण हि विशाल ॥३३५॥
गाहा दोहा छन्द विवेक, परस्पर भाषें सखी अनेक ।
मन वांछित सुख लहै प्रवीन, करे भक्ति मुनिवर पद लीन ॥३३६॥
कवहू न बात पापकी कहे, निश दिन दया धर्ममें रहे ।
कवहू झूठ बात नहीं कहे, सांचा होय सु हिरदे चहे ॥३३७॥
जाके हिरदे दयाको वास, चित अपनेमें धरही हुलास ।
दूजी सन्धी यह वरणई, मूल अनुसार कर दई ॥३३८॥

दोहा ।

सुख जननी परियण सकल, श्री जिनवर सुमिरन्त ।
येसे वीते वहुत दिन, निज गृहमें निवसन्त ॥३३९॥

छन्द त्रिभङ्गी ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगल करणम् ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपई बंधपरिमलकृतम् ।
मैनासुन्दरी प्रति उत्तर दीनो तात निरधारो नाम मयं ॥३४०॥

इति दूसरी सन्धीः सम्पूर्णम् ।

८—मैनासुन्दरीका श्रीपालसे विवाह।

चौपाई।

राजाके मन उपज्यो कोय, जंपै होनहार सो होय।
एक दिना सब सेन पलाण, हय गय रथको करे वखाण ॥३४१॥

नगर निकासह चालो जाय, मन्त्री लीने संग लगाय।
यह भेद जाने नहिं काय, हीनो वर चिंतत हैं राय ॥३४२॥

यह तो कथा यहां ही रही, कवि परिमल्ल प्रगट कर कही।
बहुरो कथा गई तिह थान, श्रीपाल जह बन उद्यान ॥३४३॥

नासा पाय गए गरि हाथ, ऐसे अंग सातसै साथ।
भ्रमत भ्रमत सो पहुंचो तहां, राजा बन विचरत है जहां ॥३४४॥

देख राव उठ ठाडो भयो, अति हर्षित हो भेटण लयो।
देखित सब मंत्रिन भई लाज, यह कोढी भेटो किह काज ॥
तब तिह ठायो बोलो राव, मन्त्री सुनो कहूं सत भाव ॥३४५॥

❧ ❧ ❧

या पर है मेरो अति चित्त, यह मेरो है प्रीतम मित्त।
मन्त्री कहैं सुनो हो राव, गल्यो शरीर हाथ अर पाव ॥३४६॥

रही दुर्गंधा जित तित पूर, याहि देखके भजिये दूर।
तासो मिले कहा धर नेह, याको आह बहुत सन्देह ॥३४७॥

यह सुन तहां पहुंचो राव, पुनि पुनि पुनि अवलोकै धर भाव।
पूछे तहां पहुपाल नरेश, कह तू आहि बहुत अलवेश ॥३४८॥

हांडत मही डोलै तन भंग, बहुत परिग्रह तुमरे संग।
क्यों यह नगर कियो पैसार, सांचो कहो आप व्योहार ॥३४९॥

तब श्रीपाल कियो परणाम, हम आये तेरो सुन नाम ।
दयावन्त सब कोउ कहै, अति उदारता तो जिय रहै ॥३५०॥

卐　卐　卐

तातें हम आये सुन राय, बहुत कहा हम कहें बनाय ।
यह सुन नृप फूल्यो सब गात, सुन कुष्टी नृप मेरी बात ॥३५१॥
मांग मांग मैं तूठौं अबै, बहुरो त्याग लेइगो कबै ।
विलमन कीजे अवसर येह, मनको छोड़ देउ सन्देह ॥३५२॥
जोई तू मांगेगो दान, सोई देउं राखूं मान ।
तब तिन जंप्यो पुत्री देहु, राजन् प्रगट यहु यश लेह ॥३५३॥
यह सुन राव कोप अति भयो, फुण अपने मनमें चिन्तयो ।
यह निमित्त सो पहुंचो आय, बहुत कहां हूं कहों बढ़ाय ॥३५४॥
देखूं सुन्दरिको हु कर्म, याहि देय भंजूं सब भर्म ।
यो मन मांहि विचारै राव, तब तिन जंप्यो जी सत भाव ॥३५५॥
कुष्टी राव बात सुन मोहि, मैनासुन्दरि दीनी तोहि ।
चलो शीघ्र ही परण ही काज, मन वंछित सुख देखो आज ॥३५६॥

卐　卐　卐

जब यह वचन रावको सुनो, तब सब मंत्रिन माथो धुनो ।
यह नरनाथ कियो क्या कर्म, काये गुप्त न कहिये मर्म ॥३५७॥
यह कुष्टी तन भंग विकार, पुत्री दीजे कहा विचार ।
जन्म जन्मको चढ़े कलंक, हसिहैं सब राव अर रंक ॥३५८॥
राव सुणि जम्पो तब तास, मन्त्री किम निदत सुपयास ।
याकै सब सामग्री तिसी, होय और भूपनकै जिसी ॥३५९॥
सिरपर छत्र चवर द्वै ढुरैं, आगे शूर खड्ग कर धरैं ।
भण्डारी राखै भण्डार, माल खजानो अगम अपार ॥३६०॥

दुखी लोग सेवत हैं पास, आगे नित्य होत है रास।
गाहा गीत बात बहु भेद, सैंधव बहुत अरु गजा भेद ॥३६१॥
अर सब भांति देखिए सुर, भूलि न कबहू भाषे कूर।
अर देखिए दया अधिकार, दान देत है चित्त उदार ॥३६२॥
यह सब ही विधि पूरो आहि, ऐसो वर तजि दीजे काहि।
वारंवार वखाणे राव, याही ऊपर मेरो भाव ॥३६३॥

❧ ❧ ❧

या सुण मंत्री उठै रिसाय, अजुगति कहा कहत हो राय।
मनमें शंक वातते कहैं, वारंवार चरण ते गहैं ॥३६४॥
राजा सुणो करो मति कोह, कीजे कछु सुताको मोह।
तुम तो करत कहांणो इसो, काहू मूढ कीयो है जिसो ॥३६५॥
पायो नग निर्मोलिक एक, ताको कछु कियो न विवेक।
काग जिहाजि बेठो आय, सो विडारियो ताहि चलाय ॥३६३॥
काहु आय भेद जब दियो, ताको पछितावो रहि गयो।
होत कहाणो तैसो एह, कन्या मति कोढीको देह ॥३६७॥
अपयश फैलि देशमें जाय, अन्त तऊ पछितेंहो राय।
आगे शोचि काम जो करै, तो कबहू चूक न परै ॥३६८॥

❧ ❧ ❧

अर ता अपजस देय न कोई, नीकै करि देखो जिय जोई।
और सुणो जोयों भूपाल, पाथर ले मति देवो लाल ॥३६९॥
कहा कर्म पुत्रीको करे, सोई होय बाप जिय धरे।
नीकै कर तुम देखो चाह, यामें कछू न धोखो आह ॥३७०॥
यह सुण वोलो राय प्रचंड, मेण वचन मोहे लागत दंड।
तुम मन्त्री जानो अनुमान, यह ही कान होय परमान ॥३७१॥

मत जंपो तुम वारम्वार, को समर्थ जो फेरनहार ॥३७२॥
बहु भोजन श्रीपाल ही दियो, पुर बाहर तब उस राखियो ।
मनमें हर्षवन्त विकसाय, राजा गृह तब पहुंचो जाय ॥३७३॥
जिंह बैठी मैनासुन्दरी, तासो प्रथम बात उच्चरी ।
पुत्री उत्तर देहु विचार, अज हूं आपनो कर्म निवार ॥३७४॥

❀ ❀ ❀

पाणिग्रहण करो तज लज्ज, सुन्दरी जंपै सुन हूं विलज्ज ।
कहा कहत हो हीणी बात, स्वस्थचित्त है सुन हो तात ॥३७५॥
जो मुनि क्रियावन्त अति होय, दरशन भ्रष्ट कहा कीजे सोय ।
कीजे कहा धर्म जो कहे, जाको चित्त दया नहि रहे ॥३७६॥
कीजे कहा ध्यान धर एक, जाके हृदय नाही विवेक ।
कीजे कहा त्याग बहु किए, जाको क्रोध प्रगट है हिए ॥३७७॥
कीजे कहा पूति गुण रात, मेरे मात पिताकी बात ।
बार बारको करे बखाण, मेरे तात वचन परमाण ॥३७८॥
निठुर चित्त है राणो गहो, दुष्ट कहांणो तासो कहो ।
मैं दीनी पुत्री जिय जान, कुष्टी राव परणि सुख मान ॥३७९॥
सुन्दरी सुने तातके बोल, तेई मनमें धरे अडोल ।
मनमें कीनो हर्ष अपार, विहसत जंपे वारम्वार ॥३८०॥

❀ ❀ ❀

विधि निर्मयो हीन गुणवन्त, सुन हु तात वह मेरो कन्त ।
सुन्दर वदन नरिंद जे आन, ते सब देखूं तुमह समान ॥३८१॥
यह तो कियो कर्म निरदोष, काहू सो कछु राग न रोष ।
शुभ अर अशुभ कर्म हैं संग, कोऊ मति भूलो भ्रम रंग ॥३८२॥
हरत परत अब सरयो मुझ, राजा कछु दोष नहीं तुझ ।
पुत्री सुन यों जंपे राव, तेरे पोते दुष्ट स्वभाव ॥३८३॥

अजो न तजत कर्म अतिगाह, ऐसे लागो होन विवाह ।
विप्र एक विद्याकर लीन, सामुद्रिक जोतिष परवीन ॥३८४॥
लीयो बुलाय आप नरनाह, हर्षवन्त पुत्रीको व्याह ।
दिन शुभ घडी महूरत साध, लगन लियो जोशी आराधि ॥३८५॥
भाष्यो विप्रह तबै ।नरुत्त, शुभ कर वासर आज पवित्त ।
सूरज शशि यह सुरगुरु चाह, वर कन्याको उत्तम आह ॥३८६॥

बरस वीस जो सोधो राय, ऐसो घोस न पहुँचे आय ।
हर्ष राव ताको कछु दियो, तब जोतिषी हियो भर लियो ॥३८७॥
त्याग लेत तो हाथन बहे, वारम्वार विप्र यों कहे ।
बात कहत सो करय न शंक, सुन हो राय कर्मके अंक ॥३८८॥
तोकूं कछु दीजे नहीं खोर, प्राणी बंध्यों विधिकी डोर ।
जित खैंचें तितही ले जाय, यामें कछु न घोखो राय ॥३८९॥
या अजुगति कछु कहिय न परे, राजसुताको कोढी वरे ।
जाके रूप जगत मोहिए, सो किम कुष्टीको सोहिए ॥३९०॥

राजा हिये बात यह धरी, तेरी बुद्धि विधाता हरी ।
ऐसो तें आरम्भो काज, है कछु बूड्यो चाहत राज ॥३९१॥
विप्र गयो घर लियो न वित्त, लागो प्रगट न यही चरित्त ।
मन्त्री वरजे पुनि पुनि तास, स्वामी यह है धर्म विनाश ॥३९२॥

विनसे मन्त्री शंका धरे, विनसे भामन आयस टरे ।
विनसे राव मंत्र जो तजे, विनसे सुभट देख रण भजे ॥३९३॥
विनसे शूर क्रोध परहरे, विनसे साधु वाद जो करे ।
विनसे दाता विवेक न करे, विनसे विप्र क्रोध जो घरे ॥३९४॥

विनसे अलि पंकजकी बास, विनसे रागी रहे उदास ।
विनसे चोर भेद जो देय, विनसे रोगी स्वाद जो लेय ॥३९५॥
विनसे साह उधारो देइ, विनसे गणिका जो व्रत लेइ ।
विनसे अति कामातुर देह, विनसे नार फिरे परगेह ॥३९६॥
विनसे पात्र क्रिया जो हीन, विनसे तपसी लोभ है लीन ।
वार वार मन्त्रीगण कहे, काहूको वरजो नहीं रहे ॥३९७॥

अब लौं चलते मंत्र प्रवान, अब तुम कछु हो गए अयान ।
सुता रूप गुण सायर मान, सौंपत कुष्टी कहां सयान ॥३९८॥
मानों बात कहुँ ढिठकाय, अति हू दुःख पावोगे राय ।
तबै राव बोले मतिभंग, मन्त्री मति भूलो भ्रम रंग ॥३९९॥
मूरख हाए विचारो कुसुद्धि, कहां गई जो तुम्हारी बुद्धि ।
मैं जो तिलक कियो धर मौन, मेटनहारो कहो है कौन ॥४००॥

तब मन्त्रीगण चवे निशंक, कुल निर्मल मति देहु कलंक ।
मनुष्य जन्म धर वो पद पाय, सो तुम अब मति टारो राय ॥४०१॥
तनमें ही दुख प्रबल सहो, मत तुम क्रोध दवानल दहो ।
बात बढ़ाई कहे को और, मति गारध सिर बांधो मौर ॥४०२॥
सुन कर कोप भयो अति राव, दुष्ट भाव बोलियो कुभाव ।
राज रीतिको धर्म न होइ, मन्त्री तुम देखो जिय जाइ ॥४०३॥
अब लौं तो राख्यो सन्मान, अब मरवो तू निश्चय जान ।
मो मन और कहो तुम और, अबके बोलत मारूं ठौर ॥४०४॥
तब मन्त्री बोलें कर जोर, स्वामी हमें न दाजे खोर ।
हम मन्त्री बोले भय जीत, यही हमारे कुलकी रीत ॥४०५॥

स्वामी धर्म जिह ठाहर होय, दर्शै सोई पधारें सोय।
जो हम करें लाज सुन राय, तो कुल रीति हमारी जाय ॥४०६॥
अरु राजन को यह स्वभाव, जब जाणत है वसमो दाव।
तब मन्त्री लीजिये बुलायें, बूझे ताहि भेद निकुताय ॥४०७॥
जोई बात कहे समझाय, सोई करे सबे छिटकाय।
और न मन लावे अधिकार, ऐसो नृप कुलको आचार ॥४०८॥
तातैं वार वार उच्चरे, कछूयन जियको लालच करे।
चूक हमारी कछुय न आहि, नीके कर देखो चित चाहि ॥४०९॥
मनमें समझा कछु न राय, मुह कर तिन सो उठा रिसाय।
और बात मति लावो चित्त, सामग्री तुम करो पवित्त ॥४१०॥

सुन्दरि वरको शोभा धरो, वेगे होहु वार मत करो।
सुनत वचन मन्त्री दुःखी भए, हरे बांस मंडप अर ठए ॥४११॥
चार खम्भ कञ्चनके बणे, चमकें नग निर्मोलक घणे।
चार कलश इकसोभन जरे, ते सोहें चहूँ खूंटा धरे ॥४१२॥
अर शोभा तिहि विधि प्रकार, मुक्ताहलकी बांदरवार।
चौक सुवासणि देहि सुचंग, अति उज्वल देखे अभंग ॥ ४१३॥
अरु तह दिये सुरंग उछार, तिनकी शोभा जगै अपार।
नन्हीं चूनी दई फलाय, ते चमके कछु कही न जाय ॥४१४॥
सवै सुवासणि रुदन कराय, शाभा चौक सवारति जाय।
सज्जन लोग जुरे सब आय, मलिन चित्तको नहि विकसाय ॥४१५॥

ठाय ठाय झुरे सब कोय, कछु मति बात न ऐसी होय।
विधना कछु ऐह निरमई, राजाकी मति बुध हर दई ॥४१६॥

राजा राय जुरे सब जिते, अश्रुपात करत हैं तिते ।
अरु बजें वाजित्र अपार, तूर मृदंग भेरि सहनार ॥४१७॥
गहरे शब्द बाजे नीसांण, मलिन शब्द अति सुनिये कान ।
विप्र वेद धुनि पढ़ें अपार, नर नारी रोवें अधिकार ॥४१८॥
राजा कहै व्याह केचार, वेगा करो होय अवार ।
मेरे मनको ईठसु आय, वेग उवाई ल्यावो जाय ॥४१९॥
करूँ सेव जों माते होय, बार बार यों भाखे सोय ।
मन्त्री गये सीष धुन तहां, नगर निकासे वर जो जहां ॥४२०॥
ले आये अति कुष्टी देह, वहे राधि अर लागी खेह ।
जो देखे सो हांसी करे, विधिको टाठ न टारो टरे ॥४२१॥

देखत राजा अति सुख कियो, कञ्चन कलश न्हावनको दियो ।
सोधें मर्दे बहुत अबीर, तो पण वास न तजे शरीर ॥४२२॥
कङ्कन कर बांधो सेहुरो, मूर्ख राव भयो बावरो ।
कामन घोड़ी गावें सबै, दुलह व्याहन चालो तबै ॥४२३॥
चंचल तुरी चढावण लियो, मंत्री चाहे हांसी कियो ।
वह दिढ वाग गही कर चाव, राज वंश किम मिटे सुभाव ॥४२४॥
चली बरात उडी तहां धूर, रही वहां वह अम्बर पूर ।
रतन जडत सिर ऊपर छत्त, ढूरे चमर सो भले महत्त ॥४२५॥
श्रीपाल मन हर्षित भयो, मण्डप द्वारे ठाडो भयो ।
परियन सकल देखिया आय, तिनके बदन गए कुमलाय ॥४२६॥
मानों अंबुज हते तुषार, मानो तरुवर हते कुठार ।
ऐसो भयो चित्त अनुराव, मानों भयो वज्रको घाव ॥४२७॥
ते बहु रुदन करे गह भरे, राजाकी ते निंदा करे ।
राणी जन अन्तेवर जिती, अति विलखाय बिसूरे तिती ॥४२८॥

तिनके विलखे कहा सिराय, राजा मनमें खरो लजाय।
मूढ रह्यो नीचो करि नार, काहूँ दिश नाहि सके निहार ॥४२९॥
माता बहन खरी गह भरे, हाहाकार लोग सब करें।
माता महा दुःख तनदगी, पुत्रीके गरकण्ठ सो लगी ॥४३०॥

हा पुत्री सागर दुःख भरी, किमति रहै मैनासुन्दरी।
पूरव कहा कीयो तैं पाप, जातैं भयो नाह सन्ताप ॥४३१॥
सुन्दरी बोला जिन मत लीन, समझावे परियण परवीण।
कोऊ दुःख करो मति सोग, शुभ अर अशुभ कर्मको जोग ॥४३२॥
जो प्राणी आयो संसार, ताकै गैर दुःखकी मार।
जित ही देखे नैन पसार, तित ही बांधी दुःखकी पार ॥४३३॥
यह सागर संसार अपार, विरलो कोऊ न पावै पार।
माता पिता सुत बन्ध अर मित्त, हय गय वाहन रथ जु पवित्त। ४३४॥
माया और आह अधिकार, मिथ्या सवैं रची करतार।
कांको पिता कौनकी माय, जीव अकेलो आवै जाय ॥४३५॥
बैठे रहें हितू पैचास, बार बार चोवें चहुँ पास।
काहु पास न होय उपाय, जब कर केश गहे जम आय ॥४३६॥
सोई बड़ो हितू सुणि माय, कांधे धर मर घट ले जाय।
राजेहू खोर देहु मति कोय, होणहार सोई परि होय ॥४३७॥
प्रति बांध्यो सगलो परिवार, गांवण वह्यो व्याहको चार।
आपन हर्ष उठाई सु लियो, शशिवदनी सेहुरो बांधियो ॥४३८॥
मणिमय कुण्डल पहरें कन्न, कर कंकण सोहिए रदन्न।
नेवर पहरे अति झुणकार, पहरी गल मोतिनकी मार ॥४३९॥
सुर हि वाष मरदियो शरीर, पहर्यो अंग कसूंभी चीर।
करि सिंगार पहुँची जास, श्रीपाल मण्डप यो तास ॥४४०॥

मैनासुन्दरी बैठी आय, परियण रहसि दियो छिटकाय।
तिह वा रुदन करें सब कोय, इकटक रहे मुहा मूह जोय ॥४४१॥
तब सुन्दरी उठ ठाढी भई, निज परियन माता पै गई।
सुरसुन्दरीको गायो जिसो, मोकों क्यों नहि गावो तिसो ॥४४२॥
पुत्री जंपै वारंवार, करो उछाह अर मंगल चार।
यह कहकै पुत्री बैठियो, माता बहन हियो भर लियो ॥४४३॥
ढुरैं चवर दूल्हेके सीस, जय जय शब्द करें नर ईश।
बाजें जहां गहर बाजणैं, जाचकजन विरदाचल भणैं ॥४४४॥
चन्दन रोरि दई लिलार, पहरे पाटंवर शुभ सार।
नाचें गावें मंगल चार, बामण वेद पढैं झुणकार ॥४४५॥
भांवरि सात फिरी शुभ जबै, राजा गन्धर्वो लीनो तबै।
मैनासुन्दरी पकरी हाथ, सौंपी श्रीपाल नरनाथ ॥४४६॥
कन्या दान लियो नरनाह, तब नृप दियो मूहकी घाह।
मन्त्री जन सब लिये बुलाय, मेरो मूह मत्ति देखो आय ॥४४७॥

हा हा हूं पापी परवान, हा हा हूं मतिहीन अयाण।
महा दुःख परियणको दयो, अपजस कलंक लोकमें भयो ॥४४८॥
वारंवार ऐसी उच्चरै, ऐसो काम नीच नहि करै।
सबै गंवाई कुलकी रीति, नर भाखो यों करी अनीति ॥४४९॥
अब कहा बदन दिखाऊं तोय, चढी कालिमा मेटै कोय।
हा हा पुत्री सब गुण लीन, जैनधर्म्म पालन परवीन ॥४५०॥
मो निर्मल मति खोटी भई, तू कन्या कोढीको दई।
पुत्री कहै सुनो हो तात, मिटै केम जिनभाषित बात ॥४५१॥

कछु खोरि दीजे नहीं तोहि, उदय कर्म आयो सुन मोहि।
जो कुछ निमति होय तह काल, तेई अंक लिखे मम भाल ॥४५२॥

पहले विधिना या जिय धरी, पाछैं हूँ गर्भ औतरी।
जै कुछ आय करै करतार, ताको कीजे कहा विचार ॥४५३॥
काहु पास न भावी जाय, अज हूँ कहां होयगी राय।
ऐसो वचन भूप जब सुनो, मन पिछतान्यो माथो धुनो ॥४५४॥
नीके करि देखो चित चाव, अपनी चूक सुनाऊं काव।
इह चिन्तत दीनी ज्योनार, सोवो दीयो अगण अपार ॥४५५॥
छत्र चमर दीयो भण्डार, दीयो मंगल तुरी तुषार।
पाटम्बर दीए बहु चीर, जिन्हें लगे निर्मोलिक हीर।४५६॥
षोडश वरषां झांणै अंग, पहरै कांचू सबै सुरंग।
अतिसुन्दरि दासी गुण लई, एक सहस सुन्दरिको दई ॥४५७॥
सहस दास सुन्दर गुण रेह, दीने श्रीपालको तेह।
सेवक भलै भलै जे भए, वहौत और सेवक भी दए ॥४५८॥

पुत्री देख विसूरै राय, वार वार मनमें पिछताय।
कंचू दीनी कही न जाय, बहु दीन्हे आभरण घडाय ॥४५९॥
खाई सात रची चौपास, नौतन दीए कराय अवास।
पुरि वाहरि राखियो नरेश, दीयो बहुत पुर पाटन देश ॥४६०॥
बहुत दिए बाजनैं निसान, दियो सबै चिह्न उनमान।
राजा दियो अतिधन जितो, कवि परिमल्ल न वरण्यो तितो ॥४६१॥
लई कुमरि चन्डोल चढाय, श्रीपाल घरि गयो लिवाय।
यह सुन नगर भयो कहराव, सबै कहैं धृग धृग यह राव ॥४६२॥

रोवैं परियण वे अनुमान, रोवैं मन्त्री अर परधान।
रोवै रैयत कुली छत्तिस, रोवत पशु पंछी सब दीस ॥४६३॥
तू विधनां अति खोटो आहि, भले बुरे नहीं देखे चाहि।
घरि घरि झूर करै पिछताय, राजा गारि देय बिलखाय ॥४६४॥
बहुत बातको करै विचार, सुख निवसे श्रीपाल कुमार।
मैनासुन्दरि मनको ईठ, एकै दिन एकासण बीठ ॥४६५॥
तबे श्रीपाल कहैं हे नार, प्राण पियारी देख विचार।
तू विशुद्ध गुण शील अभंग, रूपवन्त कञ्चन मय अंग ॥४६६॥

चन्द्रमुखी सुन अमी निवास, मति आगो छै मेरे पास।
जौ लौं अशुभ उदय मो कर्म, तो लौं राखि आपणो धर्म ॥४६७॥
वार वार हूं विनहूं तोहि, सुन्दरि मति आलम्बै मोहि।
तुम वल्लभा सुखकी दातार, संगति बढै दोष अपार ॥४६८॥
संगति गुणी निर्गुणी होय, संगति होय कुबुद्धि लोय।
संगति तपो भ्रष्ट व्रत तजे, संगति पाय सूर रण भजे ॥४६९॥
संगति साधु सुरा आचरे, संगति ही नर चोरी करे।
संगति सिंह स्यार है जाय, संगति अधिक आमिष खाय ॥४७०॥
संगति विप्र तजे षट् कर्म, संगति धर्मी करे अधर्म।
संगति शील तजे कुल नार, भामन मनमें देख विचार ॥४७१॥
संगति कोढ बढे दुःख लहे, श्रीपाल सुन्दर सो कहे।
मेरो संग बुरो मन आन, सुन्दरि बात हमारी मान ॥४७२॥

बोली नार बैन सुन येह, मनमें उपज्यो अति सन्देह।
बालम सुनो कही या तोहि, कर्कश वचन कहो मति मोहि ॥४७३॥

नीके कर सोचो मन मांहि, जो लौं उदय कर्मकी छांहि।
तो लौं भुगतो दुःख सुख सन्त, भूलन कायर हुजे कंत ॥४७४॥
विधिना मोहि पटे लिख दियो, सोई मोकू निहचै भयो।
तुम मेरे प्रीतम भरतार, तुम मेरे प्राणन आधार ॥४७५॥
तुम अति रूपवन्त गुणवन्त, तुम ही सुखसागर मो कन्त।
नयन सुखी तोलौं ये चार, जोलौं देखो तुम्हें निहार ॥४७६॥
तोलौं मैं पवित्त शुभ ठाम, जोलौं जपूं तुम्हारो नाम।
तोलौं हाथ धन्य सुन राय, जोलौ प्रछालूं तुम पाय ॥४७७॥
बाह धन्य कछु कही न जाय, जो आलंबूं कंठ लगाय।
हूं त्रिय धन जोलौं जिय धरो, जबलग सेव तुम्हारी करो ॥४७८॥

शील विहूनी नार जो होय, पीयकी निन्दा कर है सोय।
पतिव्रता सब ही गुण भरी, हो तो शीलवन्त सुन्दरी ॥४७९॥
शील है सो मेरो अति चित्त, शील पिता बन्धु अर मित्त।
शील परिग्रह मेरो संग, शील रूप मेरो सरवंग ॥४८०॥
शील द्वादश भरण विचार, शील है नव रस श्रृंगार।
शीले जीवन शीले मरण, शीले सर्व सशीले सर्ण ॥४८१॥
शीले मेरे नग उनमान, तोलौं तजो न जोलौं प्राण।
सर्वस जाय शील जो रहे, तीन भवनमें शोभा लहे ॥४८२॥
यह सुन श्रीपाल हर्षियो, धन्य मैनासुन्दरि तो हियो।
धन्य भामन तेरो अवतार, जिह दिढ धरयो शीलको भार ॥४८३॥
ऐसी विपत्तिमांहि विहसंत, बहुत दिवस बीते निवसंत।
कोढारूढ रहे चौपास, सुन्दर पेखत लेय उसास ॥४८४॥
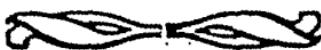
९–श्रीपालका कुष्ट दूर हो जाना

हाय कर्म दोषनके राय, तेरी कथा न वरणी जाय।
तेरो शरण आय जिह लियो, ताको दुख बहुततैं दियो ॥४८५॥
अरु जो फिरा दुष्ट तो साथ, ताको भले लगाए हाथ।
तेरी आव रहे जिय जोय, अंतकाल ताको दुख होय ।४८६॥
जिह काहू तोको दुख दियो, ताको बुरो न सर्वथा कियो।
जिह तेरो सेयो परसंग, ताको सदा भयो सुख भंग ॥४८७॥

दोहा।

जिह तू मारयो दुःख दे, रे विधि अष्टविकार।
ते पहुंचे वैकुंठको, तेरे मुख दे छार ॥४८८॥
जिह तेरी आसा तजी, कीनो मूल विनास।
तिह भवसागर दुख तजो, लह्यो मुक्तिघर वास ॥४८९॥

चौपाई।

निंदा बहुत कर्मकी करी, और न काहू उपरि धरी।
मैनासुन्दरी उठी तुरंत, दिव्य वस्त्र पहिरे विहसंत ॥४९०॥
शीलवंत अर गुणह निधान, निज भरता संयुक्त समान।
मनमें उपज्यो सुख अशेष, श्रीजिनभवन कियो परवेश ॥४९१॥
तीन प्रदक्षिणा उत्तम बुद्धि, दीनी मनवचकाय विशुद्धि।
दम्पति लगो स्तुति जु करण, जयजय मुनिवर भवभव शरण ॥४९२॥
जय मिथ्यातम हरण पतंग, सेवत सुरनर खेचर चंग।
निर्द्वंद निरामय नाना कोष, क्षय कीने अष्टादश दोष ॥४९३॥
अनंत चतुष्टय गुणह निवास, इंद्री खेदन सदा उदास।
गदित सप्त तत्त्वारथ भाव, पञ्च दंड मोहारि विनाश ॥४९४॥

रत्नत्रय भूषण शुभ चित्त, एक रूप देखण अरि मित्त।
आनंद कर जयजय जगदीश, जयजय करुणा धर सब ईश ॥४९५॥
शुद्ध चित्त दोऊ सिर नाय, बैठे चरणकमल तटि जाय।
तब सुन्दरी वोलो कर भाव, हूँ पावन मोहे समझाव ॥४९६॥
हो स्वामी कछु ज्ञान प्रकाश, संसो मेरा चित्तको नाश।
जयजय मुनि श्रीपाल निहार, नाह भीख दे चित्त उदार ॥४९७॥
कछु धर्म स्वामी कहि सोय, कुष्ट व्याधि जातें क्षय होय।
मुनिवर कहि पुत्री सुन एह, अणुव्रत गुण समकित सुध लेह ॥४९८॥
पुण्य शिक्षा व्रत सुन हु विचार, भणइ मुनीश्वर पक्षाहार।
गुरवो धर्म्म प्रगट इह आहि, नीके करि सुन भाषे ताहि ॥४९९॥

मुनीश्वर उवाच।

वसन्ततिलका छन्दः।

धर्मे मतिर्भवति किं बहु भाषितेन,
जीवे दया भवति किं बहुभिः प्रदानैः।
शांतं मनो भवति किं धनदे च तुष्टे,
आरोग्यमस्ति विभवेन तदा किमस्ति ॥

इन्द्रवज्रा छन्द।

बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणं च, देहस्य सारं व्रतधारणं च।
अर्थस्य सारं किल पात्रदानं, वाचःफलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥

प्रथम संस्कृत छन्दका अर्थ।

धर्ममें बुद्धि है तो बहुत कहनेसे क्या है। जीवोंपर दया है तो बहुत दानोंके देनेसे क्या है। मन शान्त है तो कुबेरके खुश होनेसे क्या है, तन्दुरुस्ती है तो धनसे क्या है ॥

४

भावार्थ—बुद्धिका निज धर्ममें लगा रहना ही शास्त्र, गुरु वचनोंका फल है सो यदि बुद्धि धर्मनिष्ठ है तो शास्त्रादि उपदेश किस अर्थ। जीवदान सभी दानोंसे उत्तम है सो यदि जीवदया रूप दान है तो उसके आगे और दान किस अर्थ। यदि तृष्णा मिट गई तो कुबेरकी खुशी भी किस अर्थ। धनादि सब सुखोंसे तन्दुरुस्ती बड़ा सुख है। यदि आरोग्यता है तो धनादि सुख गौण है, अथवा जिसकी बुद्धि धर्ममें नहीं उसको बहुत उपदेश क्या हैं? जिसके हृदयमें जीवदया नहीं उसके बहुत दान भी वृथा है, जिसका मन शांत नहीं उसपर कुवेर प्रसन्न हो तो क्या है, और जो रोगी है उसको धनका क्या सुख है?

दूसरे संस्कृत छन्दका अर्थ।

बुद्धिका फल आत्मतत्वका विचार है, देहका सार (फल) व्रतोंका धारण है, धनका फल याचकोंको दान देना है। वाणीका फल मधुर (मिष्ट) वचन वोलना है।

भावार्थ—आत्मतत्वके विचार विना बुद्धि (ज्ञान) वृथा है। व्रत ग्रहणके विना देहका धारण (जीवन) वृथा है। सत्पात्रको दान दिये विना वृथा खर्चा धन व्यर्थ है, मीठे वोलने विना जिह्वा व्यर्थ है।

चौपाई।

निर्मल सिद्धचक्र व्रत लेहु, अष्टाह्निका वड़ो व्रत एहु।
तब ताकी सुनियो विधि साध, वहु दिन सिद्धचक्र आराध ॥५००॥
प्रथम ही मण्डल कीजे वानि, ॐकार प्रथम ही जानि।
चहुकुणे लिखि सोलह अठ, मध्य पंच परमेष्ट गरट ॥५०१॥
दल दल पर लिखये वसुवर्ग, अक चट तप यश है वसुवर्ग।
चल अन्तर अन्तर सुवनाय, दर्शन ज्ञान चरित्र सुभाय ॥५०२॥

पुण चक्रिय ज्वाला मालिणी, अम्बा परमेश्वर योगिणी।
चारों लिखि जे गुणह विशाल, लिखिजे तहां दशों दिकपाल ॥५०३॥
गोमूह यक्षेश्वर लेखिये, वारह मानभद्र थापिये।
दश मुख के थापिये सुरंग, दश द्वार उद्यत अभंग ॥५०४॥
बहु दिन पालहु शील सुभाव, इन्द्रियनको उपसर्ग मिटाव।
मूल मन्त्र निश दिन भाषिये, होय निचिन्त भाव राखिये ॥५०५॥
संक्षेपे विधि यामें कही, पुत्री सुनत भई गह गही।
कुष्ट कुष्ट तनु नीको होय, रोग सोग सब डारे खोय ॥५०६॥
व्यन्तर प्रेत भय न कछु करै, वशीकरण मोहनी सब हरै।
होय शुद्ध जस बढ़े अपार, पुत्र कलत्र बढ़े परिवार ॥५०७॥
नर अरु नारि सबै सुख लहैं, दुःख दालिद्र सब ही दहैं।
सुण पुत्री पूजा विधि जिसी, तुमसों वर्ण करत हूँ तिसी ॥५०८॥

कातिक फागुण साढ़ वखानि, श्वेत पक्ष निर्मल अति जानि।
अष्टमी दिन कीजे उपवास, कीजे इन्द्रयनको सुख नाश ॥५०९॥
बहु दिन ब्रह्मचर्य मांडिए, घरकी चिन्ता सब छांडिए।
सिद्धचक्र बहु दिन तप माण, कीजे पूजा मिटे अवसान ॥५१०॥
नीके कर थिर मन राखिए, मूलमन्त्र पुण पुण भाखिए।
मन वाञ्छित फल पावे तबै, उद्यापन विधि कीजे जबै ॥५११॥
कीजे आठ भवन जिण तणे, धरिए आठ बिम्ब अति वणे।
कीजे सिद्धयन्त्र शुभ अठ, थापे मुनिवर गुण है गरठ ॥५१२॥
झालरि मुकुट चवर शुभ थान, कीजे आठ आठ परमान।
कीजे आठ प्रतिष्ठा सार, बहु धन खरचै चित्त उदार ॥५१३॥
पूजा आठ करै धरि भाव, अथवा एकै मन करि चाव।
उद्यापन कछु होय न चाहि, दूनो व्रत कीजिये निवाहि ॥५१४॥

वित्त जोग वहु दीजे दान, चौ संग हि धरिये अति मान ।
अजिकाने साडी पहराइ, आठ ग्रन्थ दीजिए लिखाइ ॥५१५॥

दुखिया दीन दलिद्री जिते, कर सनमान पोखिये तिते ।
सुन्दरि अर श्रीपाल कुमार, सुन मनमें सुख कियो अपार ॥५१६॥
गुरुको नमस्कार कर घणों, गए निज मंदिर दोनों जणों ।
रहैं सुख वहु वढे उल्हास, आय पहूंचो कातिक मास ॥५१७॥
शशि पक्ष अष्टमी दिन भया, अति निर्मल प्राशुक जल लयो ।
न्हाइ अंग अरु पहिरे वस्त्र, अति उजल देखिए समस्त ॥५१८॥
सरव द्रव्य मेले धरि भाव, अतिहर्षित मन उपज्यो चाव ।
इछा युक्त गए जिनगेह, वीतराग वन्दो शुभ देह ॥५१९॥
तीन गुप्ति मनवच अरु काय, पण विधि श्रीजिनशासन पाय ।
थिर मन होय कियो अति गाह, विधिसे पूजे श्रीजिननाह ॥५२०॥
वसु दिन व्रत विधिसौं मण्डियो, राग रोस दोउ छांडियो ।
जानैं समत सत्तु अर मित्त, ब्रह्मचर्य पालै इक चित्त ॥५२१॥
सुनि पै लिया कीयो उपवास, उपज्यो दुष्ट कर्मको त्रास ।
नीके सिद्धचक्र पूजियो, शुद्ध भाव गन्धोदक लियो ॥५२२॥
अति सुगन्ध करे सुविचार, वंछित गई जहां भरतार ।
सिरसे तवै न्हवायो सोय, प्रथम ही दिन कछु नीको होय ॥५२३॥
श्रीपाल अरु सातसै अंग, देखो पुण्य फले जो अभंग ।
वहु विधि पूज्यो भाव करेइ, मानो स्वर्ग निसीनी देइ ॥५२४॥

ढुरे चवर वाजे कंसाल, जल धारा दीनी सुकमाल ।
मलियागिरि सो कुंकुम गार, पूज्यो जिनवर विम्ब निहार ॥५२५॥

शशि सम धवल अक्षत तह लये, सुन्दर पुञ्ज मनोहर दये।
पुष्प मनोहर नाना रूप, अति सुगन्ध देखिये अनूप॥५२६॥
कछुक कीनी सुन्दर माल, श्वेत अरुण देखिये विशाल।
कछु कुसुम अरु छूटे लये, भर अंजुलि जिन आगे दये॥५२७॥
नैवेद्य पक्वान अपार, श्री जिन आगे रचे अवार।
चार धरे तह दीप अनूप, खेयो वर कृसनागर धूप॥५२८॥
नाना विधि फल धरे सवार, मन वंछितको कहे विचार।
श्रीपाल पूजा की जहां, आठों द्रव्य चढाये तहां॥५२९॥

कुसुमांजल दे सिर हू नायो, पुष्पांजली ले पाणी दयो।
प्रथम पूजा इक गुण करी, दूजै दिन दह गुण विस्तरी॥५३०॥
तीजे सौ गुण पूजा रची, सहस्रगुणी चौथे दिन सची।
पंचम दश सहस्र गुणी भणी, लक्ष गुणी षष्ठे दिन ठणी॥५३१॥
सप्तम दश लक्ष गुणी जान, कोटि गुणी अष्टम परमान।
ठाडे सुर सब कौतिक हार, मनमें कीयों हर्ष अपार॥५३२॥
अति सुकण्ठ लीनी जयमाल, उपज्यो कोतूहल तिन काल।
सुन्दर महा आरती रची, इन्द्र इन्द्राणी दोऊ नची॥५३३॥
सुरवाजे बाजें अनिवार, मधुरी धुनी शोभे अधिकार।
जिनके मान न वरणे जाय, नाचे किन्नर अति सुपकाय॥५३४॥
अमरेश्वर सब चढे विमान, अमरे आप आपने थान।
पूजा करी भरम सब भगो, कोटिभट आठो निशि जगो॥५३५॥

तीन दिवस गंधोदक न्हाय, कोढ विनष्टो हर्षो राय।
कंचन वर्ण भयो तन इसो, सोहत कामदेवको तिसो॥५३६॥

और जे बली सातसै मित्त, तिन हु के तन भये पवित्त ।
और ही कुष्ट देह थे जिते, गंधोदक किये नीके तिते ॥५३७॥
भूत पिशाच निशाचरमंत, नासैं गंधोदक परसंत ।
मोहन वशीकरण जे आहि, विषहर डाइण साइण जाय ॥५३८॥
नैन निरंध श्रवण विन जिते, नीके भये सबै नर तिते ।
अरु जे दुष्टकर्म दुख दगैं, सुख पावैं गंधोदक लगैं ॥५३९॥

❀ ❀ ❀

नर नारी मन वच कर कोय, सिद्धचक्र आराधे जोय ।
सो प्रगटे तिहुं लोक मझार, सो भुंजै बहु सुख अधिकार ॥५४०॥
वाढै विभव विना अनुमान, करै राज सो इन्द्र समान ।
नाना फल विलसे सुखदाय, मरके बहुरि मुक्त सो जाय ॥५४१॥
जाके न्हाए तै कवि कहै, कुष्ट व्याध नहीं तनमें रहै ।
याको अचिरज कछु नहीं आहि, जो करि है सो पावै ताहि ॥५४२॥
मैनासुन्दरी पियकी देह, देखत गद्द भर आयों नेह ।
तब तासों मुनिवर यूं कहो, यह फल अबतैं तुरत ही लहो ॥५४३॥
स्वामी तुम प्रसाद सब येह, बहुत विनय कियो धरि नेह ।
चरण कमल मुनि वरके वंद, दोऊ घरि आए आनंद ॥५४४॥

❀ ❀ ❀

गयो अशुभ सब धर्म सहाय, बाढ्यो शुभ को कहै बढ़ाय ।
धर्म एक त्रिभुवनमें सार, धर्म ही दुःख विनाशन हार ॥५४५॥
धर्म ही तैं नर भव आइए, धर्म तैं उत्तम कुल पाइए ।
धर्म ही तैं कीरति विस्तरै, धर्म ही तैं कारज सब सरै ॥५४६॥
धर्म ही तैं वाढै परिवार, पुत्र कलत्र वढै सपार ।
धर्मी मह व्यापै नहीं कोय, धर्म ही तै चक्रीश्वर होय ॥५४७॥

धर्महीसे नर वयरनि वहै, धर्महीसे कोई बुरो नहीं कहै ।
धर्महीसे नर होय मरंक, धर्महीसे नहीं चढै कलंक ॥५४८॥
धर्म ही ताहि लेइ छुड़ाय, जब जम त्रास दिखावै आय ।
गहे केस देह छाडै जबै, धर्म जे राख लेत है तबै ॥५४९॥
धर्महीसे सब मिटें कलेश, धर्म ही तै मर होय सुरेश ।
बहुत बातको कहै बढाय, धर्म ही नर मुक्त होजाय ॥५५०॥
कवि परिमल्ल कहै चित्त चाहि, धर्म विना कोऊ हितु नाहि ।
प्राणी तज प्रपंच विचार, करो धर्म जिम उतरो पार ॥५५१॥
और कछु सब दुखको धाम, धर्म एक है सुखको नाम ।
धर्म ही तें श्रीपाल है रूप, मकरध्वज सम भयो अनूप ॥५५२॥
कुष्ट व्याधि थे लियो उबार, पाई महा मनोहर नार ।
दोउ परस्पर सुख अपार, भोग भोगवैं विविध प्रकार ॥५५३॥
जिन मंदिर दिन दिन पग धरैं, निज गुरुकी सो स्तुति हि करैं ।
विलसे विभव देय बहु दान, गुणियन गर्व लहे तहां मान ॥५५४॥
अह निशि सिद्धचक्र गुण गाहि, मूल मन्त्र जप पूजे ताहि ।
महा सुख दोऊ नवरंग, सेवा करें सातसे अंग ॥५५५॥
इस विध दोऊ सुख विलसंत, नित प्रति पूजत श्री अरहंत ।
तीसरी संधि यह वरणई, कवि परिमल्ल भाष कर दई ॥५५६॥

छन्द त्रिभङ्गी ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम् ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लकृतम् ।
वरसुन्दर पायो व्यथा गमायो श्रीपाल सुखराज करम् ॥५५७॥

इति तृतीयसंधिः समाप्तः ।

१०-माताका, श्रीपालको मिलना

दोहा ।

वर मैनासुन्दरि लहो, मिटो रोग अधिकार ।
श्रीपाल शुभ पाइयो, सिद्धचक्र फल सार ॥५५८॥

चौपाई ।

इतनी धर्म कथा यह रही, कवि परिमल्ल प्रगट कर कही ।
बहुरी कथा गई सो तहां, महानगर चम्पापुर जहां ॥५५९॥
कुन्दप्रभा राणी दुख दहां, श्रीपालकी सुध ना लही ।
लोचन भर भर लेय उसास, पुत्र वियोग दुखको त्रास ॥५६०॥
शोक समुद्र परिग्रह भरे, दिन दूसरे सुभोजन करे ।
खीणी देह बहुत जब भई, तब स श्री जिनमंदिर गई ॥५६१॥
तहां एक तिम मुनिवर लहो, सबै भेद तब तासों कहो ।
स्वामी कलाज्ञान परकाश, संशै मेट दुखको नाश ॥५६२॥
यह सायर संसार अपार, पसरो तहां महको जार ।
तामें परा जीव दुख सहै, यह काहु सो बात न कहै ॥५६३॥
पणविधि बहुरे जोरे हाथ, आई शरण तुम्हारो नाथ ।
सोई बात कहो मुनिराय, जातें मम सब चिन्ता जाय ॥५६४॥

❀ ❀ ❀

कुष्ट व्याधि श्रीपाल है अंग, ताकै वीर सातसै संग ।
गयो राज तज दुखको लयो, जीवित किधौं काल वश भयो ॥५६५॥
स्वामी मोपर दया करेहु, ताको भेद सबै मो देहु ।
तब मुनिवर जंपै गुणराव, सुन सुन राणी मन धर भाव ॥५६६॥

❀ ❀ ❀

पुर उज्जैन मालवो देश, करै राज पहुपाल नरेश।
कोढ़ारूढ़ देश बहु धाय, तुम पुत्र तहां पहुंचो जाय ॥५६७॥
राजसुता मैनासुन्दरी, राजा व्याह दई मन हरी।
दोनों सिद्धचक्र व्रत लयो, कुष्ट रोग तब ताको गयो ॥५६८॥
अर वे हुते सातसै अंग, तिनहुके तन भये अभंग।
जाचक जन हि देय बहु दान, राजा बहुत करै सन्मान ।।५६९॥
बहु सुख सो तिन ठान वसत, गुरुकी स्तुति जिन भक्ति करत।
यह सुन हर्षवंत अति भई, नमस्कार कर घर तब गई ॥५७०॥
ताको मोह व्यापियो हिए, वीरदमन पै आदस लिये।
चढ़ चंडोल पयाणो दियो, मनमें कुछ सोच नहि किया ॥५७१॥
कछुएक दिनमें पहुँची तहां, नगर उज्जैन मनोहर जहां।
नगर निकास महल तातने, तिनकी शोभा कहत न बने।५७२॥
तिन तिन देखत उपज्यो चाव, आगे परै न ताके पाव।
थकित भई मनमें सुख पाय, बार बार सोचे अकुलाय ॥५७३॥
मन ही मन राणी उच्चरे, कारण कछु न जाणो परे।
निकसो तहां वीर कोउ आय, तब तिस पूछा पास बुलाय ॥५७४॥
कह कह वीर बात धर तेह, काको मंदिर दीपत येह।
माता बात सुनो कर चित्त, याको ऐसो आहि चरित्त ॥५७५॥
यह कुष्टी कछु कहिय न जाय, बनमें रह्यो कहूँ धे आय।
कुष्टी और बहुत थे संग, नख शिख गले भये तन भंग ॥५७६॥

卐 卐 卐

यहां रहत दिन बीते घणे, अचरज एक कहत नहीं बणे।
एक दिवस तह कथा अपार, राजा तहठे गयो सिकार ॥५७७॥
देखत ताहि मोह अति भयो, भर भर अंगन भेटन लयो।
भेटत ताहि प्रीति अति भई, मैनासुन्दरी ताको दई ॥५७८॥

बरजें मन्त्री गहि गहि पाय, तिनसों राजा उठो रिसाय ।
घर ले आयो हिये उछाह, बहुत भांत सो कियो विवाह ॥५७९॥
राजा रैयत देत सब गार, सोवो दियो अति धनसार ।
अरु यह दिये महल करवाय, इनमें रहत बात सुन माय ॥५८०॥
अब सो रोग गयो सब कहैं, सेवक संग सातसै रहैं ।
अरु बहु विभव कहां लो गणो, धर्म नेह पायो फल घणो ॥५८१॥

यह सुन हर्षवन्त अति भई, शीघ्रह द्वार तासके गई ।
राजा सुन कीनी प्रतिहार, जैसे चिह्न बात व्योहार ॥५८२॥
श्रीपाल यह सुन हर्षियो, उपज्यो मोह हियो भर लियो ।
अति आनन्द कहत नहीं बने, कोटीभट सुन्दरी सों भने ॥५८३॥
आविछै जननी सुन येह, नीकै कर सनमान करेह ।
स्वर्ण सिंहासन तब निर्मयो, श्रीपाल माता पै गयो ॥५८४॥
नमस्कार कर वंदे पाय, बार बार रही उरही लगाय ।
नयन प्रवाह चलो तब तिसो, वर्षत है भादों घन जिसो ॥५८५॥
ताको सुख उपजो अधिकार, मुख चूमे सो बारंबार ।
पुण पुण भेटे कण्ठ लगाय, लोचन नीर भरे सुख पाय ॥५८६॥
तब सिंहासण बैठी आय, सुन्दरि उठी गहे ता पाय ।
कुन्दप्रभा ता उठावन लई, ताहि असीस विहस कर दई ॥५८७॥
चिरहीं काल रहा पति तणो, सदा नेह बाढो पिय घणो ।
और कहा मैं कहूँ बढाय, बहु अन्तेवर सेवैं पाय ॥५८८॥
अर बाढो पहुपाल नरेश, हय गय परिग्रह लोग असेस ।
और कहा भाखूं सुन बाल, कोटीभट जीवो चिरकाल ॥५८९॥

तब बोली सुन्दरी तज गर्व, तुम देखत मैं पायो सर्व।
मेरे भर्म सबै भजि गये, अब दोऊ कुल उज्वल भये ॥५९०॥
पाय पषारण कीनो जबै, मेरो जन्म सफल भयो तबै।
यह कह सो ठाडी हो रही, माता बात कुमरसों कही ॥५९१॥
नीके हो सुत सुख हो गात, मोसों कहो आपनी बात।
तब श्रीपाल कहै सुन माय, अब नीके जब देखे पाय ॥५९२॥
जीवन जन्म सफल अब भयो, माताने सुख चूमन लयो।
धन ये वासर घडी सुभाय, माता तुम अब धारे पाय ॥५९३॥
आज धन्य तिथि धन यह वार, आज धन्य मेरो अवतार।
आजहि पुण्यवंत मैं भयो, आजहि कुष्ट रोग मो गयो ॥५९४॥
आजहि गयो कलंक मिटाय, तुम भर देखो नैननि माय।
धन मंदिर यह धन यह देश, माता तुम कीनो परवेश ॥५९५॥

नमस्कार कर ठाडो भयो, ताको चित्त कहूं नहीं गयो।
तब श्रीपाल कहै सुन माय, याकी कथा कहूं समझाय ॥ ५९६॥
यह पहुपाल सुता गुण भरी, महा सुन्दर मैनासुन्दरी।
यह कल्याण रूप नित होय, यह इस जन्म सहाई मोय ॥५९७॥
याही विभव बहुत मो करी, याही कुष्ट व्याध सब हरी।
बहुत बातको कहू वढाय, जो कुछ है सो याही सहाय ॥५९८॥

यह सुन सुन्दर बोली बैन, हूँ स्वामी चरणकी रैण।
बहुत कहा विनउं परकास, हूँ तौहु दासिनकी दास ॥५९९॥
सोये दोष लगै मो येह, मोको जो तुम उपमा देह।
बहुत परस्पर वह बिहसंत, मन वांछत सुख फल भुंजत ॥६००॥

जननी जन सुख पायो घणा, पुण्य फलो देखो तातणो ।
निर्मल वपु देखो सो अभंग, सेवा करैं सातसै अंग ॥६०१॥
याचक जन आवैं दरबार, ते बहु धन पावैं अधिकार ।
गुणीजन पावैं अति सनमान, हय हाटक जन दीजे दान ॥६०२॥
एकै दिनकी कहै बढाव, मनमें उपजो केवल भाव ।
आप आपने कर श्रृङ्गार, जैसे दम्पतीके सुख सार ॥६०३॥
तिस अवसर ते दीसें तिसे, सुर अपछरा राजत जिसे ।
दोउ अति भर आये नेह, पहुंचे जाय जिनेश्वर गेह ॥६०४॥
मुनिवर एक आहि तिंह थान, तप गरिष्ट अरु ज्ञाननिधान ।
ताको नमस्कार कर सार, लागे वह स्तुति करन पसार ॥६०५॥

जयजय मुनिवर गुणही निधान, जयजय करुणासर परधान ।
जय जय अभय दान दातार, जय जय गत भव सागरपार ॥६०६॥
जय जय चरण आचरण धीर, जय जय मोह दलन वर वीर ।
जय जय क्षमावंत सुखधाम, जय जय शिवरमणी गलदाम ॥६०७॥
जय जय सहन परीषह देह, जय जय दश लक्षण गुण गेह ।
जय जय रत्नत्रय व्रत धरण, जयजय बारह विधि तपकरण ॥६०८॥
पणविवि बार बार थुति करी, जाणी सफल वही शुभ घरी ।
नमस्कार कर मन वच काय, दोउ बैठे मन सुख पाय ॥६०९॥
घर पहुपाल राव दुख करै, पुत्र गुण सुमरे गह भरे ।
काहु सों मुख सकै न दिखाय, कबहु सभा न बैठे आय ॥६१०॥
चिंता नृप भोजन परिहरो, महा शोकसागरमें परो ।
रात्रि न सोवै मन पछिताय, भामनी लीनी पास बुलाय ॥६११॥
प्राणवल्लभा सुन वरनार, मैं पाई पंचनमें गार ।
मैं अयुक्त कीनी किम रहूँ, निशि वासर दारुण दुख सहूँ ॥६१२॥

मैं अपराध कियो धर भाव, किम कर मिटै मोह समझाव ।
किमिही सोच मिटत है मोहि, वारवार पूछत हूँ तोहि ॥६१३॥

卐 卐 卐

यह सुन राणा अति दुख कियो, लोचन झरें हियो भर लियो ।
कम्पे अबला महा विलखाय, लागी कहन सुनो हो राय ॥६१४॥
लागे कहा दोष तुम तणो, लारहि फिरे कर्म आपणो ।
लागे कहा तुमै नरनाथ, जो विधि लिखा आपनो हाथ ॥६१५॥
को सामर्थ जु मेटनहार, याको कीजे कहा विचार ।
तुम नृप मति विलखो जिय जोय, विधना करै सो निश्चय होय ॥६१६॥
काहु पै कछु हू न वसाय, इंद्रादिक वम कहि न जाय ।
वार वार भाषे कर जोर, स्वामी तुम्हे न लागै खोर ॥६१७॥

卐 卐 卐

अपने मनको सोच निवार, विधि निर्मयो सके को टार ।
सो नरनाथ जुई यह कर्म, मुनि पूछे विन भजे न मर्म ॥६१८॥
आयस ले उठ ठाढा भई, तब जिनवर चैत्यालय गई ।
देखो तहां महा मुनिराव, नमस्कार कीनो धर भाव ॥६१९॥
बैठी तहां धर्म धर नेह, ताके मनमें अति सन्देह ।
रूपसुन्दरी जिन गुणरात, कछु इक तहां सुनी शुभ वात ॥६२०॥
पुन सो दृष्टि गई चल तहां, श्रीपाल सुन्दर हैं जहां ।
तब सो रही महा मुह चाह, यह दुःख बड़ो सुनाऊं काह ॥६२१॥

卐 卐 卐

महा निरूपम रूप कुमार, मानो आहि दूसरो मार ।
मैनासुन्दरी बैठी पास, देख देख तब लेय उसास ॥६२२॥
सीस धुने मन चिंतै भाव, छाड दियो इन कोढी राव ।
परसों प्रीति करी धर नेह, यह गुणगण निर्मल तन येह ॥६२३॥

मैनासुन्दरी कीनो जिसो, कोउ अवरन कर है तिसो।
या संसारमाहि सुख लियो, यह कुलकोमल कूचों दियो ॥६२४॥
दूषण आणो जिनवर धर्म, हैं हैं यह रचियो है कुकर्म।
मेरी कूख वज्र किन परो, कै यह गर्भ उदर किन गरो ॥६२५॥
कै इन जन्मत ही कि न मरी, पुत्री दुख भाजन अवतरी।
अर यह बात कर्म पर धरी, कुष्टी वर पायो गुण भरी ॥६२६॥
सो तज चली असंजम येह, शील रेण खोयो गुण गेह।
यह मन चिन हियोभर लियो, अतिविलखाय रुदनतह कयो ।६२७॥

ॐ ॐ ॐ

मैना दुख देखा ता तणो, मनमें दुख व्यापो अति घणो।
रोमांचित ह्वै उमगा हियो, माता सों आलम्बन कियो ॥६२८॥
कुँवरा तहां पहुँचा जाय, दोऊ जन बैठे निकुताय।
पुत्री बात कहे समझाय, यह ठां शोक न कीजे माय ॥६२९॥
मनको छाड देहो सन्देह, देख जवांई तेरो येह।
या में कछु न विभ्रम आइ, नीकै कर मन देखो चाह ॥६३०॥
वही पुरुष है जो में जान, माता बात हमारी मान।
पुत्री कहा वियापहि मोहि, यह क्यों कहत पूछिये तोहि ॥६३१॥
कहां लाज गई तो तनी, मिथ्या बात जो मोसो भनी।
पूर्व तैं पश्चिम रवि जाय, तोउ यह न बात पत्याय ॥६३२॥

ॐ ॐ ॐ

कुवर सास से बोलो तबै, राणी यही कहो मत अबै।
धन यह वंश धन तू माय, जाकै घर यह उपजी आय ॥६३३॥
अतिनिर्मल चित्त अति गुणवन्त, शील विशुद्ध निरूपम सन्त।
याके हिये पुण्य परभाव, तातें कोढ गयो निकुताय ॥६३४॥

अरु जे हुते सात सै संग, तिन हूं के तन भए अभंग ।
यह सुन पहुपालकी धणी, मन संतुष्ट भई शुभगणी ॥६३५॥
अति आतुर ह्वै ठाढी भई, सुनि हूं बातन पूछन लई ।
भामनि पीय सो भाषो जाय, मत दुख करो सुनो हो राय ॥६३६॥
कुष्ट व्याधि अरु पीड़ा लयो, सो तो जमाई नीको भयो ।
तासमीप पुत्री देखियो, तह सोसों आलम्बन कियो ॥६३७॥
जिन मंदिरमें बैठा दीठ, मैनासुन्दरीके मन ईठ ।
तासु वचन सुन तूठो राव, राणीको वहु दियो पसाव ॥६३८॥

❀ ❀ ❀

कछुयक मनमें आनंद भयो, कछुयक जियको संशय गयो ।
ताम गयो जिन मंदिर राय, पुत्री लीनी कण्ठ लगाय ॥६३९॥
रोवै दीरध पुण पुण सोय, राजा लजित बहुत तब होय ।
मुँह संकोच गयो कुमिलाय, विहस जवांई भेटो आय ॥६४०॥
लक्षणवन्त सर्व गुण जान, रूपवन्तको करै वखान ।
हर्षवन्त नृप वैठो तहां, दोऊजन वैठे हैं जहां ॥६४१॥
कुवरि उछँग गया सन्ताप, लागै राजा निन्दन आप ।
हूं पुत्री दोषनको धाम, मेरो भयो कलंकी नाम ॥६४२॥
हूं अति अविनयवंत असार, हूं निर्मल वृछ तणो कुठार ।
अर हूं मूढ़ पापको अंक, मैं निर्मल कुल कियो कलंक ॥६४३॥
मैं कुछ बात करी अविचार, आपन दई आपको गार ।
मुखपर चढ़ी कालिमा आय, सब हाँसे मुख रह्यो छिपाय ॥६४४॥
परि हूं आज उजागर भयो, अपजस दोष हमारो गयो ।
तैं सब कुल कलंक मेटियो, तैं मो मुख अब उज्वल कियो ॥६४५॥

अपनी निन्दा कीनी राय, पुत्री पूछी कारण काय।
किह विध कुष्ट रोग तन गयो, श्रीपाल किम नीको भयो ॥६४६॥
तब सुन सुन्दरि भाष्यो तिसौ, विविध प्रकार कर्म फल जिसो।
सुनिकैं हर्षवंत भयो राव, अति आनन्द भयो चित्त चाव ॥६४७॥
कछुयक ताको मन पत्याय, तो हूं मनकी गुढ़ी न जाय।
मुनिवर तिह थानक पेषियो, हर्षित नमस्कार तिह कियो ॥६४८॥
स्वामी मो मन संशय मानि, यह कैसे फलो कहो वखान।
करुणाकर मुनि भाषै येह, भो राजा मत करि सन्देह ॥६४९॥

महा गरिष्ठ लोकमें सार, सिद्धचक्र भव तारणहार।
तेरी सुना आठ दिन कियो, मूलमन्त्र जपकैं पूजियो ॥६५०॥
भर अंजलि गन्धोदक लियो, अपने पियको तन छिडकियो।
और जुकुते सातसै संग, तेहूं छिडके कीये अभंग ॥६५१॥
और जु व्यथा रोग कर गये, तेऊ सब नीके भये।
श्रीपाल अति सुन्दर भयो, यह व्रत याहि तुरत फल दियो ॥६५२॥
जो नर जान महा तप करै, महा दुःख तजिमो उद्धरै।
यह सुन राय व्रत सोचरो, मन सन्देह दूर सब करो ॥६५३॥
मन वच काय धर शुद्ध भाव, मुनिको नमस्कार कर राव।
फुनि तब कियो महोछो सार, बहु बाजे वाजित्र अपार ॥६५४॥
बहुत विनय कीनो समझाय, दोनों घरको गये लिवाय।
दोऊ कंचन कलश नलहाय, एकासन बैठे विहसाय ॥६५५॥
वस्त्राभरण शोभित बहु लियो, दो कर जोर पुत्रीको दियो।
तबैं जमाई सो नृप चयो, मैं तुम योग्य महा दुख दयो ॥६५६॥
मो तैं कछू न सेवा भई, यह कन्या सेवाको दई।
यह जु दिढायो अपनो कर्म, विधना राखो याको धर्म ॥६५७॥

धन्य मैनासुन्दरी अवतार, जिह पायो तोसो भरतार।
अब तुम कुमर राज यह करो, सिर पर छत्र मनोहर धरो ॥६५८॥
बैठो सिंहासन पर धीर, विभवो सुख भुंजो वरवीर।
मोकूं जो तुम आयस देहु, सोई करूं बात सुण लेहु ॥६५९॥
कीजे दया बात यह मान, हम सों करो फेर पहिचान।

सुन श्रीपाल कहे करजोर, भो प्रभु या मत कहो बहोर ॥६६०॥
मैं तो वही पुरुष हूं देव, हूं सब ही विधि चूको सेव।
तुम हमको कीनो उपकार, कछु यन मनमें कियो विचार ॥६६१॥
कन्या दीनी सुखको कन्द, जातैं भयो सकल आनन्द।
या प्रसाद दारुण दुःख गयो, अरु सब ही विधि निर्मल भयो ॥६६२॥
मैं तो हूं दासनको दास, सेउ अजहू चरण निवास।
कछु टहल मो दीजे इसी, मोतैं होत जानत है तिसी ॥६६३॥
सोई करूं न लाऊं वार, आप सदा तिष्ठो दरबार।

ऐसी सुन आनन्दो राव, शीघ्र तासको दियो पसाव ॥६६४॥
धन अटूट दीनो भण्डार, अवर देश बहु दिये अपार।
आप साथ भोजन असनान, नरपति करवावै दिन मान ॥६६५॥
आदर महिमा बहुत करेय, आंखों अन्तर होन न देय।
ऐसे श्रीपाल सुख रहै, सोई करे जो सुन्दरी कहै ॥६६६॥
समकित चित यह पाले धर्म, दयावन्त पेखो सब कर्म।
अर्जिका मुनि जन दीजे दान, सब हीको राखै सनमान ॥६६७॥
वित्त दान जाचकजन देइ, दुखित दीन दारिद्र हरेइ।
विलसै विभव भोग बहुरंग, भुगतै मैंन जिसो रति संग ॥६६८॥
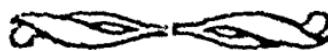
११-उज्जैनीसे श्रीपालका गमन

चौपाई ।

वासर बहुत गये सुख बीती, एकै दिन दम्पती अति प्रीति ।
सुरत संग वर्छो वह साय, दुहूने बदन रहे हरषाय ॥६६९॥
ऐसे रहत आध निश गई, श्रीपालको चिन्ता भई ।
उचटा निद्रा दुःख अतिभयो, तन मुरझाय विलख ह्वै गयो ॥६७०॥
देखत मैना कंपो देह, विनयवन्त पूछे गुण गेह ।
अरू बालमके पकरे पाय, स्वामी कहो बात समझाय ॥६७१॥
मोसों कहो आप व्योहार, सोवत नाहीं कवन विचार ।
मनमें आय बसी है जिसी, मोसें बात पयासो तिसी ॥६७२॥
कै नृपने कछु बुरो बोलियो, तातें भयो मलिन तुम हियो ।
कै निजपट्टण करण्यो आय, कै किस लीनों चित्त चुराय ॥६७३॥
कै कहूं चित्त अनन्त ही वसे, तहां जावेको चित्त उलहसे ।
सिद्धचक्र विसरया तुम जोग, कै काहूको भयो वियोग ॥६७४॥
सो कारण पिय कहो विचार, अपने मनको शोक निवार ।
तुम मेरे प्राणन आधार, मासों भेद कहो इकवार ॥६७५॥

श्रीपाल तब कहै कुमार, शशिवदनी मत करा विचार ।
तेरो मलिन होयगो हियो, मम चित चिंता सो व्यापियो ॥६७६॥
तातैं कह न सकूं नहीं तोह, वार वार मति पूछै मोह ।
तब भाषै सुन्दरि सुन नाथ, चित्त हमारो तेरै साथ ॥६७७॥
जो तुम हिये विचारो ज्ञान, मेरे तो सोई परमान ।
पीय आयस जो चलि है टार, धृग सो वंश धृग वह नार ॥६७८॥
तब बोली यों सुनवर नार, गुप्त बात है देख विचार ।
जैसे राना सुणे न येह, त्यों राखियो मूढ़ गुण रेह ॥६७९॥

राज देश त्रिय कछू न चित्त, हिये अन्देसो व्यापो नित्त।
याचक जन भाषैं धरि मान, ससुर नाम ले कहें वखान ॥६८०॥

तातें लाज होय दुःख लहुं, ऐसी बात कौणसो कहुं।
मेरे पिता नाम छिप गयो, यह सन्ताप माहि अति भयो ॥६८१॥
जीवन जन्म वृथा सब येह, पिता नाम कोउ पढे न गेह।
देश गांव कुल कहें न कोय, तातें महादुःख मो होय ॥६८२॥

सुन्दरी कहे सत्य यह कही, मोह बात रुची यह सही।
रहे सासरे तुमको लाज, कित दुख देखत होवे काज ॥६८३॥
एक जो रहे वहणके वीर, आयुध विना लरे जो धीर।
धन विन दान देन जो कहै, अरु जो जाय सासरे रहे ॥६८४॥
हंसा वसे पोखरि जाय, केहरि वसे नगरमें आय।
सतीतनो मन विकल्प रहे, सूरवन्त भज्येको कहे ॥६८५॥
बोलै काग अम्बकी डार, मान सरोवर वगुला डार।
कुञ्जर सिंहवन माहि वसे, अरु जो परकामनी सो हसे ॥६८६॥
मूरख कहे जु महापुराण, कुलभामनि जो मेटहि आण।
इतने जन शोभा नहीं लहें, ऐसे वड़े सयाने कहें ॥६८७॥
तुम हूं भली विचारी कन्त, होती तोय विगुचण अन्त।
यातें चतुरङ्ग दल संग लेहु, चालो अपनो राज करेहु ॥६८८॥
कुमर भणे भामनि जिय जोय, मांग लिये दल राज न होय।
मैं त्रिय हूं जाऊं परदेश, तुम घर भुगतो सुक्ख असेश ॥६८९॥

महीपर प्रकट जगत जस लेहु, दुखी दलिद्री वहु धन देहु।
अजिका मुनि जन दीज्यो दान, कछु सोच मत कर दिढ ज्ञान ॥६९०॥

सासू सेव करो विहसन्त, अरु जिन वन्दन करो निरन्त ।
गुर सेवा कीजिये विचार, भूल अलीक न बोले नार ॥६९१॥
सुन्दरी कहे स्वामी कहो मोहि, कब आगमण वंछु तोहि ।
वेग बात पिय भाषो मोय, जैसे मेरो थिर मन होय ॥६९२॥
कुँवर ही उत्तर दियो तबैं, बारा बरस बीते हैं जबैं ।
अष्टमी दिनको कहे वखाण, भो सुन्दरी तोहि मिलहूं आण ॥६९३॥

दोहा ।

बारा पल सुन्दरी कहे, जा दर्शन विन जांय ।
पल पल तरफे रैंन दिन, लोचन दुःख लहाय ॥६९४॥

अडिल्ल छन्द ।

फेर कहूँ पिय बात करण देके सुनो,
मैं पर करूँ विचार आपणे जिय गुणो ।
हांसी सी है बात सांच कर जाणिये,
तौलों सौपूं प्राण प्रीत पहचानिये ॥६९५॥
हो तुम कन्त सुजान बहुर मति यूं कहो,
मति सुखमें दुख कामशर मत वहो ।
जो चलहो अकुलाय आपने रंग ही,
हे पिय तो मेरे प्राण जाहु ले संग ही ॥६९६॥

चौपाई ।

क्यों मन राखो छाड़ो नेह, यह तो भयो बहुत सन्देह ।
मोह प्रगट है मेरे अंग, दिन दिन बढ़ो नाथ तुम संग ॥६९७॥
बालक ते तरुणापन गहयो, रोम रोम तनमें रम गयो ।
मोह न मोपै छाड़ो जाय, किम कर चलण कहो अकुलाय ॥६९८॥
तब जंपय अरिदवण कुमार, मोह शल्लगति छेदनहार ।
मोह मते कछु होय न रिद्धि, मोह विनासे केवल सिद्धि ॥६९९॥

मोह मते भवमें दुख सहे, मोह तें जीव सुख नहीं लहे।
मोह मते प्राणी जड़ कूर, मोह जु सर्व पापको मूर ॥७००॥
ऐसो मोह छाड गुण रेह, हरषवन्त होय आयस देह।
उद्यम करुं लोकमें सार, उद्यम सब ही सुख दातार ॥७०१॥

अरु उद्यम बिन कछु न जन्म, उद्यम विना करे कहा कर्म।
उद्यम बिन नर बहु दुख लहे, उद्यम बिन दारिद्र हि दहे ॥७०२॥
उद्यम बिन जो बैठो खाय, पहलो हू धन वाको जाय।
उद्यम विना न होवे मान, उद्यम है सब तें परधान ॥७०३॥
बहुत बातको कहे विचार, उद्यम है दूजो करतार।
तातें मैं उद्यम जिय धरो, चलो परदेश सुख परहरो ॥७०४॥

यह सुन त्रिय छाडो अति गाह, स्वामी यह कीजिये निवाह।
मन वच काय पंच परमीठ, तीनकाल मत भूलो ईठ ॥७०५॥

सिद्धचक्र व्रत मत विसराव, मत भूलो पूजा जिनराव।
निज जननी भूलो मत देव, आप मित्र मत भूलो सेव ॥७०६॥
जिनदेव मत विसरो ज्ञान, मत विषरो गुरु वचन पिछान।
मिथ्याती मत करो विश्वास, अरु जो होय पहार है वास ॥७०७॥
षोडश वरष चढ़ी परवान, अति सुन्दर अति परम सुजान।
चंचलनयन सयानी खरी, जे पर चित्त हरे सुन्दरी ॥७०८॥
तिन विश्वास मत प्राणअधार, अन दीयो धन तजो अपार।
बार बार सुन्दरी यों भनो, कीजो सुरत इस दासी तनी ॥७०९॥
राज सुता है चंचल चित्त, तिन्हे देख मत भूलो मित्त।
कपट रूप डोलत है दून, नाना भेष धरे अवधूत ॥७१०॥

तिन तिन भूल दृष्टि मत करो, मिथ्यादेव भाव मत धरो ।
मेरो वचन लेहु अतिमान, छाडो मत निज कुलकी वान ॥७११॥

जो नहिं ता दिन आवो कन्त, तो जिनदीक्षा लेहु तुरन्त ।
कै मोको आर्यक व्रत शरण, कर्म दुःख नाशन भवतरण ॥७१२॥

ॐ ॐ ॐ

श्रीपाल बोलो तिह काल, पुन पुन वात न कहिये बाल ।
जो मैं तोहि परस्पर कही, सोही बात होइगी सही ॥७१३॥

यह कह गमन कियो वरवीर, कामन व्याकुल हुई शरीर ।
लोचन भरे चित्त उमगहो, मन गाढ़ो कर अंचल गहो ॥७१४॥

अहो प्राणवल्लभ कित जात, सांची कहो अपनी बात ।
कै तुम मोसों हांसी करो, कै यह बात सांच उचरो ॥७१५॥

अडिल छन्द ।

या बूझिये न तोहि सु बात विचारकै,
बालम चले विदेश मैं न शरमारकै ।
बढ है पीर शरीर कौनसें भाषहुं,
प्राण पयाणो करत कौन विधि राखहुं ॥७१६॥

चौपाई ।

बालम यह बूझिये न तोह, चले विदेश छांड कर मोह ।
विरहानल तनमें जब दहे, दासी तुमरी कासो कहे ॥७१७॥

तब कोटीभट उठो रिसाय, भामनको सुभाव किम जाय ।
चलत विदेश जुकरहु अनीत, यह तुम्हारे कुलकी रीत ॥७१८॥

सुन सुन्दरी हियो भर लियो, अश्रुपात होय विलखो कियो ।
आज ही मैं विसरी पिय तोह, कर्कश वचन सुनाए मोह ॥७१९॥

ॐ ॐ ॐ

कुमर वचन सुन भाखे तबे, अवलोको सुन्दरि मुख जबे ।
मैं तोसो कछु कहो न नार, प्राणवल्लभा देख विचार ॥७२०॥
अरु तू भामन परम सुजान, शील धुरन्धर गुण है निधान ।
तो सम त्रिया दूजो नहि कोय, देख सुलक्षण जियमें जोय ॥७२१॥
जो त्रिय अंचल पकरे आय, असुगुन होय कहूं समझाय ।
तातें यह वचन मैं कहो, भामनतैं मनमें दुःख लहो ॥७२२॥
तू मत वाला विसरे मोह, मैं अपनो मन सौंपो तोह ।
इन नैनन मो मैं परखियो, नख शिख रूप विधाता दियो ॥७२३॥
चित्त चितेरे उद्यम कियो, तेरो रूप हिये लिख लियो ।
अरु विधिसो कछु नहि वसाय, ताते चलो तोहि छिटकाय ॥७२४॥

दोहा ।

मन वच काय विशुद्ध त्रिय, कहो न तोसों राख ।
बोलो बोल निबाह हुं, सिद्धचक्र व्रत साख ॥७२५॥
सुन्दरि तबै प्रतीति कर, हठ छाडियो निदान ।
बहुर कहा पिय अब चलो, सिद्धचक्रकी आन ॥७२६॥

श्रीपाल उवाच ।

सोरठा ।

सो हूं परम सुजान, सुन सुन्दरी गुण आगरी ।
अब ही करुं पयान, तेरो बोल न खंडि हो ॥७२७॥

चौपाई ।

अजुगत वचन नार जब कहा, दांत जीभ दे स्वामी रहो ।
दुचितो हुं जननी पै गयो, पणविवि पाय लागि बीनयो ॥७२८॥
स्वामनी मा पर कीजे नेह, चलो विदेशहि आयस देह ।
मत संदेह करो कछु मात, तुम सो कहूं सियानी बात ॥७२९॥

ऐसी सुणके मूरछ गई, छोटी नीर जु बैठी भई ।
माता हाय हाय उच्चरे, लेय उसास रुदन सो करे ।।७३०।।
अचरज हूं वचन तिह कह्यो, तेरो चित भलो ही चह्यो ।
मनमें समझ देख सुकुमाल, बहुरो यामत कहो गुणाल ।।७३१।।
पुण्यवंत मन हरण सुजान, निजकुल कमल प्रफुल्लत भान ।
कुमति हरण सुबुद्धिनिवास, निशिवासर जिन धर्म निशास ।।७३२।।
मुनिजन वंदन सहज सुभाव, दुःख वचन मत मोहि सुनाव ।
तेरे पिता प्रथम दुख दयो, देखत तोहे विसर सो गया ।।७३३।।

࿇ ࿇ ࿇

कुष्टव्याधि जब वधी अपार, हू अकेली तजी कुमार ।
निकस गयो तव सुध न लही, तब तैं मैं तेरे दुख दही ।।७३४।।
कठिन कठिन तू देखो नैन, अब तैं बुरे सुनाये वैन ।
तोह मिले बिन मन नहीं रहे, बारबार माता यों कहे ।।७३५।।
तो पेखत संतोखे नैन, कर्ण संतुष्टे सुनते वैन ।
तो पेखत मनको दुख जाय, तो पेखत मो सभी सुहाय ।।७३६।।
तो पेखत मैं छाडा सोग, किम कर तासों करो वियोग ।
साची कहूं बात सुन एह, मोह मार पग आगे देह ।।७३७।।

कोटीभट्ट उवाच

कायर हृदय होय मतमाय, सुण तू बात कहुं समझाय ।
रहत सासरे बहु दिन गए, मेरे सूल हियामें भये ।।७३८।।
राजा बहुत करे सनमान, जाचक जन ही देऊ दान ।
पिता नाम कोउ नहीं कहे, महादुःख मेरे मन रहे ।।७३९।।
कोउ न जाने कुलकी रीत, ऐसे दिवस गए बहु बीत ।
अब मोहे पास रहियो नहीं जाय, मनसा बहु उमगी मेरी माय ।।७४०।।

࿇ ࿇ ࿇

हूं निजको अब चलूं विदेश, भुजबल दल धन करो असेश।
बारा बरष जांय सब काज, जननी आए करूँगो राज ॥७४१॥
तुम तो जपो श्रीजिनराउ, तिहुंकाल शुद्ध कर भाउ।
अरु चहुसंघ ही दीजे दान, जो दुर्गति हर सुख निधान ॥७४२॥
सेवा मैनासुन्दरी पास, करवावो शुभ वचन पयास।
अरु जे अंग सातवें मित्त, तिनको आदर कीजो नित्त ॥७४३॥
मैं गच्छूं आयस दे मोहि, मोह मते कायर मत होहि।
दीन्हों सिद्धचक्रकी आण, मैनासुन्दरी परम सुजाण ॥७४४॥
तातें मपै रह्यो न जाय, अब हौं चलूं माए छिटकाय।
माता चलत जाणियो तबै, लागी कहन संदेशा तबै ॥७४५॥

सुणो पुत्र ताके मन लाय, शिक्षा भली कहूं समझाय।
मत विश्वास अपणो जिय जोय, जा कोऊ पाखण्डी होय। ७४६॥
जो दण्डी दम्भी अधिकार, अरु जो बहु बोले हो लबार।
परधन परत्रिय इच्छा रहे, अर जो जूआ खेलण चहे ॥७४७॥
अरु जो सुरापान आचरे, अर जो नानही कारण लरे।
अरजो आमिष भखे विरंग, ताके सुत लागो मति संग ॥७४८॥
मत विसहरसोंमांडो रार, काहूको नहीं दीजो गार।
जल ठग चोर और कुनार, कृपण धीठ अरु तजो लबार ॥७४९॥
नख दृढ राखें जे विकराल, इनसों प्रीति मत करो कुमार।
पंखीकी भाषा मत हणो, पर अवगुण मत मनमें गुणो ॥७५०॥
जिनको पर घरा है वास, तिनको सुनमत करो विश्वास।
कंजनैन नर हैं जो कौन, अर हे कुब्ज जटाधर मौन ॥७५१॥

लहरी ग्रीवा विसयर दन्त, मारगमें खल दुष्ट अनन्त।
डायण सायण दासी घणी, मत विश्वासो वेश्याकुटणी ॥७५२॥

अन दीयो मत लीजो वित्त, परदारा मत लावो चित्त।
तुमसे बड़ी नार जो होय, मात बराबर गनियो सोय ॥७५३॥
होय त्रिया जो आप समान, ताहि जानियो बहन प्रमान।
जा कामन तुमसे लहु आइ, पुत्रीसम तुम गिनियो ताइ ॥७५४॥
रहियो जिन भक्ति संजुत, लछमीबल मति गरवो पुत।
निजगुरु वचन तजो मत चित्त, सर्व जीवसम भाव ही नित्त ॥७५५॥
गुणियनको बहु धरियो मान, दुःखी जनन हि दीजो दान।
बहुत वातको कहुं सुजान, चलियो व्रत संयम परमान ॥७५६॥

दोहा।

जननी भाषो परस्पर, मनमें मोह असेस।
हिये सिद्धव्रत राखियो, मैं यूं कहो सन्देस ॥७५७॥

चौपाई।

लीजो कुवर वचन ए मान, मैं तोसों जे कहे बखान।
कोहू मत भूलो वरवीर, शुद्ध राखिया साहस धीर ॥७५८॥

दोहा।

श्री वढे जो अतुल बल, शरीर सहे परनेह।
चतुरंग दलको संग ले, आइयो सुत निज गेह ॥७५९॥

टह अमास जननी कही; मनमें धर अनुराग।
मुख चूंवु जब आई हो, तब ही मेरो भाग ॥७६०॥

धन्य मुहूर्त धन्य घड़ी, धन्य सुवासर आइ।
जा दिन तेरो वदन मैं, नयनन देखूं चाह ॥७६१॥

चौपाई।

दही दूब अछत सिर धरे, रोचन तिलक निवाछन करे।
अंग अंग हर्षित अति भए, झलहलन्त लोचन भर लए ॥७६२॥
घाय मूकी शुभदी तिहवार, राखी तब श्रीपाल कुमार।
विविध चरण कमलको नयो, माता तिह मुख चूमन लयो ॥७६३॥
वीर राति ही पचिम जाम, खाई साथ नाखियो ताम।
चन्द्रहास दक्षण कर खरगा, जातैं त्रास लहैं अरिवर्गा ॥७६४॥
सिरपर शशिमण्डल समान, लयो चमर कर राखन प्रान।
निर्भय तन मनमें विहसंत, छाडी माता रुदन करन्त ॥७६५॥

छाडी प्राणपियारी नार, सिद्धचक्रकी आन संभार।
भेटे नहीं सातसै अंग, एको मीत न लीनो संग ॥७६६॥
भेटो नहीं राव पहुपाल, छाड मोह गाछियो गुणाल।
वन उपवन गिरि नाखत जाय, परसत महा मुनिन्द्रह पाय ॥७६७॥
एकै पाय पंथ पग धरे. प्रेरा कर्म कहा नहि करे।
कर्म प्रेरत सूर हि आय, पूर्वसे पछिम चल जाय ॥७६८॥
कर्म ही प्रेरत शशि छवि चढे, तातें कला घटे अरु बढे।
कर्म हि प्रेरो कीनो सोग, राम हि साता पडो वियोग ॥७६९॥
कर्म हि प्रेरो किया अकाज, रावनको बूडो कुल राज।
कर्म जीवको प्रेरो फिरे, पुन पुन जन्मे पुन पुन मरे ॥७७०॥
कर्म कथा कछु कही न जाय, सुर असुर नर ढंढे गाय।
श्रीपाल सो और ही भेस, तजत चलो पुरपट्टण देस ॥७७१॥
पर्वत दुर्ग नदी नाखन्त, सरवर वनमें केल करन्त।
पाय पयादो और न संग, रूपचन्द देखियो अभंग ॥७७२॥
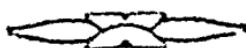
१२-श्रीपालद्वारा विद्याधरको विद्या साध देना

हर्षित कोटिभट गयो तहां, वत्स नगर इक शोभे जहां।
पूरण धनकन रिद्ध अपार, मन्दिर अति उतंग तहां सार ॥७७३॥
कनक कलश तिन द्वार दिपन्त, कुल छत्तीस बसे धनवन्त।
ताहि देख रञ्जो वर वीर, फूल गया तातणो शरीर ।।७७४॥
ता आगे नन्दन वन आह, कुसुम पुञ्ज देखे तहां चाह।
अरुण अरुण द्रुम नवरितु अंग, अमृत वाणी चवें विहंग ॥७७५॥
अति रमणीक मनोहर साई, जा देख तिम भूषन होई।
अवलोकित मन राग उपन्न, चम्पक धन देखियो रुवन्न ॥७७६॥
तातरु तल इक देखा वीर, भयो क्लेश कर क्षीण शरीर।
वस्त्राभूषण मंडो सोय, जपे मन्त्र ता सिद्ध न होय ॥७७७।
अति शोचित अरु सुख कुमिलान, सो पूछो श्रीपाल सुजान।
कहा मन्त्र ध्यावत हो मित्त, छिनछिन चपल होत है चित्त ॥७७८

❀ ❀ ❀

सुनत वचन सो औचक पड़ो, देख रूपता आदर करो।
सम्यक भाव हियेमें धरो, द्वै कर जोर वचन उच्चरो ॥७७९॥
विद्या मंत्र मोहगुरु दियो, सो ईठे हम जम्पन लियो।
चञ्चल चित्त न मो थिर रहे, सांझे मंत्र न विद्या लहे ॥७८०॥
बहुत शील तुम होय कुमार, तू यह विद्या साध अवार।
तासो शत्रु वचन सुन कहे, उपकारी नर शोभा लहे ॥७८१॥
रत्नोंसे कंचन छवि देय, साधु जो सोई क्षमा करेय।
वैरागी सो हिये मुनीन्द, सुरभातमो हिए जिनन्द ॥७८२॥
बहुत सेन से सो है राय, सोहै श्रीवक दया कराय।
सोहै बालक मांडे आर, सो है शीलवन्त जो नार ।७८३॥

पंडित सोहे पढ़े पुराण, द्रव्यसो है जो दीजे दान।
सरवर सोहे पंकज वार, सूरह सोहै लरै पछार ॥७८४॥
वरकुंजर सोहे दल मांह, सोहै द्रुम अति शीतल छाह।
कररो बात सोहरा दूत, सोहे कुल जो होइ सुपूत ॥७८५॥
त्यों उपकारे सोहे धीर, जाको निरभय होय शरीर।
हम तो चले पन्थ अब जात, जाणें कहा मंत्रकी बात ॥७८६॥
यह सुण वीर विलख हो गयो, दुय कर जोर बहुर वीनयो।
सुन स्वामी हूँ भाखो तोह, निरभय दान देउ तू मोह ॥७८७॥
बहुत बातको कहे बढाय, मेरे भाग न पहुँचे आय।
स्वस्थ चित्त वैठो मन साध, एक वार देखो आराध ॥७८८॥
मर्म भेद सब दीनो तुझ, विद्या सिद्ध होय गुर मुझ।
तुम तो आहि दयालु कुमार, और कहा कहिये अधिकार ॥७८९॥
जपो मंत्र मनि लाख्या वार, जिम गुरु उपदेशो शुभसार।
निश्चल मन कर वैठो आप, मनको छाड देहु सन्ताप ॥७९०॥
जवे होय है कारज सिद्ध, कौन भांत प्रगटे तो रिद्ध।
विधि व्योहार देख सब जात, बहुत कही तुम सों पछतात ॥७९१॥
यह विध दीन वचन जब चयो, क्रियावन्त कोटीभट भयो।
तुरन्त मन्त्र तापै तैं लियो, मन वच काय अचलते कियो ॥७९२॥
धरो ध्यान निरभय तन मांह, राग रोस विभ्रम सब छांड।
विद्यासाधन लागो राय, मन वच काय अचल टहराय ॥७९३॥
शुद्ध भाव नीके ध्यावंत, एक रात दिन गयो तुरन्त।
विद्या साधी मन वच काय, फुरि ताहि शोभित अधिकाय ॥७९४॥
विद्या गुण सीझो सुप्रसन्न, नाना गुण जिह मांहीं रवन्न।
देखत वीर उठो अकुलाय, कोटीभटके पकरे पाद ॥७९५॥

धन्य धन्य साहस वरवीर, निरभय तन भय भंजन धीर।
जाउं गेह मोहे आयस देह, विद्यागण सगरो तुम लेह ॥७९६॥
मनमें बहुत गयो मुरझाय, मुह कर बात कहे विहसाय।
तब कोटभट कहे विचार, विद्याधर यह बात संभार ॥७९७॥
वाट जात मैं उद्यम कियो, अरु मैं हूं निज परखो हियो।
या में कौन कियो मैं काज, लै आपणो विद्यागुण साज ॥७९८॥
पर सुत होय सपूती माय, अन्तकाल मनमें पछताय।
यह कह विद्यागुण सब दयो, आपण न्यारो ठाढो भयो ॥७९९॥
तुम प्रभु बहुत कियो उपकार, तो सम को है और उदार।
महिमा असम कहां लौं भणू, हूं सेवक स्वामी तुम तणूं ॥८००॥

卐　　卐　　卐

विद्या भली भली तुम लेहु, अपने हाथ कछु मो देहु।
तुम सों बात कहूं सतभाव, इतनों मोमें कहा समाव ॥८०१॥
दास याग जाने गुण जितो, दीजे क्रिपावन्त है तितो।
श्रीपाल बोलो चित चाह, यामें मेरो कछु न आह ॥८०२॥

१३–विद्याधर द्वारा श्रीपालको जलतारणी शत्रुनिवारणी दो विद्या देना

विद्याधर दोनों कर जोर, कहत भयो स्वामी सुन मोर।
एक युगल ये विद्या लेव, इनको मन तुम फेरो देव ॥८०३॥
शत्रुनिवारण जलतारणी, द्वय विद्या दे अस्तुति भणी।
पुन सो अपने घर ले गयो, पञ्चामृत बहुत भोजन दयो ॥८०४॥
पुन विद्याधर पकरे पाय, सुन हु बात रायनके राय।
दूजे देव आपने भेष, कछु दिवस विरमो यह देस ॥८०५॥
दास भयो मैं सेवा करूँ, तरण कहे क्यों ही उपगरूँ।
यह सुन कुंवर कहो हरषाय, हम जावें इत ठहरत नाय ॥८०६॥
कोटीभट चलियो सुख पाय, विद्याधर आयो पहुंचाय।
चौथी संधि यह वरणई, मूल देख भाषा कर दई ॥८०७॥

छन्द त्रिभङ्गी।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम्।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लरतनम्।
उद्यम मन धरियं सुखपरहरियं, आशावश परदेशगयम् ॥८०८॥
साहस मन राखो दीनन भाखो, अवर न कोई संग लयं।
वन धन निवसन्तो गिर लाखन्तो, वत्स नगर वनमें वसयं ॥
विद्यागुण पायो मनहु न लायो, है उदार उपकार कियम्!
विद्याधर धायो सुयश पायो, सेवक कर आगे चलियम् ॥८०९॥

इति चतुर्थसंधिः समाप्तः।

धन्य धन्य साहब वरवीर, निरभय तन भय भंजन धीर ।
जाउं गेह मोहे आयस देह, विद्यागण सगरो तुम लेह ॥७९६॥
मनमें बहुत गयो मुरझाय, मुह कर बात कहे विहसाय ।
तब कोटभट कहे विचार, विद्याधर यह बात संभार ॥७९७॥
वाट जात मैं उद्यम कियो, अरु मैं हूं निज परखो हियो ।
या मैं कौन कियो मैं काज, ले आपणो विद्यागुण साज ॥७९८॥
पर सुत होय सपूती माय, अन्तकाल मनमें पछताय ।
यह कह विद्यागुण सब दयो, आपण न्यारो ठाढो भयो ॥७९९॥
तुम प्रभु बहुत कियो उपकार, तो सम को है और उदार ।
महिमा असम कहां लौं भणू, हूं सेवक स्वामी तुम तणू ॥८००॥

विद्या भली भली तुम लेहु, अपने हाथ कछु मो देहु ।
तुम सों बात कहूं सतभाव, इतनों मोमें कहा समाव ॥८०१॥
दास याग जाने गुण जितो, दीजे क्रिपावन्त है तितो ।
श्रीपाल बोलो चित चाह, यामें मेरो कछु न आह ॥८०२॥

१३-विद्याधर द्वारा श्रीपालको जलतारणी शस्त्रनिवारणी दो विद्या देना

विद्याधर दोनों कर जोर, कहत भयो स्वामी सुन मोर।
एक युगल ये विद्या लेव, इनको मन तुम फेरो देव ॥८०३॥
शस्त्रनिवारण जलतारणी, द्वय विद्या दे अस्तुति भणी।
पुन सो अपने घर ले गयो, पक्वान्न बहुत भोजन दयो ॥८०४॥
पुन विद्याधर पकरे पाय, सुन इक बात रायनके राय।
दूजे देव आपने भेष, कछु दिवस विरमो यह देस ॥८०५॥
दास भयो मैं सेवा करूँ, शरण रहे क्यों ही उपगरूँ।
यह सुन कुवर कहो हरषाय, हम जावें इत ठहरत नाय ॥८०६॥
कोटीभट चलियो सुख पाय, विद्याधर आयो पहुंचाय।
चौथी संधि यह वरणई, मूल देख भाषा कर दई ॥८०७॥

छन्द त्रिभङ्गी।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम्।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लकृतम्।
उद्यम मन धरियं दुखपरहरियं, आशावश परदेशगयम् ॥८०८॥
साहस मन राखो दीनन भाखो, अवर न कोई संग लयं।
वन घन निवसन्तो गिर नाखन्तो, वत्स नगर वनमें वसयं ॥
विद्यागुण पायो मनहु न लायो, है उदास उपकार कियम्!
विद्याधर धायो सुयश पायो, सेवक कर आगे चलियम् ॥८०९॥

इति चतुर्थसंधिः समाप्तः।

चौपाई ।

आगे चलो महा वरवीर, नाखत बन उपवन धर धीर ।
तिन मन कीनो भ्रमर समान, तजत चलो पुरपट्टण थान ॥८१०॥
चलत चलत सो पहुंचो तहां, भृगुकच्छपुर पट्टण है जहां ।
सो तो आहि सुरलोक विशेष, मोहैं अमर खचर जा देख ॥८११॥
रत्नाकर ता निकट हि बहे, महा मनोहर दुःखको दहे ।
महाराज तहां राज कराय, ताकी महिमा कही न जाय ॥८१२॥
श्रीपाल ता मध्य हि आय, कंचन हाटन बैठो जाय ।
तहां सो विद्याजुगल संभार, दोऊँ भुजन राखियो विचार ॥८१३॥
घडी दोय तिह थान वसन्त, बहुरो विहसत उठो तुरन्त ।
पुरकी शोभा देखत जाय, वन्दत जिनमन्दिर जिन पाय ॥८१४॥
सिद्धचक्र भूले नहि ताहि, भंजन करे कर्म रज गाहि ।
पुन उतंग गार देखे जान, ता ऊपर जिनवरके थान ॥८१५॥
देखत ही मनमें हर्षियो, तहां जायके वह परसियो ।
बहुत बातको कहे बढाय, मनमें उपजो केवल भाय ॥८१६॥

दोहा ।

उपवन देखे दुःख गयो, रहो तहां सुख पाय ।
सघन कदम्ब छाय तरु, शयन कियो अकुताय ॥८१७॥

१४-धवलसेठका वर्णन

चौपाई।

यह तो कथा रही यह ठौर, भवियन सुनो कथा अब और।
कवि परिमल्ल कहे मन भाय, कौशांबीपुर सुबस बसाय ॥८१८॥
तहां राय रथवाहन जान, ताके धवलसेठ परधान।
तिह व्योपारी उद्यम कियो, वणजारे तब तिह बोलियो ॥८१९॥
अति विचित्र मन्त्री सरवेग, पोहण लाद लिये तह संग।
बहुत द्रव्यको गिणती करे, महापंच से प्रोहण भरे ॥८२०॥
वणिवर रंजे चित्त अपार, योधा लीने आठ हजार।
वैरी दल जे शंक न धरें, अर आयुध छत्तीसह लरें ॥८२१॥
इंधन पाणी अन्न जु भरो, सामा बरस बाराको करो।
बाजे तहां बाजित्र अपार, भेरे मृदंग तूर सहनार ॥८२२॥

जलजन्तह जब पूजा करी, देखो शुद्ध महूरत घरी।
दही दूब तिल तेल जु लियो, चन्दन वन्दन सो चरचियो ॥८२३॥
पूजे तहां जलदेव अनन्त, धवलसेठ तब चलो तुरन्त।
लहर झकोरन पहुंचो तहां, भृगुकच्छपुर पट्टण जहां ॥८२४॥
एक महाद्रह निकसो आय, परे परोहण तामें जाय।
वणिवर योधा खेवट जिते, हांक देह अरु पेलें तिते ॥८२५॥
सब मिल तहां रहे पचिहार, चले नहीं जलजन्तु संभार।
अरु तहां मंद पवन हु वहाय, सायर नीर रहो ठहराय ॥८२६॥
जिम ध्रुवतारो अचल रहाय, विन दीने जिम यश न चलाय।
विन पवने तरु हले न जिसो, रहे थाक सब प्रोहण तिसो ॥८२७॥

धवल सचिन्त भयो जिय तबैं, ताइ पेख बिनवे ते सबैं ।
कर मांडें अरु बिसुरें चित्त, कारण कौन थके जलजन्त ॥८२८॥
धवलसेठ उतरो तिहवार, आपन गयो नगरमें सार ।
लखराय ता गयो शरीर, तहां एक पूछो वर वीर ॥८२९॥
सब गुण विद्या पढो अपार, जाने सवै वनज व्यवहार ।
तासो कर जोरे अकुलाय, कह तू बीर बात समझाय ॥८३०॥
आये चले दूर देशन्त, अब ये कहा थके जलजन्त ।
दिन उठ सूर सवै बल करें, कहूं पास नहि टारे टरें ॥८३१॥
अर हूं बात कहां लौ भणुं, मेरे मनमें संसो घणुं ।
बार बार हूं पूछो तोहि, किस विध चालें प्रोहण मोहि ॥८३२॥

सुन हुं सेठ मनमें धर भाव, योतैं अशुभ कर्म कछु आव ।
बिन कारण अचल है रहे, जलदेवोंने इनको गहे ॥८३३॥
लक्षणवन्त महा गम्भीर, जाको निर्भय होय शरीर ।
बलि दीजे मनमें धर नेह, प्रोहण चलें नहीं सन्देह ॥८३४॥
ऐसो भेद सेठ जब लहो, सवै आय मन्त्रनसो कहो ।
यह सुन कियो जो सबन विचार, यह विदेश सारो शुभसार ॥८३५॥
सुनो नाथ तुम सो भाखिये, कीजे बुद्धि आप राखिये ।
चलो देशके पति पै जाय, जो कछु होय सो बात कहाय ॥८३६॥
यह सुन धवल फूलगयो अंग, सगले वणिवर लीने संग ।
जाय राय सो विनती करी, कछु भेट ले आगे धरी ॥८३७॥
देखत ही सन्तोषो राय, वणिवर मांग जास पर भाय ।
अति उदारता उपजी मोहि, जो कछु कहे सो देहुं तोहि ॥८३८॥
दुय कर जोर धवल उच्चरे, जे कछु राव दया मन धरे ।
लक्षणवन्त महा गुण रेह, एक पुरुष सो हमको देह ॥८३९॥

बूझे राव बात जिय जोय, कारण कछु सुनावो मोय ।
मेरे मन विकलप भयो आय, कौन बात यह मो समझाय ॥८४०॥

सेठ उवाच ।

महाराज सुनिये दे कान, नीके कर हूँ करूँ वखान ।
कौशांबीपुर बसे सु ठाम, महाराजा रथवाहन नाम ॥८४१॥
तिह पुरथे जु गमन हम कियो, द्रव्य असंख साथ कर लियो ।
भरे पंचसै प्रोहण चंग, योधा बहुत हमारे संग ॥८४२॥
बहुतक दिवस चालते भए, मारग छांड न इत उत गए ।
यहांको आय पहुंचे वहे, अब कछु अचल है रहे ॥८४३॥
किये बहुत परपंच उपाय, क्यों हूँ चलें नहीं सुन राय ।
अब पे मंत्रिन कियो विचार, जानें सबै बात व्योहार ॥८४४॥
कोऊ छुवे सलक्षण हाथ, तब वे चलें सुनो नरनाथ ।
कै दीजिये पुरुष बलिदान, तब वे निज कर छांडे थान ॥८४५॥

❀ ❀ ❀

यह सुनि राजा अचिरज भयो, सब ही जनको आयस दयो ।
थके सूर सब लेय उसास, पेले जांय न काहू पास ॥८४६॥
निज पेलन तब उठियो राय, क्यों हूं टरे न और उपाय ।
तब सो कहे सोच जिय आहि, कोई कहां थे लावो चाहि ॥८४७
देख अकेलो और न साथ, लावो पकड़ कहे नर नाथ ।
ऐसो जब आयस पाइयो, वणिवर वृन्द सबै धाइयो ॥८४८॥
देखें ते मन माहि विचार, वन अर नदी सरोवर पार ।
देखत देखत पहुंचे जहां, उपवनमें केलि द्रुम तहां ॥८४९॥

तातरु कुंवर सुयो गुण गेह, बहु विधि लक्षण मंडित देह।
पुण्यवन्त कोटीभट येह, सुन्दर सुभग लछको गेह ॥८५०॥
लम्ब बाहु निर्भय अरि वहें, देख परस्पर बातें कहें।
पायो भलो वीर यह आज, यातें सबे होयगो काज ॥८५१॥
पर यह द्रुमतलते नहि टरे, अरु काहू पै गह्यो नहि परे।
घेर हि करत समय कछू गयो, जागो कुवरसो बैठो भयो ॥८५२॥
सुभटन देख शंक मन धरी, द्वै कर जोर वीनती करी।
डरपै चित्त कहें सुन देव, आये करण तुम्हारी सेव ॥८५३॥
हमको आयस दीजे येह, तुम देखत मन उपजो नेह।
नीके कर देखहु जिय जोय, हमसे स्वामी पाप न होय ॥८५४॥

कोटीभट्ट उवाच।

कैसे पाप कहो सति भाय, नीके कर मोको समझाय।
मनमें कछू सोच मन करो, जिम ही हो तिम ही उच्चरो ॥८५५॥

क्षणिचर उवाच

स्वामी सेठ धवल है एक, ताके मनसे गयो विवेक।
प्रोहण थाके सागर तीर, क्यों हूं टरें नहीं सुन वीर ॥८५६॥
ताके मन उपजो सन्देह, मन्त्री मन्त्र विचारो येह।
एक पुरुष बलि दीजे लाय, तवै चले ये प्रोहण धाय ॥८५७॥
ढूंढत हम डालत हैं सबै, पावें नहीं रहे थक अबै।
तातें रहे अपन यो ठार, रीते जाहि तो मारे डार ॥८५८॥
अरु हम कछु न सके विचार, क्यों हूं लीजे शरण उबार।
हमें सेठको डर अधिकार, जो वह क्यों हूं पावे सार ॥८५९॥
तो योधा बहु देय पठाय, ते मारेंगे दुःख दिखाय।
यह भय बहुत भयो मन माय, स्वामी तिनसे लेहु बचाय ॥८६०॥

श्रीपाल उवाच।

यह वातकी शंक मत करो, मत अकुलाय हियेमें घरो।
जो तुम कहो तो लेहु उवार, सूर अनेकन घालुं मार ॥८६१॥
जो तुम कहो तो ऐसी करुं, कोटि वीर छिनकमें दरुं।
जो तुम कहो चलं पुनि तहां, धवल सेठ सागर तट जहां ॥८६२॥
मोतें कारज हो है जोय, कर हुं सेठ सयाणो सोय।
सो तुम देहु सवारो दाव, मोसों वात कहो समझाव ॥८६३॥

वणिवर उवाच।

जो पर यह विचारी धीर, हम पर दया करी वर वीर।
चलो तो जीव सवनको रहे, तुम सो सेठ कछू नहिं कहे ॥८६४॥
ये तो वामें कहा समाव, तुम तन चितवे दुष्ट कुभाव।
तुम अतिवली महा परचण्ड, अति लांवे दीसत भुजदण्ड ॥८६५॥
अरु तुम दीसो रूप अभंग, देखत मोहे कोटि अनंग।
तुममें सर्व सुलक्षण आह, तुम तनको उसके नहिं चाह ॥८६६॥
काहूकी तुम सो न वसाय, देखत सेठ गहेगो पाय।
तो तुम भली करो हो नाथ, जो तुम चला हमारे साथ ॥८६७॥
ऐसी वात जवै सुन लई, मनमें तवे दया अति भई।
कछु न मनमें सोच न लयो, उठके तिनके गोहण भयो ॥८६८॥

वणिवर रंजे अंग न माय, ताको मुख देखे पछिताय।
कोटी भट चालो हरखंत, वार वार मन मांहि कहंत ॥८६९॥
तुरत जाहि हूं देखत जिसो, होनहार कौतूहल तिसो।
अपनो बल हूं लेह पिछान, मिट धौ गई कि है कुलवान ॥८७०॥

बात अपूरब पहुँची आय, इन नैनन हूँ देखूं जाय।
विधिना सो सन्मुख है लखूं, हर्ष विषाद न मनमें धरूं ॥८७१॥
मनमें मैनासुन्दर कन्त, विहसत जाय यही सोचन्त।
धवल सेठ बैठो है जहां, निरभय कर पहुंचो सो तहां ॥८७२॥

वणिवर उवाच

सुनो सेठ छांडो सन्देह, लक्षणवन्त पुरुष यह लेह।
देखत सेठ हरख अति भयो, चिन्तत हुँ जैसो विध दयो ॥८७३॥
कछू बात नहि पूछो ताह, को तू बीर कहाको आह।
ताको कछु न उपजो मोह, लोभ अन्ध है चितवे द्रोह ॥८७४॥
लोभ अन्ध जो मानस होय, पाप पुण्य नहि जाने सोय।
लोभ अन्ध जाके है प्रान, मलिन भाव नहि तजे निदान ॥८७५॥
लोभ अन्ध जो प्राणी नित्त, सो पर उदय न वंछे चित्त।
लोभ अन्ध जाको मन रहे, सो न भली काहूकी कहे ॥८७६॥

लोभ अन्ध चाहे बहु वित्त, लोभ अन्धके इष्ट न मित्त।
लोभ अन्धके दया न जान, भव्य अभव्य न लेय पछान ॥८७७॥
लोभ अन्ध वेश्याके जाय, लोभ अन्ध फुन आमिष खाय।
लोभ अन्ध मदरा आचरे, लोभ अन्ध पुनि चोरी करे ॥८७८॥
लोभ अन्धके जूवा दाव, लोभ अन्धको कर्कश भाव।
लोभ अन्धकै कछू अनमान, लोभ अन्ध कछू देय न दान ॥८७९॥
लोभ अन्धको क्रिया न कर्म, लोभ अन्धके बुद्धि न मर्म।
लोभ अन्धके धर्म न ध्यान, लोभ अन्धके व्रत नहि ज्ञान ॥८८०॥

लोभ अन्ध औगुण गह लेय, गुण अर शील मनी तज देय ।
लोभ अन्ध सुख दुख नहि गिने, लोभ अन्ध पुनि मानस हने ॥८८१॥
लोभ अन्ध यशको परहरे, लोभ अन्ध अपजस जिय धरे ।
लोभ अन्ध नयन सो अन्ध, नैन अन्ध सो अन्धन बंध ॥८८२॥
लोभ अन्ध किम किम नहि करे, प्रीति भाव मनमें नहीं धरे ।
लोभ अन्ध सब गुण परिहरे, लक्ष्मी देख महा सुख करे ॥८८३॥
तैसे सेठ अन्ध है गयो, कछु न मनमें सोच न लयो ।
मनमें कीनो हर्ष अपार, गावें युवती मंगल चार ॥८८४॥
बाजे भेर तूर नीशान, देय दान सो विन उनमान ।
श्रीपाल तब लियो बुलाय, भले अरघ जासों उपठाय ॥८८५॥
जलसो नन्हायों कियो अभंग, चन्दन संघो चर्चो अङ्ग ।
वस्त्राभूषण मंडो सोय, जो देखे ताही दुख होय ॥८८६॥

कहे सेठ मनमें आनन्द, विधिना सहज काटियो फन्द ।
कोलाहल बहु हूवो तबै, कुवर घेर ले चाले जबै ॥८८७॥
शत्रुदवन सुन हरखो गात, काहू सो न कहे मन बात ।
बार बार विहसे उच्चरे, स्वार्थ कौन कहा नहि करे ॥८८८॥
यह चिन्ते मन गुण है विशाल, सर्व जन न पर रूठो काल ।
निजभुज बल मैं प्रगटूं आज, याको भलो संवारुं काज ॥८८९॥
बहुरी श्रीपाल यों भणी, देखो गति हूं कर्म ही तणी ।
कछू न मनमें करो विचार, होनहार सोई है सार ॥८९०॥

श्रीपाल गह लेगए तहां, सायर थके प्रोहण जहां ।
कोउ कछु करो मत गर्व, शुभ अर अशुभ कर्मतें सर्व ॥८९१॥

प्रथम तीर्थ श्री आदि जिनन्द, प्रगटे सो त्रिभुवनमें चन्द ।
लम्बा बाहु कियो तप सार, धरो ध्यान आतम आधार ॥८९२॥
गत षट् मास भए पुन पावैं, आहारको जिन उतरे तवैं ।
विधि नहि समझत लोक अजान, अन्तराय तब भयो निदान ॥८९३॥
वन ही परीषह सही अभंग, कर्म फिरो तिनहूके संग ।
श्रीपाल मन चिन्ते भाव, यह कछु पूर्व कर्म उपाव ॥८९४॥
कछु न कीजे मन अभिमान, होय जो कछु विधिको निरमान ।
अपनो सीस निवायो तान, सूर न खड्ग उठाया जान ॥८९५॥

ॐ ॐ ॐ

श्रीपाल जंपियो तुरन्त, परफुल्लित मनमें विहसंत ।
धवल सेठ भो कुलहमयंक, मन वच काय छोड़ सब शंक ॥८९६॥
जीवही बध तू चाहत आज, कै प्रोहण चलिवे सों काज ।
सुन कर सेठ बचन उच्चरे, प्रोहण चले जीव उबरे ॥८९७॥
जो तू अवैं चालावे वीर, कोऊ तो दुःख देन शरीर ।
यह सुन श्रीपाल यों कहो, तुम शठ मेरो मर्म न लहो ॥८९८॥
सुनो सेठ तुम कितोक मान, कितेक तेरे सूर सुजान ।
कोटक मल्ल जो करें अखार, मारुं सबन एक ही वार ॥८९९॥
अर मेरी जो सुने हकार, प्राण तजत तिन होय न वार ।
हूँ कोटीभट वैरि न शल्ल, पर दल वल जीतन भुविमल्ल ॥९००॥

ॐ ॐ ॐ

प्रोहण चलवेकी कहां वात, चाहो कियो होय सो सात ।
अरु जो आप वड़ाई कहूँ, तो हूँ कछु न शोभा लहूँ ॥९०१॥
सुणि हो सेठ अधममति कूर, दयाहीन अदयाको मूर ।
सब ही ते देखिये महन्त, सवतें रूपवन्त गुणवन्त ॥९०२॥

सब ते महाबली रण धीर, सब ही ते शोभिये शरीर।
मोहे देखतैं सोच न कियो, तैं तो भर अञ्जुलि विष पियो ॥१०३॥
मोहे देखतैं दया न करी, स्वार्थ वश अदया मन धरी।
तोहे कछु दीजे नहीं खोर, तेरे गले लोभकी डोर।.१०४॥
धाता सेती कछु न वसाय, को है ताको सकै छुड़ाय।
तोको मैं कीनो उपकार, मून्दो दौर नरकको द्वार ॥१०५॥
महा पाप तेरो मेटियो, पाप कूप तें कर ऐंचियो।
कछु विवेक न तोको भयो, मंसो मज्जन मान न कियो ॥१०६॥
कंवर रिसानो जानो जवैं, द्वय कर जोर वाणियो तवैं।
दयावन्त अरु गुण गम्भीर, कोटी भट वड़ साहस धीर ॥१०७॥

卐 卐 卐

तुम सब दुःख विनाशन हार, तुम दुःखितजनके प्रतिपार।
तू तो सबे धर्मको मूल, तू कुल कमल प्रफुल्लण सूर ॥१०८॥
तू तो सब ही सुख दातार, शीलवन्त अति लक्षण सार।
तब श्रीपाल दया मन धरी, वहु विध नवन सवन मिल करी ॥१०९

卐 卐 卐

प्रोहण सजो संक मत करो, जी को दुख सबैं परिहरो।
तासु वचन सुख भयो अपार, वणिवर सब ही चढे उदार ॥११०॥
चढे सूर वाजे नीसान, चढ़ियो धवल सेठ परवान।
तब सो उठो सुन्दरी कन्त, सिद्ध मंत्र ध्याइयो तुरन्त ॥१११॥
हांक मूकी सब जन तूठ, ताको विद्या जुगल सन्तूठ।
फुनि पद कमल छुवै श्रीपार, प्रोहण चले न लागी वार ॥११२॥
वल आरूढ कुंवर जानियो, धवल सेठ मन सुख मानियो।
भेरी मृदंग तूर बाजिया, जय जय शब्द देव गाजिया ॥११३॥

卐 卐 卐

देखत मंत्रिन कियो विचार, पुण्यवंत कोउ यह सार ।
ये जलजंतु रहे गहि ठौर, याह विना कुण काढे हि और ॥९१४॥
मंत्री कहें मन्त्र यह भलो, याहि संग ले आगे चलो ।
यह विरतंत सेठ सोच्चियो, तब तिह भलो भलो वरणियो ॥९१५॥
वणिवर गण सब गोहण भयो, आपन श्रीपाल पै गयो ।
कवि परिमल्ल सु करे बखान, श्रीपालको कर सनमान ॥९१६॥
बहुत भांति कर विनती करी, विहसत सेठ बात उच्चरी ।
अर सब वणिवर पकरो पाय, हम पर दया करो सम्भाय ॥९१७॥

१५-धवलसेठ द्वारा श्रीपालको साथ ले जाना

सोरठा ।

भो परदेशी मित्त, हम संग चालो वेग तुम ।
जो कछु इच्छो चित्त, सो मांगे देवुं तुम्हें ।।५१८।।

दोहा ।

श्रीपाल तब उचरे, सुनो सेठ तुम येह ।
अब हूं चालूं शीघ्र ही, दशम हिस्सा धन देह ।।९१९।।

गाथा ।

तब वणिवर इम कहिये कि, अचिंत अद्भुत यह जंपै ।
जो निवहे सो मंगहि, भो कुमार पंथी सुणियं ।।९२०।।

चौपाई ।

शत्रुदवन सुत कहे सम्भार, सुनो तुम बात विचार ।
दशम हिस्सो बोलो धन लेहुं, संग तुम्हारे काज करेहुं ।।९२१।।

सेठ उवाच ।

जो कुछ कहो सो दीनो तोहि, चल तू साथ धर्मसुत मोय ।
याहि बातको न हो खण्ड, सेठ उठायो वंसह दण्ड ।।९२२।।
तब प्रतीति कोटीभट करी, मनकी गांठ सवा परहरी ।
तब तिन कुछ विलंब न करो, गरजियो सिर टोपा धरो ।।९२३।।
भेरुण्ड पंखीको भय होय, निश सोवै निद्रा वश होय ।
महा सिंधु देखियो अथाह, वणिवर मनको तजो उछाह ।।९२४।।
लहर झकोरनि हालैं जवै, सगरे जन दुःख पावैं तबै ।
कोउ इकजमें गिर गिर परैं, केइक जने वौन तब करैं ।।९२५।।

केइक देखे बहु विस्तार, कब जगदीश जाएंगे पार।
केई कहैं बुरो यो कर्म, अहलो जावत मानस जन्म ॥१२६॥
कछु विचार न कीजे येह, दुख परो सायर जल गेह।
संयम धर्म ठौर इह सार, तब हि कुल मिल है परिवार ॥१२७॥
गरब कलेश होय जो दर्व, पुण्य अर्थ सो दीजै सर्व।
मन वैराग धरै वरवीर, देय दान सब तजै शरीर ॥१२८॥
गावत नाचत हर्ष अनंत, अति विनोद देखें जलजंत।
निशवासर ते कहु न रहैं, पापी कर्म वशी यो कहैं ॥१२९॥
पवन चलत चालें जलजंत, परसपरस भट भेट लहंत।
सुखडीमें ते सिंधु तिरंत, मरजीया बोलो भय वंत ॥१३०॥
साजहु साजहु सूर जुझार, सन्मुख आवत चोर अपार।
सुनत भये भय भीत वणीस, केइक जणे गहे कर सीस ॥१३१॥
केइक जंपें सर्वस जाय, जाय न सहो कुन्तको घाय।
कई कहैं भजें इस बार, जो न होय सागरकी धार ॥१३२॥

परस्परस इह भाषत जाम, लुटा आय पहुंचा ताम।
धवल सेठ कंपियो जु अङ्ग, आठ सहस्र योधा ले संग ॥१३३॥
परे जाय ते जल मंझार, अपने अपने गह हथियार।
असिवर करी छुरी तरवार, धनुष वाण निज गेह संभार ॥१३४॥
सल कुन्त मुद्गर अनिवार, गोफणि चक्र गदा अधिकार।
कोउक गहे मर्गवी दंड, कोउ त्रिशूल लिये बलि बंड ॥१३५॥
केईयक शकति लिये भयवन्त, लगे जायमो मरे तुरन्त।
तुपकदारको करे बखान, मारहि बापस को ते जान ॥१३६॥

बहुतक गहे और हथियार, तिनको कछु न जानूं पार ।
कवच सनाह शरीराबाध, कोउ वरण करि है धर साध ।।९३७।।
सन्मुख चोर हकारे जाय, महा अपर बल उठियो धाय ।
निर्भय मार मारते करें, काहूकी ते शंक न धरें ।।९३८।।

卐 卐 卐

बहुत चोर झूझे आगरे, देश देशके संघट जुरे ।
सोरट मरहट कुँकण देश, खगर वर्वर चोर अशेष ।।९३९।।
कैइक दुष्ट झूझि जब गये, भागे तबैं पिछोह भये ।
धवल सेठ तिन पीछे भयो, काहू पै निवारो गयो ।।९४०।।
तब उन चोरन भई संभार, बहुरो फिरे न लागी बार ।
मार हि मार करे गल दार, गही लाज मन माहि अपार ।।९४१।।
भाजो सेठ सूर भय भरो, वणिवर वृन्द पचै लाखरो ।
धरैं न धीर गए सबवाय, बहुतन प्राण तजे अकुलाय ।।९४२।।
जो ले श्वास न साहस गहे, चोरन सन्मुख होन न कहे ।
यह विधि झूझ होत है जिसो, श्रीपाल तब देखो तिसो ।।९४३।।
सुभट न विपति परी दुख होय, आपन पर नहि जाने कोय ।
हांकत तस्कर गाजे भले, जीवत सेठ बांध ले चले ।।९४४।।

१६-धवलसेठको लूटेरोंसे छुडाना

श्रीपाल देखे मुसकाय, कछुक जिय रिस उपजी आय ।
अब इन ताहु न देहूँ जान, सेठ हि लेउं छुडाय निदान ॥१४५॥
यह मन चिन्ते पुन पुन सोय, कुवर कहे किम ऐसी होय ।
पोछत धर्म तात दुःख लहे, उत्तम किम ऐसी रिस सहे ॥१४६
तो ले वणिवर पहुंचे तहां, कोटीभट सोचत है जहां ।
तासो सब कारण उचरा, यह पुन सबै देखबो करो ॥१४७॥
कर जोरे सब पकरे पाय, अबके सेठहि लेहु छुडाय ।
बांध लया है सुणों कुमार, जो बल है तो लगो पुकार ॥१४८॥

यह सुन महाबली परजरो, मानों अनल मांहि घृत परो ।
मानों सिंह पर डेली परी, मानों पूछ कारेकी भरी ॥१४९॥
भयो अति अरुण नयन रिस भई, सब सुभटनको धीरज दई ।
जो लों मेरे कण्ठ पराण, तो लों सेठ न पावे जाण ॥१५०॥
कितोक चोरनमें बल आहि, मोछत सके सेठ तन चाहि ।
अब लो मैं यो भेद न लह्यो, अजुगत वचन आय तुम कह्यो ॥१५१॥

ऐसो वचन चयो श्रीपाल, कर ले खड्ग चालो तिह बार ।
पंच परम गुरु मन सुमरंत, रणको चालो सुन्दरी कंत ॥१५२॥
पुण्य गरिष्ट सुनिर्भय वीर, रण सन्मुख गयो साहस धीर ।
कोऊ और न लीनो साथ, आयुध कछू न पकरो हाथ ॥१५३॥
दई हांक बलिचंड रिसाई, थर थर चोर भजे भह राई ।
मानों सिंह दहारो तहां, मृगदल बहुत चरत है जहां ॥१५४॥

मानों मद्गर दोडो मंत, गर्धभगण जिह ठानि वसंत ।
मानों गरुड़ पहूँचो जाय, जहां भुजंग जरे अधिकाय ॥१५५॥
श्रीपालकी सुनी गुंजार, कायर चोर भगे बिगरार ।
शंका भई बहुत भय करें, थाके ठौर ठौर थर हरे ॥१५६॥

कोटीभट्ट उवाच ।

सुनों दुष्ट तुम भेदो त्रास, कबहु न छूटो मेरे पास ।
महा विरुद्ध गुण है यह कियो, मेरो पिता बांध तुम लियो ॥१५७॥
जाणों चोरन तब निज मरण, पकरो आय तासको शरण ।
तसकर सबें ऊठ्यो भाख, स्वामी मारक तू ले राख ॥१५८॥
तब रिस कोटी भटकी गई, कछू दया तांके मन भई ।
त्रासन दीनों बांनी संघ, सबें परस्पर लीने बन्ध ॥१५९॥
धवल सेठके बन्धन छोर, तासों विनय करी जु बहोर ।
करे विचार तात मन मोर, ये मारिये कि दीजे छोर ॥१६०॥

꧁ ꧁ ꧁

तुम जो कछु मो आयस देह, सोई करुं सुनो तुम येह ।
यह सुन धवल सेठ विहसाय, मन्त्री लीने पास बुलाय ॥१६१॥
करो विचार बात उच्चरो, इनको बूझ ऐसो ही करो ।
कोऊ कहे बोड मारिए, कोऊ कहे ज्वाला जारिये ॥१६२॥
को कहे हाथ पाय तोरिए, कोऊ कहै सिंधु छोरिए ।
कोऊ कहे खडगकी धार, इन सिर काट न लावो वार ॥१६३॥
कोऊ कहे सबें पर हरो, खाल काढके तूरी भरो ।
सगरे कहें यह दुख लहे, छोड न तिनकी कोई न कहे ॥१६४॥
सेठजु कहे भली है अबे, दुख दे दुष्ट मारिए सबे ।
अरु इन त्रास दीजिये घणों, भाखो सेठ मतो आपणों ॥१६५॥

कोटीभट्ट उवाच ।

हाय हाय मारे दुख होय, इनको पाप इछ है कोय ।
मेरी मान लेहु तुम तात, ऐसी भूल कहो मत बात ।।९६६।।
जाके नहीं दयाको वास, ताको तोहे मूल विनाश ।
मुनिवर जो संयम आचरे, मन वच काय ध्यान जब धरे ।।९६७।।
सहे परीषह बाईस गात, दया विना निष्फल सुन तात ।
श्रावकचले धर्म आचार, क्रिया कर्म पारे अधिकार ।।९६८।।
निशवा पर जे देवें दान, याचक जन ही पयासें मान ।
शीलवंत पारे धर भाव, भूल अभाग देय न पांव ।।९६९।।

※ ※ ※

जाके मनमें दया न होय, मिथ्या सवें तात जिय जोय ।
अरु जो नर सामायिक करे, दह लक्षण व्रत जियमें धरे ।।९७०।।
अर जो पूजे देव दिन मान, मनवचकाय धरे शुभ ध्यान ।
जानें नहीं दयाकी बात, और सभी निष्फल सुण तात ।।९७१।।
और सवे गुण जाके चित्त, जो विलसे बहुते धन नित्त ।
बहु आचार चले निकुताय, दया हीन अहल सब जाय ।।९७२।।
पण्डित वाचे महा पुराण, बहु विधि जाणें अर्थ वखाण ।
दया रूप मनमें नहि भाव, झूठो सब है और उपाव ।।९७३।।
दया विना जप तप सब शून्य, दया विना मिथ्या सब पुण्य ।
दया हीन सब शून्य हो जाय, सुन हो तात कहुँ समझाय ।।९७४।।

दोहा ।

और बात बकवाद सब, ज्ञान ध्यान आचार ।
शिवदायक संसारमें, दया धर्म है सार ।।९७५।।

चौपाई।

यह सुन सेठ लाज मन धरी, सीस निवाय बात उचरी।
बार बार मत पूछ हि मोहि, सोई कर जो भावे तोहि ॥९७६॥
यह सुन श्रीपाल तिन लाय, निज प्रोहणमें बैठो जाय।
तिनके बन्धन दीने छोर, ठाडो भयो सो दूय कर जोर ॥९७७॥
सुनो वीर हो मेरी बात, तुम जो कछु दुःख पायो गात।
मेरी चूक नाहि है मित्त, देखो सोच आपनो चित्त ॥९७८॥
तुम सद आये आयुध संधि, मेरे पिय ले चाले बंधि।
तातें तुम घणों दुःख दियो, करी न काण बांध सब लियो ॥९७९॥

बार बार कहत हूँ अबै, यह अपराध क्षमो तुम सबै।
समता भाव हियेमें धरो, क्रोध कषाय सभी परहरो ॥९८०॥
सोधो मल जलसो जो न्हवाय, वस्त्राभूषण सब पहराय।
पंचामृत जीनार जिमाय, भलो अरगजा अंग लगाय ॥९८१॥
दिये सबनको पान मंगाय, लागो विनय करण मन भाय।
अब तो हो तुम मेरे मित्त, कछु कुभाव धरो मत चित्त ॥९८२॥

चौरा ऊचुः।

स्वामी तू दूजो करतार, तू हम प्राणनको रखवार।
धन्य पिता जाके अवतारो, धन्य सु माई गर्भ जिह धरो ॥९८३॥
धन्य सोवंश जहां तू भयो, धन वह गृह जन्म जहां लयो।
धन्य वह घरी धन्य तिथि वार, धन रजनी धन वासर सार ॥९८४॥
धन्य श्रीपाल सर्व गुण सथ, दया धर्म पालन समरथ।
चोरन पाय गहे है दीन, हम किंकर चरणनमें लीन ॥९८५॥

हम तें कछु न ह्वै है सेव, तेरो नाम जपेंगे देव ।
पण विधि वहुत रहे गहि पाय, लीने तव श्रीपाल उठाय ॥९८६॥
दीनी विदा वहुत सुख पाय, अपने घरते पहुँचे जाय ।
यह कौतूहल जैसो कियो, वणिवर सवे तैसो देखियो ॥९८७॥
जय जय शब्द कियो विहसंत, कछु न कीनी सोच तुरन्त ।
सव मिल धवल सेठ पै गये, कहैं वात सव ठाढे भये ॥९८८॥
स्वामी सुनो वात दे कान, नीके कर हम करें वखान ।
सकुचत हिये पयंपत वैन, अचिरज एक देखियो नैन ॥९८९॥
बांधे चोर सवें विगरार, पापी लम्पट दुष्ट लवार ।
तिनको धरमें गयो लिवाय, कोटी भट दीन्हे छिटकाय ॥९९०॥
अर फुनि एक अपूरव कियो, तिन आगे द्वै कर जोरियो ।
कीनो विनय वहुत अधिकार, पञ्चामृत दीन्हीं ज्योणार ।९९१॥
सोधो भलो अरगजा पान, दिये वस्त्र आभरण सुठान ।
क्षमा क्षमन्तर तिन सों कियो, दीन्हीं विदा गेह पहुंचियो ॥९९२॥
यह सुन सेठ अचंभो भयो, हर्षि कुवर तव भेटन लयो ।
तहां वजे वाजित्र अपार, तूर मृदंग भेर सहनार ॥९९३॥
गहर शब्द वाजे नीशान, कियो महोछव दीनो दान ।
निज घर तवसो गयो लिवाय, सेठनी हू के वन्दे पाय ॥९९४॥
दूव दही ता माथे धरो, अक्षत रोचन टीको करो ।
हर्षित ह्वै कर दई असीस, जीवो कुवर चिर कोड़ि वरीस ॥९९५॥
युवती गावें मंगलाचार, करी वधाई अगम अपार ।
इस विध निवसे सुख अनिवार, धवल सेठ श्रीपाल कुमार ॥९९६॥

१७-चोरोंद्वारा सात प्रोहण रत्न श्रीपालको देना

अचरज और सुनो अधिकार, इन चोरन घर कियो विचार।
जिह हमको इतनो गुण कियो, निर्भय प्राण दान जिह दियो ॥९९७॥
हम हू ताको कछु कराहु, आवो कछु भेट ले जाहु।
भले भले निर्मोलक खरे, रतनन सात परोहण भरे ॥९९८॥
श्रीपालको दीने जाय, नमस्कार कर बंदे पाय।
बार बार विनवे यो भने, स्वामी हम सेवक तुम तने ॥९९९॥

हम आयसकारी हैं मित्त, कृपा निधान राखियो चित्त।
यह कह गेह आपने गए, तहां वणिवर सब धोखे भए ॥१०००
परसपरस जंपैं मन भाव, देखो याको पुण्य सहाव।
एक लक्ष इन चोर बांधिया, कछू नहीं आयुध सांधिया ॥१००१
अरु इन सबै दये मुकताय, दया धरी मनमें निकुताय।
रौरवि पापी चोरन सैन, आये लक्ष हमारी लैन ॥१००२
तिन अब एक अपूरब कियो, बहुत द्रव्य श्रीपाल हि दियो।
पूर्व कियो कछु शुभ कर्म, कै आराधो जिनवर धर्म ॥१००३
कै इन कियो महातप सार, कै दशलक्षण धर्म विचार।
कै इन दियो सुपात्रन दान, कै मुनिजनह पयासो मान ॥१००४
कै रत्नत्रय व्रत आचरो, दया भाव मन मध्यहि धरो।
कोऊ पुरुष महाबलवीर, लखो न जावे साहस धीर ॥१००५
कै कोऊ देवनमें यह आहि, कै गन्धर्व सब देखो चाहि।
कै यह किन्नर नाग कुमार, कै यह यक्षवली अधिकार ॥१००६
कै यह विद्याधर है कोय, या सम योधा और न होय।
गुप्त रूप कोऊ यह बली, याकी रीति सबै है भली ॥१००७

यह विध वणिवर करत विचार, चले जात परोहणमें सार ।
पांचमी संधि यह वरणई, कवि परमल्ल भाष कर दई ॥१००८

वस्तु छन्द ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणं ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुःखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुख कारण भवजन तारण चौपई बन्ध परिमल्ल कृतं ।
श्रीपाल निरन्दो त्रिभुवन चन्दो, लक्ष चोर जिह जीत लयं ॥
तिह धवल छुडायो जगयश पायो, पुण्य गरिष्ट सुप्रगट भयम् ॥१००९

सोरठा ।

जाके पोसे पुण्य, ताके हय अतुल धन ।
सुकृत विना सब शून्य, देखो हिये विचारके ॥१०१०
जाकी धुर है धर्म, सो एकै है कोटिवर ।
अब भाजो सब भर्म, श्रीपालको देखकर ॥१०११

चौपाई ।

पुण्य भाव जाके मन रहे, सो त्रिभुवनमें बहु यश लहे ।
बढे विभूति बहु अधिकार, हय गय वाहन अगम अपार ॥१०१२
जाकी ध्वजा धर्म अधिकार, सोही एक कोटि वरं सार ।
सोई पुरुष आहि गुणवन्त, सोई परम विचक्षण सन्त ॥१०१३
सोई बलतवन्त नर आहि, रूपवन्त सो देखो चाहि ।
सोही शीलवन्त शुभ धाम, ताही को अति उत्तम नाम ॥१०१४
सोई अति प्रचंड बल वीर, सोई जाने साहस धीर ।
ताको देख भजें दुख दंद, ताहि देख उपजे आनन्द ॥१०१५
जाके दया धर्मको वास, काकी उपमा दीजे तास ।
सो श्रीपाल धर्मको कन्द, भयो सभाको निज कुलचन्द ॥१०१६

इति पंचमसंधिः समाप्तः ।

१८-हंसद्वीपका वर्णन

यूँ सुख विलसे सुन्दरी कंत, पवन हि वस चलिया जलजंत ।
निश वासर चलिया अधिकाय, पहुंचे हंसद्वीप तिह जाय ॥१०१७

ताकी महिमा सको न जान, जामें प्रगट अठारा खान ।
कनक रत्न मातंग तुरंग, श्रीखण्ड कृष्णागर है चंग ॥१०१८

कस्तूरी कर्पूर अपार, विद्रुम मुक्तनके अंवार ।
शशि समान वरणत है जिसी, कहूं कहूं उपजे मन तिसी ॥१०१९
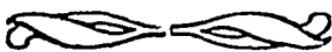
१९-रयनमंजूषाका वर्णन

वस्तु अपूर्व जे कछु आहि, उपजत हैं सबरी तां माहि ।
वणिवर सवन द्वीप सो दीठ, देखत हो सब ठौर सु मीठ ॥१०२०

सब ही ठौर जिनेश्वर धाम, सुन्दर गृह अरु सुन्दर भाम ।
सब ही तें रमणीक महंत, सब ही वन उपवन सोहंत ॥१०२१

सब ही ते सब सुखन निवास, सबके लक्ष्मी तनो परकास ।
तहां प्रोहण थाके विचित्त, मुद्रर मेल दिये जित तित्त ॥१०२२

उतरो सेठ द्वीपमें गयो, देखत ही मन हर्षित भयो ।
महा विचक्षण सब गुण जान, पैज आपनी करे प्रमान ॥१०२३

कनककेतु राजा अरि शल्ल, प्रगटो राज करे भुवि मल्ल ।
जिनशासन व्रत जाने सार, दुर्जन जनको त्रासनहार ॥१०२४

कीरति खण्ड खण्ड जा होय, और न उपमा आवे कोय ।
शीलवन्त भामन अरधंग, ज्यों रति कामदेवके संग ॥१०२५

लोचनतें लाजिये कुरंग, मुखतें शशी अति कोमल अंग ।
चलत चाल हंसनकी हरी, कटितें लाज केहरी धरी ॥१०२६
वाणीतें कोकिल दुख लहे, वेणीतें भुजंग दुख दहे ।
और बहुत गुण सकूं न जान, जैन धर्म्म पालन परिमान ॥१०२७
सम्यक् भाव धरें जु महंत, मुनिवर दान देय विहसंत ।
कंचनमाला नाम सुपाइ, रूपन अपछर पूछे ताइ ॥१०२८
तिन द्वय सुत जाये गम्भीर, चित्र विचित्र नाम बलवीर ।
गुणगरिष्ट और महा निशंक, ते दोऊ कुलके जु मयंक ॥१०२९
तीजे गर्भ सुता अवतरी, रयनमंजूषा सब गुण भरी ।
लोचन शुभ सब दुखको हरें, अमृत वचन सो कुँकुम जरें ॥१०३०
यौवनवन्ती गुण हां विशाल, तात सचिन्तो देख तो वाल ।
दोऊ पुत्र लिये तिन संग, मनमें कियो विचार अभंग ॥१०३१
तीनों जने पहुँचे तहां, मुनिवर ज्ञानदीप है जहां ।
देखत अति निर्मल भयो हियो, पण विधि नमस्कार तिन कियो ॥१०३२

जय करुणारस सुख दातार, जय जय जगवन्दन शुभ सार ।
जय जय मानरहित शुभकन्द, जय जय दूर करण यम फंद ॥१०३३
जय जय कुमति हरण मुनिसन्त, जय जय गुणसागर गुणवंत ।
जय जय ज्ञान पयासन सार, जय जय त्रिभुवनके आधार ॥१०३४
जय जय शिवमार्ग साधङ्ग, जय जय कुगति विनाशन वङ्ग ।
जय जय कोह दवानल नीर, जय जय शिवफल चाखण कीर ॥१०३५
जय जय भवतम हरण दिनेश, जय जय दशलक्षण उपदेश ।
बहु विधि स्तुति करी वैसियो, द्वय कर जोर सु पूछन लियो ॥१०३६
स्वामी मोपर दया करेह, शीघ्र ही भानो मुझ सन्देह ।
रयणमंजूषाको वर जोय, दीनानाथ पयासो सोय ॥१०३७

मुनिवर उवाच।

मुनिवर जंपै सुन हो राय, सहस्रकूट चैत्यालय आय।
कारसो पटल उघाडे जोय, वह व्रह्म यह गुणनिधि सोय ॥१०३८

है विशुद्ध सुनियो हरषन्त, नमस्कार कर उठे तुरन्त।
बहुत बातको कहे बढ़ाय, अपने घरते पहूँचे जाय ॥१०३९

जन दशबीसक सूर बुलाय, कही बात तिनसों समझाय।
रहियो चिन्तवन मनमें भाय, जिनमन्दिर तुम बैठो जाय ॥१०४०

कोउ पट्ट उघारे जबैं, मोसों आन भाषियो तबैं।
आयस लेकर पहुँचे तहां, सहस्र कूट चैत्यालय जहां ॥१०४१

बैठे सुभट सु देखत रहे, कोउ तहां न आवन लहे।
निश दिन रहे यही व्यवहार, पंथ निहारें करें विचार ॥१०४२

तिह अवसर प्रोहण आइया, श्रीपाल मनमें धाइया।
जिन चैत्यालय वन्दो जाय, तब ही भोजन कर हूँ आय ॥१०४३

हर्षित सो नगरमें गयो, पुर शोभा तब देखन लग्यो।
घर घर शोभन कलश सुठार, मोतीनकी सब वन्दरवार ॥१०४४

ताहि देख आनन्दो हियो, भूल गयो आयस जो लियो।
कौतूहल देखो दिन गयो, ताके मनमें सोचन भयो ॥१०४५

चकित है सुध आई जबै, गुरुको वचन समारो तबै।
शुभ गति कर जिनमंदिर जहां, वन्दो जाय जिनेश्वर तहां ॥१०४६

अरु मुनिवरके वन्दूँ पाय, भोजन करूँ सवारो जाय।
यह भावत हिए भावन्त, अंग अंग मनमें हरषन्त ॥१०४७

जिनमंदिर देखियो महंत, तब आनन्दो सुन्दरी कन्त ।
अति उतंग कनकाचल तूल, नैनन देख भई जिय फूल ॥१०४८

卐　　卐　　卐

चाल उताल तबी धाइयो, ताके सन्मुख जब आइयो ।
जो देखे तो दिये किवार, तब इन मनमें कियो विचार ॥१०४९
श्रीपाल किंकर पूछिया, कारण कौन पट्ट यह दिया ।
कै काहू या दियो कलंक, कै विंतर या माहि निशंक ॥१०५०
कै कोउ है मिथ्याती देव, कारण कहा कहो तुम भेव ।
सोई बात कहो समझाय, जिससे मेरो विकल्प जाय ॥१०५१

२०—श्रीपाल द्वारा सहस्रकूट चैत्यालय खोलन

स्वामी यह है जिनको धाम, सहस्रकूट चैत्यालय नाम ।
वज्र किवारन मूंदो द्वार, कोउ नहीं उघाडन हार ॥१०५२
यामें कछू न और विकार, पंथी सुनो बात यह सार ।
यह बात सुन लीनी मान, कछू न कीनी तिनकी कान ॥१०५३
मनमें कीनो हर्ष अपार, धायो तब श्रीपाल कुमार ।
सिद्धमन्त्र तब जंपन लियो, और परमगुरु जिन सुमरियो ॥१०५४
ॐ नमः सिद्ध मन लन्त, उदघाटे जु कपाट तुरन्त ।
खुलतवार भर्म सब गयो, पुण्य फलेतें दर्शन भयो ॥१०५५
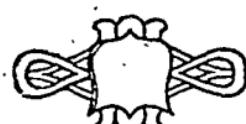
२१-श्रीपालका दर्शन स्तोत्र

जिन प्रतिबिंब देखियो जबें, जय जयकार उचारो तबें।
जय जय निःकलंक जिनदेव, जय जय स्वामी अलख अभेव॥१०५६
जय जय मिथ्यातम हर सूर, जय जय शिव तरुवर अंकूर।
जय जय संयम वन घन मेह, जय जय कंचनसम द्युति देह॥१०५७
जय जय कर्म विनाशन हार, जय जय भवगति सागर पार।
जय कन्दर्पगज दलन मृगेश, जय चारित्र धराधर सेश॥१०५८
जय जय कोह सर्प हत मोर, जय अज्ञान रैन हर भोर।
जय निराभरण शुभ सन्त, जय जय मुक्ति कामना कंत॥१०५९

बिन आयुध कोउ शंक न लहे, राग द्वेष तुमको नहीं चहे।
बिन थूले शांमें जिनचन्द, भविजन मन बाढे आनन्द॥१०६०
आज धन्य वासर धनवार, आज धन्य मेरो अवतार।
आज धन्य मो नयन विसार, तुम स्वामी देखे जु निहार॥१०६१
सीस धन्य आज मेरो भयो, तुमरे चरण कमलको नयो।
धन्य पाय मेरे भए अबें, तुम लौ आय पहुँचो जबै॥१०६२

आज धन्य मेरे कर भये, स्वामी तुम पद पर्शन लये।
आजहि मुख पवित्र मो भयो, रसना धन्य नाम जिन लयो॥१०६३
आजहि मेरो सब दुख गयो, आजहि मो कलंक क्षय भयो।
मेरो पाप गयो सब आज, आजहि सुधरो मेरो काज॥१०६४
अति मोदित भयो ताको हियो, पणविवि नमस्कार जब कियो।
बहुत स्तुति करी विहसंत, तब बैठो सुन्दरीको कन्त॥१०६५
ह्वै विशुद्ध सामायिक लियो, सर्व जीव समता राखियो।
फुनि नवकार मंत्र तिह ठयो, धर्म निधान ध्यानमें भयो॥१०६६

ऐसी विधि जब देखी सबैं, किंकर मनमें हर्षे तबैं।
अति फूले आनंदित भए, कछुयक जने राय पै गए ॥१०६७

जाय राय सो जोडे हाथ, विनती एक सुनो नरनाथ।
सुन्दर पुरुष पहुँचो आय, ताकी महिमा कही न जाय ॥१०६८

इम जिनभवन दिखायो ताहि, तिन ताके पट खोले चाहि।
अरु वन्दो तामे कोउ देव, संस्तुति कीनी जानो भेव ॥१०६९

कियो सामायिकको आरम्भ, धर ध्यान मानो कंचन खम्भ।
कछुयक जने उठे ही रहे, कछुयक तुम पै को उमहे ॥१०७०

मानस देव न जानो जाय, उठिए तुरत भेटिए राय।
यह सुन मन सन्तोषो राय, बहु धन तिनको दियो पसाय ॥१०७१

रोमांचित भर आई देह, भयो भूप सर्वांग हि नेह।
पुर डोंडी द्वाई नर नाह, सुन लागन मन भयो उछाह ॥१०७२

जिनवर जात पयासो भाव, उमड़ो लोग भयो मन चाव।
आपन हर्षो चलो नरिन्द, संग सकल युवतिनको वृन्द ॥१०७३

परियन लोग और जो भयो, सोई सकल साथ कर लयो।
वाजे बाजें तहां अनिवार, तूर मृदंग उपंग सु तार ॥१०७४

झलरि झँजत है सब ठान, ढोलन फिरि और नीसान।
गावें सुन्दरी मंगलाचार, कोउक जुरि नाचै अधिकार ॥१०७५

उमड़ो लोग नगरको इसो, मोपै कहो न जाहै तिसो।
ऐसो संकट जुरो अपार, पवन न तहां लहिये सार ॥१०७६

दिन कर बूरा उडा अति धूरि, गगन पन्थ सब रहियो पूर।
मत्तगयन्द तुरङ्ग जु भले, वाहन बहुत रायकै चले ॥१०७७

मनमें उपजो सुख अशेष, जिन मंदिर तब गयो नरेश।
जिनवर देखो कृपा निधान, सन्मुख राय गयो रंजान ॥१०७८

२२-राजा कनककेतु-दर्शन स्तोत्र

भीतर राव पहुँचो जबै, लागो स्तुति उच्चारण तबै।
तुम जिन सर्व कलेशन हरण, तुम जिन श्रीलंकृत शुभकर्ण ॥१०७९
तुम बिन जीव फिरे संसार, जोनी संकट सहे अपार।
तुम बिन कर्म छ.डे ना संग, तुम बिन मन उपजे भ्रमरंग ॥१०८०
तुम बिन भव आताप हि सहे, तुम बिन जरा जन्म मृतु वहे।
तुम बिन कोउ न लेय उबार, तुम बिन कर्म न मिटे लगार ॥१०८१
तुम बिन दुरय दु:खको हरे, तुम बिन कौन परम सुख करे।
तुम बिन को काटे जम फन्द, तुम बिन को पूर्वे आनन्द ॥१०८२
तुम बिन उपजे कुमति कुभाव, तुग बिन अवर न कोउ सहाय।
तुम बिन हितू न दूजो कोय, तुमबिन शुभगति कछु न होय ॥१०८३
तुम बिन हूं पापी भण्डियो, काल अनादि वाद हंडियो।
तुम बिन मैं दुख पायो घणो, वेदन शूल कहांलो गिणो ॥१०८४
मैं मनमें नहि जानो सोय, जाते दर्श तुम्हारो होय।
दया धर्म नहि कियो दिढाय, वार वार राजा पछिताय ॥१०८५
यह विधि स्तुति जु कीनी घणी, निन्दा बहुत चई आपणी।
नाना विधि रचना शुभ सची, अष्ट प्रकारी पूजा रची ॥१०८६

२३-कनककेतुका श्रीपालसे मिलाप

पुन देखो सब सुख दातार, भेटो तब श्रीपाल कुमार।
कुशल क्षेम पूछी बहु भाय, मनमें तबै चितयो राय ॥१०८७
पूर्व पुण्य सवारो काज, वर सुन्दर अति पायो आज।
धन्य सुगुरु जिह कियो पसाव, पायो फल जैसो मन भाव ॥१०८८
बोले भूप सुनो हो मित्त, मत डोलो तुम आपनो चित्त।
तुम देखत उपजो मो नेह, सोय सुनो कहानो येह ॥१०८९
मुनिवरने भाखो हो जोग, सोई पूजो आय नियोग।
जिह ठावे जो मिलनो है कहो, तिही ठा पुण्यवन्त तू लहो ॥१०९०
चल ह तुरत अब निर्भय होइ, कन्यादान देऊँ अब तोह।
कारण कवन पहुँचे आय, किम जिन मंदिर खोले जाय ॥१०९१
केवल नाम चरित है जिसो, मोसो प्रगट पयासो तिसो।
यह सुन सुन्दरि कन्त सुजान, निजमन चिते गुणहै निधान ॥१०९२
बुझे राव मर्म नहि लहे, अपनो नाम न उत्तम कहे।
किम कर प्रगटो मन अकुलाय, यह विचारत पहुँचो आय ॥१०९३
मुनिवर जुगल सर्व सुख गेह, जिन बंदियो धरो मन नेह।
फुन तिह ठौर गवन तिन कियो, पट्टापन स्वामी बैठियो ॥१०९४

तब तांई श्रीपाल नरिन्द, हर्षित है बंदियो मुनिन्द।
बहुत स्तुति करी धर भाव, बैठो कोटीभट अरु राव ॥१०९५
ते बाईस परीषह सहन, गुरु धर्म मुनि लागे कहन।
पहिलो समकित व्रत धारिए, जिनवर कथित धर्म पारिए ॥१०९६
अरु गुरु देव सेव मानिए, भेद भिन्न नाहि जानिए।
पुनि पंच परमेठ धर भाव, नीके कर वन्दो कर चाव ॥१०९७

प्रथम हि श्री जिनवर अरहन्त, दूजो सिद्ध जपो गुणवन्त ।
तीजो आचरज गुरु पाय, चौथा उवझाय मन लाय ॥१०९८॥
पंचम साध लोक गुण धीर, शुभ गतिकर नाशन भव पीर ।
तीनहु काल धरो दिढ चित्त, सेवो दंसन नान चरित्त ॥१०९९॥
अर नवकार जपिये नित, त्रिभुवनमें जो सार महत ।
नवकारो लहिए शिव सिद्ध, नवकारो लहिए सब सिद्ध ॥११००॥
नवकारो सुर नर सेवंत, नवकारे गुण गण जु अनन्त ।
नवकारे कल्याणक कन्द, नवकारे भंजन दुःख दन्द ॥११०१॥
नवकारे परिगह अरु चित्त, नवकारह वधू अर मित्त ।
नवकारे पितु जानहु मान, नवकारे हरे नीच सुभाय ॥११०२॥
जे तीर्थंकर भये पवित्त, नवकारह ध्यायो दिढ चित्त ।
नवकारे आराध्यो तेण, श्रीपाल वर भेटो येण ॥११०३॥

राजोवाच ।

स्वामी सुनो कहों धर भाव, को श्रीपाल कहावे राव ।
कृपा निधान कहो समझाय, जैसे मेरो विकल्प जाय ॥११०४॥

मुनिश्वर उवाच ।

नीके कर तुम देखो चाहि, यह जु देख ढिग बैठो आहि ।
जो नीके कर पूछो मोहि, यांको चरित सुनाऊँ तोहि ॥११०५॥
अंग देश देशनमें सार, चम्पापुर तामें अधिकार ।
करे राज अरिदवन नरेश, जाके परिग्रह बहुत अशेष ॥११०६॥
वीरदवन ता लहुरो वीर, कोटीभट अर साहस धीर ।
कुन्दप्रभा राणी अरधंग, रूपवन्त गुणसायर चंग ॥११०७॥
ताके गर्भ जन्म यह लियो, राज भार सब याको दियो ।
आपन भये काल वश राव, यह परजा पर राखो भाव ॥११०८॥

राज करत दिन वीते घने, पूर्व अशुभ कहत नहि वने।
कुष्ट व्यधि उपजी या अंग, सेवक हुते सातसे संग ॥११०९

तिनहूको तन कुष्टी भयो, वासर वहुत महा दुःख दयो।
चिंता वहुत व्यापी ताय, वीरदवन थापो निकुताय ॥१११०

अंग सातसे संग लगाय, आपन वनमें पहुँचो जाय।
पुर उज्जैनी मालवो देश, करे राज पहुपाल नरेश ॥११११

कर्म योग ऐसी मति भई, मैनासुन्दरी याकों दई।
अष्टाह्निकाको व्रत तिन कियो, वहु विधि सिद्धचक्र पूजियो ॥१११२

गन्धोदक सो छिडको अंग, ऐसो निर्मल भयो अभंग।
अर जे अंग सातसे वीर, निर्मल तीनको भयो शरीर ॥१११३

तहां रहत मन उपजी लाज, उद्यम कियो राजके काज।
चलो विदेश अकेलो अंग, दूजो जनो न लीनो संग ॥१११४

❀ ❀ ❀

माता तहां मिली थी आय, चालो ताहूको छिटकाय।
आपन वन गिरवर नाषन्त, गयो एक वन मांहि तुरन्त ॥१११५

तहां एक विद्याधर वीर, विद्या साधत दहे शरीर।
आवै क्यों हूं थांथिन ताहि, विनती कीनी या तन चाहि ॥१११६

दया मोह याके मन भयो, विद्या गण साध ता दयो।
द्वय विद्या याको तीन दई, सुकृचत तापे से इन लई ॥१११७

ताहि छाडि आगे पग धरो, उपवन एक तहां चल गयो।
द्रुम तर रहो थकित ह्वै सोय, ताम कहां लौं अचरज होय ॥१११८

❀ ❀ ❀

धवल सेठ विणजारो आहि, द्रहमें परे परोहण ताहि।
टारे टरे न संशय भयो, मन्त्री एक मन्त्र तब दियो ॥१११९

एक पुरुष बलि दीजे जबै, सेठ प्रोहण चलत है तबै।
तिह मतिहीन दूत पाटए, याहि पेल तापैं ले गए ॥११२०
तिह पापी मन अदया धरी, तब ही यह बात उच्चरी।
प्रोहण चले जीव जो रहे, तो तो कछु न कोऊ कहे ॥११२१
यूंही जे तू देय चलाय, तो हम परे तेरे पाय।
यों सुन दया भई मन आय, पेल परोहण दये चलाय ॥११२२
बल देखत मन लालच भयो, धवलसेठ गोहण कर लयो।
प्रणमत कर चरणन गहि रहो, दशम हिस्सा धन देनो कहो ॥११२३
आगे चले महा सुख पाय, लाख चोर तह पहुंचे आय।
तिन संग्राम सेठ सो कियो, घडीयक झूझ बांध तब लियो ॥११२४

❦ ❦ ❦

बणिवर पहुंचे यापै आय, छिनमें लीनो सेठ छुडाय।
नेकन आयुध लीनो हन्थ, सबै परस्पर लीने बन्ध ॥११२५
बहुरो तिन ले गयो निज थान, बहु सन्मान कियो दे पान।
तिनको विदा दई धर भाव, ते घर गए कियो मन चाव ॥११२६
रतनन भरे परोहण सात, पूर्व कर्म थकी या बात।
दीने श्रीपालको आय, बहुरो गेह गए गहि पाय ॥११२७
अचरज कीनो सब ही संग, हर्षित भयो सेठ सर्वङ्ग।
वहांसे चले को कहे बढाय, तेरे नगरमें पहुंचे आय ॥११२८
अब लो भयो चरित हो जिसो, तीसों प्रगट कहो हम तिसो।
आगम चरित घनो है और, अब कहिवेको नाहीं ठौर ॥११२९
जो कछु भयो सो तोसो कहो, हरषो भूप भेद सब लहो।
पणविधि श्रीपाल अरु राय, मुनिवर युगल गयो समझाय ॥११३०

२४-श्रीपालसे रयणमंजूषाका विवाह

कनककेत रंजो अधिकार, वाजे तहां वाजे अनिवार ।
श्रीजिनवर वन्दो बहु भाय, अपने घर तव गयो लिवाय ॥११३१
धवलसेठ तह लियो बुलाय, सोई तिहठां बैठो आय ।
बहु सन्मान तासका कियो, वणिवर वृन्द सबै हरषियो ॥११३२
तव शुभ घडी लगन तिह ठई, मंगलचार नाद धुन भई ।
पुन तहां मण्डप कीनो चार, जैसो दोय वंश व्योहार ॥११३३
रयनमंजूषा गुणह विशाल, श्रीपाल व्याही सुखमाल ।
सोवो दीयो लूठिके राय, चवर छत्र हय गय अधिकाय ॥११३४
दीनो मणि रतन भण्डार, दासी दास दिये शुभ सार ।
और बहुतको कहे बढ़ाय, दीने नये महल करवाय ॥११३५
रयनमंजूषाके सो संग, कोटीभट भुञ्जे बहु रंग ।
नित नित जिनमन्दिर पग धरे, मुनिवर दान भक्ति बहु करे ॥११३६
भूपति वार वार यों कहो, भलो जवाई पुण्यहि लहो ।
बढी प्रीति प्रगटी सुखखान, करे भोग सो इन्द्र समान ॥११३७

ऐसे रहत गए दिन जबै, धवलसेठ यो विनयो तबै ।
भो कल्पद्रुम रायनके राय, तुम सो कह न सके मन पाय ॥११३८
प्रोहण भरे वस्तु शुभ आन, वासर बहुत गए इस थान ।
अब तुम हम पर कृपा करेह, संग दो कुवर प्रगटजस लेह ॥११३९
सागर नाखें वचन सुनेव, सबै अंग अकुलाने देव ।
ऐसो वचन भूप सुन लियो, वोलो कछू न उत्तर दियो ॥११४०
मौन ही यह पहुंचो निज गेह, राणी वरजो भरियो नेह ।
सुख सो कछूक गए दिन जाम, बहुरो धवल वीनयो ताम ॥११४१

हम पर कृपा करो नरनाथ, देहो विदा हम जोरत हाथ।
यह सुन मनमें सोचे राव, अति हठ किये विनसे यह चाव ॥११४२

राजा यह विचारो चित्त, रयनमंजूषा जोग पवित्त।
दीने भूषण वस्त्र अपार, दीने गज मोतियोंके हार ॥११४३

दीने नग निर्मोलक खरे, तिनके कछू परोहण भरे।
अगणित दीए पटंवर ओर, कुवरी जोग दीन चण्डोर ॥११४४

कछू सेन दीयो शुभ सार, कवि परिमल्ल न जानो पार।
राजा सुता अंक भर लई, तासो प्रथम वात यह चई ॥११४५

गद्द भर कहे पुत्री सुन भाय, हम तो आनद्द जन्म मिलाय।
जननी भेटी कण्ठ लगाय, सफल परिग्रह भेटो आय ॥११४६

झलहलंत भर लाने नैन, लागो राव तवै सीख दैन।
साधु सुपरको धरियो मान, तेरो पुत्री यह है सयान ॥११४७

चलियो कुलकी रीत न जाय, यह सीख गहियो निकुताय।
जननी वहुत भेंटियो सोय, यह मिलन वहुरो नहि होय ॥११४८

या सुन कुवरी हियो भर लियो, अश्रुपात रुदन तब कियो।
गद्द भर राव कहे शुभसार, सुन हो कोटीभट श्रीपार ॥११४९

मोते कछू न तोकों भई, यह दासी सेवाको दई।
सब अपलक्षण यामें आहि, अति कुरूप है सब ही चाहि ॥११५०

कोटीभट उवाच।

बोलो शत्रुदवन सुत जोय, राजा तुम सम अवर न कोय।
तुम हम जोग परम पद दियो, तुम जब प्रगट देशमें भयो ॥११५१

राजा उवाच ।

सुन सुन कुवर कहो सब सोय, पुण्य जोग दर्शन लह्यो तोय ।
सो अब हमको दुद्धर भयो, दोउ मिले हिये भर लियो ॥११५२
बोलो राव सुनो श्रीपार, मनमें राखजो सुख दातार ।
और कहां हूँ कहूँ बनाय, कबहूँ दर्श दीजियो आय ॥११५३

कोटीभट उवाच ।

स्वामी सुनो बात दे कान, नीके कर हूं कहूँ बखान ।
सज्जन बसे कोष सै चार, प्रीति न टरे देखियो टार ॥११५४
पंक्षी टटीहरी कहे विचार, अण्डा देय सिन्धुकी पार ।
आपन देश देशांतर जाय, मनमें तैं अण्डा न भूलाय ॥११५५
रहे गगनमें शशिकी छांहि, पद्मिनी रहे सरोवर मांहि ।
मनमें प्रीति भाव दिढ रहे, विगसावे सब कोऊ कहे ॥११५६
बादल यद्यपि रोके ताहि, सो ना दूर देखियो चाहि ।
मनमें सुरति रहे अति नेह, विकसावे कुमुदिनीके गेह ॥११५७

꧁ ꧁ ꧁

सुनो राय देखो जिय जोय, मनको प्यारो प्रीतम होय ।
नेह न टरे रहे भरपूर, रहे समीप कि निवसे दूर ॥११५८
दुर्जन सदा समीप हि रहे, गुण छाडे दिन ओगुण गहे ।
तासों प्रीति कीजिये घणी, अरु सेवा कीजे ता तणी ॥११५९
पंचामृत दीजो जो नार, सो दुःख देय अन्त अधिकार ।
जो भुजंग वनमें ते लाय, अपने गेह राखिए आय ॥११६०
अमृत भख दीजे दिनमान, कालकूट हो जाय निदान ।
क्षणमें डसे न राखे नेह, दुर्जन कथा सबै सुन लेह ॥११६१

दोहा।

दुर्जन जन सबतैं बुरो, तजे न दुष्ट स्वभाव।
ज्युं भुजंग अमृत पीए, विष उगले मन चाव ॥११६२

चौपाई।

सज्जन जनकी उलटी रीति, जो दुख लहे तो मनमें प्रीति।
बहु प्रपंच तासको होय, सहज स्वभाव न छाडे सोय ॥११६३

दोहा।

ईष काटिये दुःख दे, बहु सुख देवे मीठ।
कनक अगन जिम जिम तपै, तिमतिम कांति गरीठ ॥११६४

चौपाई।

सज्जन जनको नीको संग, कबहू न होय प्रीतिको भंग।
मोसे दास तुम्हारे घणे, मोहे राखियो मन आपने ॥११६५

राजा उवाच।

झूठी एक अंगकी प्रीति, ऐसी एकनके हू रीति।
अगलो मरे चित्त अकुलाय, इत मोयाके कछु न भाय ॥११६६
ऐसी प्रीति धरे चित मीन, जलमें रहे अहो निशि लीन।
जल विन प्राण तजे अकुलाय, जल मूरखको कछू न जाय ॥११६७
सुनो बात कोटीभट वीर, सुरत राखिये साहस धीर।
तुम तो पुण्यपुरुष अब आहि, तुम विछुरत हम दुख लहाहि ॥११६८

दोहा।

जो मेरे मनमें रहे, तुम सो प्रीति उछाह।
सो तुम कोटीभट सुनो, कीजो प्रीति निबाह ॥११६९

२५-रयनमंजूषा व श्रीपालका हंसद्वीपसे गमन

चौपाई ।

ऐसो वचन सबै सुन लिए, दोनों गद्द भर हिये लिए ।
दोनों मिले बहुर उर लाय, फिरो रावको कहे बढाय ॥११७०
फिर फिर पाछो जोवत जाय, दोऊ मिलनेको ललचाय ।
अति विलखानो मन दुःख पाय, राजा गेह पहुंचो आय ॥११७१
श्रीपाल भामनी समझाय, दोनों प्रोहण बैठे पाय ।
परस्परस उपजो आनन्द, दोहून परो प्रेमको फन्द ॥११७२
सोवो सबै भण्डारे धरो, ताको कछु गणत नहि करो ।
दोहूनके मन हर्षित भए, दोउ चतुर मैण शर हए ॥११७३
रणनमंजूषा गुणह निधान, शीलवन्त सीता समान ।
दोनों जन भुंजें सुख जिसो, मकरध्वज रतिके संग तिसो ॥११७४
महा पवन चलियो अधिकार, प्रोहण चले न लागी वार ।
वणिवर सबै रंजियो चित्त, श्रीपालके देख चरित्त ॥११७५

आपसमें जंपें धर नेह, देखो पुण्य तनो फल येह ।
उपवन सोवत हो विगरार, मारण लाए हुवो उदार ॥११७६
धन भण्डारसो सोंपो आहि, सेठ पूत कर बोलो चाहि ।
इन ही एक अकेलो जान, लक्ष चोर बांधे परवान ॥११७७
जाय उघाडो जिनको गेह, दर्शन काजे कीनो नेह ।
राजा तहां पहुंचो आय, गेह आपने गयो लिवाय ॥११७८
कन्या दीनी रूप निधान, सोवो दीयो विनां उनमान ।
तहां रहत सुख पायो घणों, यह तो पुण्य चयो आपणो ॥११७९

याके पोते पुण्य सहाय, यह होय भूमिको राय।
चणिवर कहें सबै जिय जोय, पुण्य सहाय सबै कछु होय ॥११८०

दोहा।

वसुवती हय गय सुधन, सुरसुख शिव सुख जोय।
सो त्रिभुवनमें है सही, पुण्य विना नहिं होय ॥११८१

चौपाई।

यही पुण्य फल कह्यो तुरन्त, सायर चले जात जलजन्त।
रयनमंजूषा और श्रीपार, भोग भोगवें सुख अधिकार ॥११८२
एक दिवसकी कही न जाय, कोटिभट बोलो विकसाय।
तात तुम्हारे अजुगत करी, मुहि परदेशी कन्या वरी ॥११८३
ऐसे सुने मंजूषा वैन, जल भर रूप लिए कर नैन।
वारवार विलखे मुरझाय, श्रीपाल बोलो अकुलाय ॥११८४

सुनहु नार तोसों उच्चरों, भेद आपणों प्रगट ही करों।
देश अंग है कञ्चन खान, वसे नगर चम्पापुर थान ॥११८५
तहां भयो अरिदवण नरेश, कालवश भयो सुयश अशेश।
कुन्दप्रभा जननी मो तणी, सत शील सीता सम गुणी ॥११८६
कारण एक पहुंचो आय, तब ही सुख चाल्यो छिटकाय।
वीरदवन काको मो तणों, ताहि राज सोंपो आपनों ॥११८७
दूजो देश मालवो वसै, पुरी उज्जैनी तहां सु वसै।
करै राज पहुपाल प्रचण्ड, लीनो सब रायन पै दण्ड ॥११८८
तास सुता मैनासुन्दरी, रूपवन्त सब ही गुण भरी।
सो मेरी प्रीतम वर नार, रूपवन्त रम्भा उनिहार ॥११८९

अर मेरी जननी शुभ पन्त, अवर मित्त सातसै महंत।
तहां रहत को कहे वढाय, तीजे धवलसेठ निकुताय ॥११९०

॥ ॥ ॥

चौथी तू वरनी वर नारि, परदेशी हूँ लेह विचारि।
यह सुन चाहि वहुत सुख भयो, तवतें दुख तापको गयो ॥११९१
खेलें हसै महा सुख रहें, सुपनै हूं ते दुःख न लहें।
पूर्व कर्म अशुभ कियो जोय, वहुरो प्रगट न लागो सोय ॥११९२
एक ही वासुर सेठ निहारि, रयनमंजूषा सो वर नारि।
होनहार ताकी मति गई, कछु कुवुद्धि तासकों भई ॥११९३
देखत दुष्ट विकल हो गयो, विरह विथा अति व्यापन लयो।
मूर्छि परो कछु नहीं संभार, सुध पाई श्रीपाल कुमार ॥११९४
भरी अंकतसु उठावन लियो, चपल निलज्ज पवन पेखियो।
कोटीभट तब छिडक्यो नीर, उठि वैठो सो चेति शरीर ॥११९५
पूछे वीर ताहि विलखन्त, कारण कहा कहो विरतंत।
कै काहू व्यंतर चापियो, कै सायर जलतें कांपियो ॥११९६

सेठ उवाच।

सुनो वात भयभंजन वीर, दुख नाशन अर साहस धीर।
वाइ मरोरी भई प्रचण्ड, उपजत लखो प्राण नखण्ड ॥११९७
वरष पांच दश वीते जवैं, यह मोकों व्यापत है तवैं।
धवल सेठ यह कही वनाय, अन्तर पाप न प्रगटो जाय ॥११९८
शत्रु दवण सुत विलखो भयो, शुद्ध चित्तसों थानकि गयो।
रवि आथयो प्रगट भयो चन्द, पापी चढ्यो विथाको कंद ॥११९९
तलफै सेठ भई मति हीन, ज्यों वांछे जल तलफे मीन।
ज्यों कपि लोटें विछू खाय, त्यों पापी लोटें विललाय ॥१२००

काहूकी नहीं बात सुनाय, गीत विनोद कछु न सुहाय।
अति कंप तल उलटो सास, वणिवर मन्त्री बैठे पास ॥१२०१
औषध वैद करे ज्यों अपार, त्यों त्यों रोग बधै अधिकार।
विथा होय ताको उपचार, क्यों करि मिटै कामकी झार ॥१२०२

तब मन्त्री बोलिया सु जान, कारण कवन कहो परमाण।
छिन छिन दुख बाढत है घनों, स्वामी कहो भाव आपनो ॥१२०३
जोई औषधि तुमैं सुहाय, सोई करै कहो समझाय।
यह सुन महा दुष्ट उच्चरै, प्रेरो कर्म कहा नहि करै ॥१२०४
मनकी लाज दई छिटकाय, सब ही सों बोल्यो विहसाय।
रयनमंजूषा भेटो जबै, मेरो दुख भाजेगो तबै ॥१२०५
यामें कछु न दूजी आन, विन भेटे मोहि जाय परान।
पापी वचन जबें इम सुनों, वणिवर मन्त्री माथों धुनों ॥१२०७
हा हा कार कर तजि सेव, अजुगत बात कही तुम देव।
मिथ्याती जो जीमें धरें, भलो न ऐसो कर्महि करें ॥१२०७

यह श्रीपाल कियो तैं मित, तामैं वसे तुम्हारो चित्त।
अर सब हीको सुख दातार, तेरे प्राणनको रखवार ॥१२०८
धर्म पूत है देख विचारि, यह सुन्दर वर ताकी नारी।
उत्तम कुल जाको अवतार, संयम शील गहे व्रत भार ॥१२०९
धर्म मूल है सुन निकुताय, दर्शन देखत पातक जाय।
ता तन तूं कुदृष्टि मत धरै, मति दुर्गति विण कानहि परै ॥१२१०
नरह जन्म अति उत्तम आहि, पायो है मति खोवो ताहि।
बात हमारी जियमें मान, मति तुम करो सर्व सुख हान ॥१२११

पर घरणी पातकको अंग, पर घरणी तैं चढै कलंक।
पर घरणी विष वेलिज कहै, मूरख ताकों लालच गहै १२१२

पर घरणी पापकी धाम, जल मरिये ताकों लिए नाम।
पर घरणी सर्पिणी उनहारि, पर घरणी तैं आवै गारि ॥१२१३

पर घरणी सब दुखको मूर, पर घरणी नर सेवैं कूर।
पर घरणी तैं बढै उपाधि, पर घरणी मति देखो साधि ॥१२१४

पर घरणी तैं बाढै त्रास, पर घरणी तैं मूल विनास।
पर घरणी रावण वांछियो, सब कुल सहित सीस तिह दियो ॥१२१५

पर घरणी साहसगति चाह, दुरगति गयो हण्यो सिर ताह।
पर घरणीकी चोरी बूरी, अन्तकाल सो रहे न दूरी ॥१२१६
पर घरणी तजिये परवान, पैवह तेरी वहू समान।
अर ये सुख कोटीभट लहै, हमें तुमें कुल सूधा दहै ॥१२१७

बहुत बातको कहै बढाय, सागर जलमें देय बहाय।
ऐसी बात सेठ सुनि लई, ताके मनमें तैं चलि गई ॥१२१८
पोयण पत्त परै जल आय, छिन मैं ता परितैं टरि जाय।
पापीके मन मैं गुरु कहै, बात न एक धर्मकी रहै ॥१२१९

श्लोक।

कामलुब्धे कुतो लज्जा, अर्थहीने कुतः क्रियाः।
सुरापाने कुतः शौचं, मांसाहारी (रे) कुतो दया ॥१२२०

चौपाई (अर्थ)

काम लुब्ध लज्जा परिहरै, अर्थ हीन क्रिया नहीं करै।
सुरापानतैं शुद्धि सु जाय, दया हीन है आमिष खाय ॥१२२१

धवलै बात न कछु सुहाय, सब मंत्रिनसों उठो रिसाय ।
अरे ढीठ मति कछु कहाव, आप अपने थान को जाव ॥१२२२

मेरे मनकी लखो न कोय, सोही कहत जो मो दुःख होय ।
इन मूढन कछु भेद न लहो, काम वशको को नहि गहो ॥१२२३

काम वश शंकर वर चन्द, पार्वती लीनी अरधंग ।
काम बाण हिरदै जब हुयो, ब्रह्मा चार बदन ह्वै गयो ॥१२२४

काम वश सुरपति अर इन्द, काम वश रवि और फणिंद ।
काम वश कामनिमें प्राण, निज पर कथा न सुनिये कान ॥१२२५

वणिवर मन्त्री सब ही सुणी, बहुरो तासो विनती भणी ।
स्वामी यह श्रीपाल कुमार, तेरो कियो कहा बिगार ॥१२२६

सायरमें थकीयो जल जन्त, तब तिन काढे चले तुरन्त ।
तसकर ले बांधो तू पार, तिन पैं तैं जो लियो उबार ॥१२२७

अर वह पुण्यवन्त गम्भीर, जाके पुण्य न पावे तीर ।
वचन हमारो जियमें धरो, ता तन मति कुदृष्ट तुम करो ॥१२२८

पापकर्म मति वांछो अबै, जै यह कहैं सायरमें सबै ।
तब पापीको उपजो कोह, मारणको कीनो दय छोह ॥१२२९

मन्त्री तब मिले ते आय, गहा दुष्ट दुष्टनके राय ।
धवलसेठ सो विनती करी, स्वामी जो कछू तुम जिय धरी ॥१२३०

सोई करें तजो सन्देह, बोलो सेठ धरो मन नेह ।
सोई मन्त्र करो जो कहूं, जैसे रयनमंजूषा लहूं ॥१२३१

२६-धवलसेठद्वारा श्रीपालको समुद्रमें गिराना

यातो वात कहां है देव, हम तो वहुत करेंगे सेव ।
मंत्र हमारो उपजो जिसो, तुमसो अवै पयासो तिसो ॥१२३२॥
मरजीये कछु लोभ दिखाय, कहिए सव विरतन्त वुलाय ।
झूठे ही उठ करो पुकार, सुर सुभट दौडो तिह वार ॥१२३३॥
उमगत वर्त चढेगो जवै, हम यहां काट देहंगे तवै ।
जाय परेगो सिंधु मझार, रयनमंजूषा ताकी नार ॥१२३४॥

यह सुन सेठहि अति सुख भयो, ता छिन वोल मरजीया लियो ।
ताको कछु द्रव्य तिन दियो, अरु सन्मान ताधको कियो ॥१२३५॥
तासो वात कही समझाय, झूठो शोर कीजियो जाय ।
धावो धावो सुर जु होय, चढो वेग देवता सोय ॥१२३६॥
जो कोउ चढ है अकुलाय, देह सायर मांहि गिराय ।
यह सुन मरजीया जिय धरी, लालच वन्ध संक नहि करी ॥१२३७॥
सव भांतिनते उठे पुकार, ध्याइहु वनिवर संग संभार ।
ध्यावहु श्रीपाल इतवार, नातर कलहे वढे अतिधार ॥१२३८॥
डोलत देखत हो जलजन्त, लागे वेग पुकार करन्त ।
तव सागरे वोले अकुलाय, कहां कहो तू कहे समझाय ॥१२३९॥
किधो मछ जलमें उछरो, किधों चोर आवत भय भरो ।
किंधों भवर तो ऐखत लियो, वहुतहि शोर कहां तो कियो ॥१२४०॥

यह सुन श्रीपाल रिस भई, सव निझाटे गारी दई ।
जोलौं भेद कहेगो येह, तोलौं कलह वन्धे सन्देह ॥१२४१॥

कोटीभट यों रहो न जाय, आपन वडा वर्त पर आय।
धीरे धीरे संधि कराय, कोउ जियमें मत अकुलाय ॥१२४२

इतनों बोल बोलियो जबै, पापन करत काटियो तबै।
परो सिन्धुमांहि झंपुन कियो, सिद्धमन्त्र तिन जम्पन लियो ॥१२४३

हय हयकार सबन मिल करो, बारबार तब यों उच्चरो।
श्रीपाल भट वैरि निःशल्ल, रयनायर पडियो बहु मल्ल ॥१२४४

धायो धवल सुनी जब कान, तातन देख गयो अवसान।
मन मैलो कर मुँह मुसकाय, आपसमें सगरे पछताय ॥१२४५

धवल जु रोवे चित्त विकार, दई धाह दुख सहो अपार।
मुहकर कहे महादुख दियो, जियमें ताहि बहुत सुख भयो ॥१२४६

या सुन रयनमंजूषा बात, मूर्छा परी अचेतन गात।
नेकन तां के फुरहि निसास, छाटी नीरसों उठी उदास ॥१२४७

नाह नाह जप सुन्दरी, हा विधि कर्म कहांते करी।
अनमांगो दुख दीयो मोह, विधिना या पूछि सुन तोह ॥१२४८

धाहज मूकी दुःख अपार, करता पासन कहूं उबार।
पूर्व कहा पाप मैं कियो, ऐसो दुख विधना कित दियो ॥१२४९

कै मैं पर पुरुषह मन धरो, कै पिय आयस जियसे टरो।
कै मैं काहूको व्रत हरो, कै मैं भविजन भाव न करो ॥१२५०

कै मैं निंदा जिनवर धर्म, कै मैं अशुभ कमायो कर्म।
कै मैं जीवदया परहरी, कै कहूँ कहूँ अग्निमें जरी ॥१२५१

कै मैं मिथ्या गुरु सेइयो, कै मैं कुपात्र दान जो दियो।
कै मैं कहूँ उघारो अंग, कै मैं कियो वरतको भंग ॥१२५२

कै गुरु कहो लियो न मान, कै मैं झूठो बोलो जान।
कै मैं परगुण मेटो पाय, कै कहु गिरी नदीमें जाय ॥१२५३

कै मैं कहूँ दुःख दीयो वीर, कै अन छानो पीयो नीर।
कै मैं कन्दमूल फल खान, भरो उदर अर पोपे प्राण ॥१२५४
कै मैं शीलरयन छाडियो, कै कवहूँ निज कुल भांडियो।
कौन पाप मैं कियो जोग, जाते परो कन्तको शोग ॥१२५५

हा कोटीभट साहस धीर, जीवदया पालन गम्भीर।
हा मकरध्वज रूप सुजान, हा कुलकमल प्रफुल्लन भान ॥१२५६
स्वामी अब ही कृपा करेह, क्यो न हमें दिखाई देह।
तडफत है दोउ मो नैन, तडफत श्रवण सुनावो वैन ॥१२५७
तुम विन को करहै जिन सेव, तुम विन को जाने वहु भेव।
तुम विन सिद्धचक्र व्रत सार, को करहै गुण गुणिन अपार ॥१२५८
तुम विन मूल मन्त्रको गुणे, तुम विनको जिनधर्म हि सुणे।
हा परोहण चालन सुकुमाल, हा तसकर गणके प्रतिपाल ॥१२५९
हा उद्घाटन जिनवर गेह, हा भविजन रंजन गुण रेह।
हा अरिजन भंजन सुप्रचण्ड, हा सज्जन रंजन वलि वण्ड ॥१२६०

हाय पिता हा जननी मोहि, अब हूँ कहा देख हो तोहि।
चित्र विचित्रह वीरहा वीर, हूँ अनाथ सागरके तीर ॥१२६१
हा मैनासुन्दरि गुणाल, किम सहि है यह दुःख विशाल।
को अरिदवन वंश उद्धरे, को चम्पापुर राज हि करे ॥१२६२
सब सुख पूर करेको जाय, मग जोवती कुन्दा माय।
को करही मम संगह गौण, वारा वरस पूजिहे कोण ॥१२६३
को पूजा कर है अष्टांग, को राखिह सातसे आंग।
नाह अकेली सागर तीर, तुम क्यों छोड़ी साहस धीर ॥१२६४

हा वाल्लम तू देख विचार, शोक समुद्रसे लेहु उभार।
प्रीतम यह बुझिए न तोहि, छाड़ गए तट ऊपर मोहि ॥१२६५
आपन परे सिंधुमें राय, यह दुःख मो पै सह्यो न जाय।
तुम तो हो नागर गुणवन्त, सो अब कहां गमायो कन्त ॥१२६६

दोहा।

हय सुख गय सुख राज सुख, मैनासुन्दरि नार।
सबनि छाड सायर परे, मनमें कहा विचार ॥१२६७

चौपाई।

हय सुख गय सुख छाडो राज, मैनासुन्दरी अर सब साज।
अर मोसी दासी छिटकाय, क्यों तुम परे सिंधुमें जाय ॥१२६८
नांह तुरत मो उत्तर देहू, कै अब मेरी हत्या लेहु।
यह पुण पुण जंपै सो बाल, आंसू परें मोतिनकी माल ॥१२६९
कंपे अधर वहुत विलखाय, चकित है चितै अकुलाय।
वणिवर सगल मिले तिहवार, मनमें दुःख व्यापो अधिकार ॥१२७०

❀ ❀ ❀

आये रयनमंजूषा पास, तामैं जोवें लई उसास।
सवै जोर कर ठाडे भये, ताके चरण कमलको नये ॥१२७१
हे पुत्रि तू देख विचार, अपने मनको शोक निवार।
जो कछु भावी विधि निरमई, सोई ताको निश्चय भई ॥१२७२
जो दशहुं दिश भ्रम वो करे, जो गिरवर ऊपर पग धरे।
जो बूडे सागरमें जाय, अमृत रस जो भखे अगाय ॥१२७३
शरणागत सुरपतिके रहे, हर हरि आयु आप कर गहे।
बहुत कहां कीजिए दृढ़ाए, छाडे नहीं उतोउ यमराय ॥१२७४

❀ ❀ ❀

अरु यह अशुभ कर्मको जोग, ताको कहां कीजिए शोग ।
पूर्व अशुभ उदय भयो आय, लछमन राम रहे वनजाय ॥१२७५
अर सीता है तिनके साथ, अतिहि दुख पायो रघुनाथ ।
वन फल खाय बहुत दुख भरे, सयन कियो कुशके साथरे ॥१२७६
दुखसुख निशिवासुर भर लियो, विधिना सो कछु चलै न कियो ।
अशुभ कर्म सीताको दयो, महा दुख राखिस वश भयो ॥१२७७
बारां वरस गए चलि जवै, रामचन्द्र फुनि कोपो तवै ।
महा युद्ध रामने कियो, रावण मार जगत जस लियो ॥१२७८
इत उतको सहु दल संघारि, घर ले आयो सीता नारी ।
ता परि वहुरि कर्म कोपियो, देश निकालो ताकों दियो ॥१२७९
रावण भयो पुहमिको राव, सेवत जाहि वहुत भट वाह ।
लंका सों गढ़ लग्यो अवास, सायरकी खाई चहु पास ॥१२८०
नाती पुण्य वहुत अधिकार, हय गय वाहन अगण अपार ।
कर्मकोप जब कियो निदान, कुलवल सहित गयो क्षयमान ॥१२८१
महा वलिष्ट साहसगति राव, अशुभ कर्म ता कियो सहाव ।
हर लीनी तारा सुन्दरी, काहूकी तिन संक न करी ॥१२८२
ताको कछु विलंब न भयो, छिणक मांहि माटो मिल गयो ।
सबतैं वली कर्मको फन्द, सदा रहै थिर दुःखको कंद ॥१२८३
ताकी कथा कहत नहीं वणों, सुर नर नृपति विडंवै घणो ।
मनमें वात साच यह जाण, पुत्री वात हमारी मान ॥१२८४

दोहा ।

प्राणी वश है कर्मके, जित डोरे तीत जाय ।
ते पहुंचे निर्वाण पद, जिन दिनो छिटकाय ॥१२८५
आशा जाकी पास है, करता वली अपार ।
सुखकी वात न जाणिए, दुःखके भरे भण्डार ॥१२८६

चौपाई ।

मनमें श्री जिनके मत लेह, पियको शोक छांड तू देह ।
अर तुम धर हु शीलको भार, दूख भंजन त्रिभुवनमें सार ॥१२८७
यह सायर गंभीर संसार, पसरयो तहां मोहको जार ।
प्राणी परै मीन ज्यूं आय, दुख पावे मनमैं पछताय ॥१२८८
पुत्री मोह देय छिटकाय, कोइ पूत पिताका माय ।
को काको वालमको नारि, नीकैं कर तूं देख विचारि ॥१२८९
कर्म पाश बांध्या दुःख सहै, मूरिख दुःखहीको सुख कहै ।
सुखकी बात न भावै चित्त, भूलो भवके देख चरित्त ॥१२९०
परिहर दुःख जु यह विचार, शील पुरुष सब सुख दातार ।
सकल क्लेश हने गुण धार, या प्रसाद लहिये भव पार ॥१२९१

यह सुन कै सो उपशम भई, दुःखकी बात बिसर सब गई ।
माया जाल प्रगट जिय जोय, मिथ्या कर जानो तिन सोय ॥१२९२
करती जाप विचारे ज्ञान, श्री जिन ऊपर राखे ध्यान ।
बोले कबहि न मुख कर वैन, निशि दिन रहे नवाए नैन ॥१२९३
दिन दो चार गए मन धरे, पानी पीवे न भोजन करे ।
तेल अंग नहीं करय शरीर, न्हायन कबहू मैले चीर ॥१२९४

संयम ज्वाला सो तन दहे, ऐसे परम वियोगिनी रहे ।
येह विध गए वहुत दिन जाम, पापी धवल विचारी ताम ॥१२९५
परे न कल अतिमन अकुलाय, दूय दूती तब दई पठाय ।
बैठी जाय तासके पास, जो देखे तो खड़ी उदास ॥१२९६
कपट रूप वोली दुःख पाय, हे पुत्री मनको समझाय ।
जो कछू होनहार सो भई, सुखकी निधि तेरी गिर गई ॥१२९७

विधिना तोको अति दुःख दियो, पुत्री अब गाढो कर हियो।
अपने मनमें देख विचार, तूतो धर्म विचक्षण नार ॥१२९८
तोलौ शील पालिये नित, धर्म ध्यान धरिये दिढ चित्त।
अरु धरिये संयमको भार, जोलौ सिरपर हो भरतार ॥१२९९
अब तू नीके कर जिय जोय, मूवो कंत जाने सब कोय।
पुत्री तो निरंकुश भई, अब तो चिन्ता तेरी गई ॥१३००
जो तेरे मन वरते आय, सोई कर सब दे छिटकाय।
यह मन चंचल चाहे सुख, ताको तू तज पावे दुःख ॥१३०१
जो तृण चरै जो पीवे नीर, मकरध्वज ता दहे शरीर।
तूतो छह रस भोजन करे, पीवे जल अरु सुख व्योहरे ॥१३०२
बिछुरे सबे मिलत हैं आय, जोबन गए चित्त पछताय।
या संसार मांहि जो भयो, पुत्री सुन मूवो सो गयो ॥१३०३
कोऊ दिन दो आगे जाय, कोऊ पाछे पहुँचे धाय।
यह समझ तजिये दुःख वास, पुत्री कीजे भोग विलास ॥१३०४
यह तू कहो हमारो मान, इच्छा सुख मनमें तू आन।
धवलसेठ सब गुणह निवास, श्रीपाल थो जाको दास ॥१३०५

ॐ ॐ ॐ

रूपवन्त बहु गुणह निधान, जो सब देश देश परवान।
सुन्दरी छाड देह सब शोग, इच्छ ताहि जो चाहे भोग ॥१३०६
यह सुन रयनमंजूषा कंप, कोपारूढ उठी यह जंप।
तुम कुल मण्डन धीठ परवान, तुम दूती पापनकी खान ॥१३०७
मो पिय तनो जनक सो आहि, मेरो सुसरो कहे सब ताहि।
ताको तुम मो रमण कहाय, पापन तेरी जीभ गल जाय ॥१३०८

या सुन दूती विलखी भई, लंपटी सेठ जहां तहां गई ।
कहे वरतन्त सुनो परधान, वह तो नाही हमसे मान ॥१३०९
दूतिन कही सुनी यह जाम, आपन कामी चलियो ताम ।
काहूको वरजो नहि रहे, विरह विथा तापे दुःख दहे ॥१३१०

शार्दूलविक्रीडित छन्द ।

यः कश्चिन्मकरध्वजस्य वशगः किं ब्रूमहे तत्कृते ।
नो लज्जा न च पौरुषं न च कुलं कुत्रास्ति पापान्विते ॥
नो धैर्यं च पितुगुरोश्च महिमा कुत्रास्ति धर्मस्थितिः ।
नो मित्रं न च वान्धवा न च गृहं ध्वस्तः स्त्रियं पश्यति ॥

श्लोक—

कामवान् न कुतः पापं पापार्थी च कुतः सुखं ।
नास्ति तत्प्राणिनां कर्मदुःखदं यत्र कामजं ॥१३१२॥
यथा माता यथा पुत्री यथा भगिनी यथा स्त्रियः ।
कामार्थी च पुमानेता एकरूपेण पश्यति ॥१३१३॥

चौपाई ।

जैसी नारी है जिय जोय, मयन रूप जब प्राणी होय ।
तैसी माता पुत्री आदि, तैसी भगिनी देखे चाहि ॥१३१४
कामी जनके हिये न लाज, कामी जन बोले वेसाज ।
कामी जन वेश्याके जाय, कामी जन पुन आमिष खाय ॥१३१५
कामी पुरुष सुरा आचरे, कामी जन पुन चोरी करे ।
कामी जन जूवा फुनि छवे, कामी जन मिथ्यावच चवे ॥१३१६
कामी जन वंछे पर नार, कामी जन मन भावे गार ।
कामी जन छाडे गुरु सेव, माने बात न पूंजे देव ॥१३१७

कामी जनकी उलटी रीति, उत्तम तजि मध्यम सों प्रीति।
कामी जनके मित्र न बंध, नैण न देखे सदा निरंध ॥१३१८

काहू की न करे कछु कान, छांडे सब ही सों पहचान।
निशि दिन पाप कथा विस्तरे, कामी जनें नींद नहीं परे ॥१३१९

तैसे धवल सेट अकुलाय, लाज सुकच दीनी छिटकाय।
पर त्रिय लंपट पहुंचो तहां, रयणमंजूषा बैठी जहां ॥१३२०

❀ ❀ ❀

रोम रोम हरषो विहसाय, ताके सन्मुख पहुंचो जाय।
काम अंधपापी मदमंत, तिन सन्मुख देखो आवंत ॥१३२१
मनमें व्यापो दुःख अपार, कौन कर्म लागे मो लार।
भय भरके चितइ चोपास, कुमलाई सो लेइ उसास ॥१३२२

घूंघट पट दीयो विखलाय, मनमें कहे यह भरमाय।
है दुरात्मा आवत एह, याको मोकों बहुत संदेह ॥१३२३
शीलभंग मो आयो कारन, अब जिन देव तुम्हारो शरण।
इह चिनन सो मनि आपणें, सेट वात तब तासों भणें ॥१३२४

सुणि सुणि रयणमंजूषा बात, मत भयभीत होय तू गात।
श्रीपाल वालम तुम तनों, ताको सुण विरतांत भणो ॥१३२५

❀ ❀ ❀

यह मैं मोल लियो है दास, माता पिता न वंधव तास।
ताको कब हू चित्त न भयो, भली भई परपंची गयो ॥१३२६
महा सिंधुमें परयो जाय, मगर मछ सो घालो खाय।
ताको अजहौं सांसो तोह, छांड सोग त्रिय इछो मोह ॥१३२७

भामनि यह कीजे पसाव, तूं राणी मैं तेरो राव।
तो विन दुःख पावत मो देह, शीघ्र हि चलो हमारे गेह ॥१३२८

सो तूं अबै कन्त कर जाण, इछ भोगनके सुख मान ।
जो निरास करी है तू मोह, जीव हतेको पातक तोह ॥१३२९

त्रिखावन्त प्राणी अकुलाय, पानी पीवा सरवर जाय ।
सरवर जो न देई जल दान, ता समहीन बुद्धि नहि आन ॥१३३०

सोरठा ।

वनमें लगी दवार, मृग कर जोरे मेघसों ।
त्यों तू लेहु उधार, नातर मेरो पापतो ॥१३३१॥

चौपाई ।

वनमें लगी आग अधिकार, तामें जलें जीव अनिवार ।
मृग विनवैं वनमें अकुलाय, धृगतो मेघ न लेय बुझाय ॥१३३२

यह कहे सो ठाढो है रहो, उत्तर शीलवन्त यों कहो ।
रे परतिय लम्पट मति कूर, दुष्ट धीठ पापिनके मूर ॥१३३३

माई बाप हूँ जाई धिया, हीण बुद्धि परदेशी दिया ।
तासों मेरो कहा बसाय, तासों बात कहों समझाय ॥१३३४

मेरो तो श्री जिन भरतार, सुसरा है चारित्तह भार ।
तू तो–मोह धर्मको तात, हीण कहि तूं क्यों न लजात ॥१३३५

तू तो नीच नीच कुल भयो, प्रेत निशाचरके सम ठयो ।
तूं तो है तिरजञ्च समान, बैठ उघरियो धीठ अयान ॥१३३६

ऐसी कहे मन सोचे बाल, कहे कहानों भयो उर साल ।
है निरक्ष मद मातो येह, यह मेरी छूवेगो देह ॥१३३७

भई सचिन्त कहा मैं करूँ, कै मैं या सागरमें परूँ ।
कै जिह्वा खण्डो दुख पाय, यह कहि कहि मनमें बिलखाय ॥१३३८

सोचे वारवार पछिताय, काहि समारौं बाप न माय ।
तुम आगे पुकारुं दुख हरण, अब जिनदेव तुम्हारो शरण ॥१३३९

卐 卐 卐

या वह कुवरी रही मुरझाय, जिनदेवी तब पहुँची आय ।
चक्रेश्वरी अम्बा पद्मणि, अरु काली ज्वालामालिणी ॥१३४०
मानभद्र पुन तहाँ आईयो, अन्धकार सायर छाईयो ।
दारुण पवन चलायो तबें, कल्लोल निहारो जल जबें ॥१३४१
अति डगमगे सबल जलजन्त, दोरी देवी देव तुरन्त ।
बांध्या धवलसेठ तिहवार, दीनी गदा चक्रकी मार ॥१३४२
चक्र खाई कर भाखौं सोई, ताहि बचाय सके नहीं कोई ।
ताहि दुख दिया अधिकार, पाप कर्म कीनो विस्तार ॥१३४३
वारे लूका लेय उठाय, ताके मुहमें धरे आय ।
मुह कारो कियो दे गार, नरक दियो ताके मुख डार ॥१३४४
वहु उपसर्ग तासको होय, वणिवर रहे मुहा मुइ जोय ।
सगरे ताकी करें पुकार, लखें न वाही मारनहार ॥१३४५
समझें कछु न चकित भए, रयणमंजूषा पै तब गए ।
कर जोरे विनवें ते सबें, स्वामिनी करो कृपा तुम अबें ॥१३४६

卐 卐 卐

तू तो जिनशासन मन लीन, शील धुरन्धर धर्म प्रवीण ।
दुष्ट न जान्यों तेरो भाव, पुत्री अब तुम करो सहाव ॥१३४७
या पापीको होत विनाश, अरु डूबत हैं हम धर वास ।
शुद्ध चित्त हो लेय संभारि, हमें आपने शरण उबारि ॥१३४८
धर्म रूप है कीजे नेह, होहु कृपाल वचन सुनि लेहु ।
यह सुनि दयावन्त अति भई, ताके मनकी सबरिस गई ॥१३४९

ठाडी हो तव जोरे हाथ, विनती एक सुनो जिननाथ ।
जो कोउ यह देवी देव, दीसत नाही अलख अभेव ॥१३५०
दुर्बल देख दया मन धरी, जिन काहू सो रक्षा करी ।
सतसंयम सो व्रत राखियो, प्रगट सहाय शीलको कियो ॥१३५१

ॐ ॐ ॐ

जैसो इस पाप बोलिनो, तैसो तुम याको दुख दियो ।
अब प्रतीति मेरे मन भई, तुम पहिचान उपाई नई ॥१३५२
अब मुकसाय बन्ध यह देहु, उपशम ह्वै कर दया करेहु ।
तब उपसर्ग दूरि सब गयो, वणिवर सबनि हिये सुख भयो ॥१३५३
पुन देवी भाषे गुण रात, सुणि सुणि रयणमंजूषा बात ।
हे पुत्री मिलि है भरतार, महाराज करि है अधिकार ॥१३५४
तेरा मान बहुत सो करै, अब तू दुख कछू मति करै ।
तेरै आसिपासि हम आहि, तो तन कोउ सके न चाहि ॥१३५५

ॐ ॐ ॐ

ता मन धीरो करि परमान, देवी देव गए निज थान ।
रयणमंजूषा सुख भयो गात, यह काहू सो कहे न बात ॥१३५६
और कछू दूजी नहीं कहै, जपै जाप सो बैठी रहै ।
निज आसन ही बैठी जहां, आपन सेठ पहुंतो तहां ॥१३५७
होय सलज्ज नीचो चिन्तयो, बहुविधि चरण कमलको नयो ।
तुम मम पुत्री सुखको धाम, हूं पापी पापी मा नाम ॥१३५८

ॐ ॐ ॐ

शील धुरंधर गुणह निधान, तो सम पुण्यवती नहि आन ।
या सुन ताकी सब रिसि गई, तापर कृपावन्त अति भई ॥१३५९
गयो सेठ थानक आनन्द, पुण पुण रयणमंजूषा वन्द ।
चले परोहण पवन पहाव, सुन्दरीके मन केवल भाव ॥१३६०

२७-श्रीपालका समुद्र तिर पार होना

निवसै यह विधि जिन जिय धरै, सुणियों श्रीपाल ज्यों तिरै ।
कवि परिमल्ल कहै धरि भाव, भवियण सुणों करो मन चाव ॥१३६१

कोटीभटकेरी दृै वांह, मूलमन्त्र जपियो मन मांह ।
यह इक वात अपूर्व भई, काठ आय मिलियो इक सही ॥१३६२

जाणिक मित्र पूर्व भव तणों, तांहि मिलत सुख पायो घणों ।
हाय सहाय चल्यो सो जाय, याकै यहां चढ़ै सुख पाय ॥१३६३

नक्र चक्र मच्छादिक जीव, निकट आय भय करैं सदीव ।
तब हि मित्र परिंहै असवार, भुजबल खेई चलै अणिवार ॥१३६४

जब ही नींद दबावै भार, वहै काठ परि सोवैं सार ।
कहि भुजबल कहि काठ सहाव, तिरै समुद्र राइनको राव ॥१३६५

तिरत तिरत सो आयो तहां, पुर पट्टण तट मारग जहां ।
जिन नामांकी पढ़ी जयमाल, मन वच काय विशुद्ध विशाल ॥१३६६

रिद्धि सिद्धि वर मंगल करण, जिनवर नाम अमंगल हरण ।
सुख कारण मन रंजन सोइ, जातैं घर सम्पति अति होई ॥१३६७

श्री गणधर जंपै गुण धाम, रोग दुःख खण्डन जिन नाम ।
जिण नामैं कुञ्जर भय हरै, जिन नामैं केशरि वशि करै ॥१३६८

जिन नामैं ते सर्प न डसै, जिन नाम तैं पातिक खिसै ।
जिन नाम तैं ज्वाला प्रजलंत, परै मद नहीं दहै महन्त ॥१३६९

जिन नामैं जलनिधि तिर जाय, बीच न कहूँ रहे ठहराय ।
जिन नामैं अरि करे न घाव, और कछू न होय उपाव ॥१३७०

जिन नामें शंका सब हरे, कबहूं संकट नाहीं परे।
जिन नामें दुर्गति क्षय होए, मुक्ति वधू लाभे नर सोय ॥१३७१
जिन नामें पीडा सब जाय, कुष्ट गंड गल गूम नसाय।
जिन नामें ते दलिद्र न रहे, डायण सायेण संगनी वहे ॥१३७२
जिन नामें व्यापै नहीं रोर, पंथ देश घर मुसे न चोर।
जिन नामें ठाकुर वठ पार, कालकूट तें लेय उवार ॥१३७३
जिन नामें कर ज्वारी विलाय, इकन्तर ताप तेजरो जाय।
क्योंही उच्चाटन नहीं होय, थावर मोहन वश्य न सोय ॥१३७४

जिन नामें दिन सुखमें जाय, जिन नामें सब पाप नसाय।
जिन नामें संपति नित लहे, दुर्जन दुष्ट दुःख नहि दहै ॥१३७५
जो जिन-गुण चारितह धरे, दिढ गुण समकति व्रत आचरे।
प्राणी दुरित्त दूर सब वहे, जो मन चिंते सो फल लहे ॥१३७६
जो नर होय जिनेश्वर लीन, भूलन कबहू भाषे दीन।
मनमें श्री जिनवर सुमरन्त, भुजबल कर उछलो तुरन्त ॥१३७७
जाय लगो सो सागर तीर, महाबली अरु चरम शरीर।
गिरवर सम गुरवो गम्भीर, कोटीभट अरु साहस धीर ॥१३७८
प्रबल तरंगन सो नाषन्त, मछ कछ जल जीव बचन्त।
वडवानल नहि भेटन लयो, सिंधुपार कोटीभट भयो ॥१३७९

उपजातिछन्दः।

वने रणे शत्रु जलाग्निमध्ये,
महार्णवे पर्वतसंकटे वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा,
रक्ष्यंति पुण्यानि पुराकृतानि ॥१३८०॥

चौपाई (अर्थ)

बनमें भूल परे जो जाय, अरि समूह जो लागे घाय।
जो दावाग्निमें नर परे, धर्म सहाय तहां ऊबरे ॥१३८१
पाछे जो जल नदी गहराय, आगे सिंह दहारे आय।
ऊपर वज्र शब्द जो करे, धर्म सहाय तहां उबरे ॥१३८२
अजगर बैठो वदन पसार, धावति आवत कुञ्जर धार।
लाख चोरमें जो पग धरे, धर्म सहाय तहां ऊबरे ॥१३८३
धर्म सहाय कियो श्रीपार, सागर सेती लियो उबार।
छठी संधि पूरण भई, संस्कृत देख अर्थ यह कही ॥१३८४

छन्द त्रिभङ्गी।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम्।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लकृतम्।
मंजूषा व्याही सब गुणग्राही महासिंधु सायर परियं
पढियं जिननामं शिवसुख धामं जलनिधि तिर सो पारभयं॥१३८५

दोहा।

जल ज्वाला अरु करि, घटा केहर उठे दहार।
विषधर ठगछलछिद्रसे, धर्म हि लेय उबार ॥१३८६
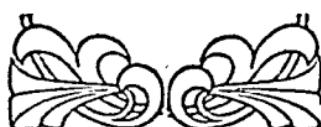
२८-श्रीपालका गुणमालासे विवाह

चौपाई।

तिरत तिरत सो पहुँचो तहां, कुँकुमद्वीप निकट वन जहां।
तरवर एक छांह गम्भीर, ता तल शयन कियो वरवीर ॥१३८७
खेद-खिन्न जलमें अति भयो, निद्रा बढ़ी सोय सो गयो।
ता अवसर चर पहुँचे आय, ताहि देखत रहे लुभाय ॥१३८८
परस्परस बातें उच्चरें, अति आनंदित स्तुति जु करें।
राज कन्याको पुण्य अपार, आय मिलो वर निहचै सार ॥१३८९
आयो भुजबल जलतिर वीर, अति चमकृत देखिए शरीर।
गुपत रूप कोऊ यह आहि, महा पुरुष सब देखे चाहि ॥१३९०

कोउ कहे इन्द्र यह कोय, कोउ कहे धरणेन्द्र जु होय।
कोउ कहे खेचर है जान, कोउ कहे यक्ष परिवान ॥१३९१
कोउ कहे यह है गन्धर्व, नीके रूप देखिये सर्व।
कोउ भाषे नागकुमार, कै किंनर लीनो अवतार ॥१३९२
कोउ कहे विचार विचार, यह तो कामदेव उनहार।
कै कोउ यह गुरवो राव, कै कोउ योधा मन चाव ॥१३९३
कोऊ कुछ कोऊ कछु कहे, ताको मर्म न कोऊ लहे।
आपसमें यह घेर करंत, उठ बैठो सो कुवर तुरंत ॥१३९४
लोचन अरुण विराजें खरे, अति दीर्घ मानों रिष भरे।
तामुख देख डरे वे सवैं, कोटीभट यों बोलो तवैं ॥१३९५
को हौ तुम सांची उच्चरो, कछु संकमति जियमें धरो।
निर्भय है भाखो विहसाय, कारण कहा कहो समुझाय ॥१३९६

काहे कारण पहुँते आय, क्यों मो सों तुम रहे थहराय।
क्यों जोवत हो मुख मो तनों, क्यों तुम हो विश्वासो घणों ॥१३९७
यह कारण स्तुति जो करो, सोई बात सांच उच्चरो।
यह सुन तेजंपे करि सेव, कारण सुणों कहें हम देव ॥१३९८

कुँकुम पट्टण लछि निधान, दुर्जन दल भंजन परवान।
शीलवन्त जिन भक्ति समान, तिहमें नर सोहें मतिमान ॥१३९९
कनकरतनमणि मण्डप जरे, अति उतंग विराजत खरे।
तिनको देखत भूख पलाय, शोभन लेख लिखा अधिकाय ॥१४००
वन उपवन सोहे चौपास, नर नारी नागर सुख वास।
तहां राव सो अपर गुणाल, भूमण्डल-मण्डण भूपाल ॥१४०१
सत्तराज पाले सो चंग, रूपवन्त देखिए अभंग।
वनमाला ताके घर नारि, राजे रति रम्भा उणि हार ॥१४०२
बोले मीठे अमृत वैण, मुख देखें पावें सुख नैंण।
राजाकूं प्यारी परवान, शीलवन्त जिन भक्ति समान ॥१४०३
ताके गर्भ सुता इक भई, रूपवंत अतिगुण वरणई।
ताकी शोभा कही न परे, देखत देवनको मन हरे ॥१४०४
जिणवर लीन सुगुणह विशाल, वर सुन्दरी नामा गुणमाल।
यौवनवंत भई वह जवें, राजा तिह अवलोकी तवें ॥१४०५

तब मुनिवर पूछा नरपार, स्वामी भेद कहो निरधार।
गुणमालाको वर को होय, मोसों अवैं पयासो सोय ॥१४०६
चिंता देह रही भरपूर, करुणा सागर कीजे दूर।
तब मुनि जंपे सुणि हो राय, चिंता मनकी दे छिटकाय ॥१४०७

सागर तिरि जो आवे वीर, सो गुणमाला परणै धीर।
यह सुन राव महासुख पाय, अपणे गेह पहुँचो आय ॥१४०८

सोचे राजा महा सुजान, निशि दिन जावै सागर थान।
राजा हमें राख यहां गए, देखत सिंधु बहुत दिन भए ॥१४०९

अब हम देखे जैसे कहे, सायर तिर आए तुम लहे।
चलो विलम्ब न करो सुजाण, व्याहो अपणी वरी परमाण ॥१४१०

कछुयक नृपपैं पहुंचे जाय, तासों बात कही समझाय।
राजाजी जैसो मुनि कहो, तैसो ही वर निश्चय लहो ॥१४११

मानष देवन भाखो जाय, पुण्य तुमारो पहुंचो आय।
केईक चर जु उठे ही रहे, केईक तुमपै आये रहे ॥१४१२

यह सुन राजा अति सुख भयो, बहुत द्रव्य तिनको तब दयो।
पहले उहां गए परधान, तेल फुलेलादिक ले निधान ॥१४१३

कुंकुम कस्तूरी रज वाद, तसोदक मर्दनको साज।
वस्त्रा भरण कुवरको जिते, राजा गेह अपूर्व तिते ॥१४१४

आनंद भेरी छाई गम्भीर, चहुं दिशि खबर भई घर धीर।
खबर कंवर की आई जवें, करी राव असवारी तवें ॥१४१५

अति फूलो सो अंग न माय, दल बल सहित चलो अकुलाय।
शुभ दिन शुभ वेला शुभ वार, मिले आय राजा श्रीपाल ॥१४१६

परसो कोटीभट तिहवार, भली बुरी सब पूछी सार।
कण्ठ लाग आलम्बन कियो, दोऊको आनन्दो हियो ॥१४१७

जय जय शब्द करे नरनाह, घर ले चालो कियो उछाह।
पट्टण शोभा करी अपार, घर घर तोरण बन्दरवार ॥१४१८

कोटीभट उवाच

सुन सुन्दरि कहूं धरनेह, मनको छांडि देहु सन्देह ।
बहुत कथा मेरी वरनारी, कैसे कहिये कहा विचारि ॥१४४०
जो तू हठ कर पूछे मोह, सुन अब कथा सुनाऊं तोह ।
अंग देश दुर्जन को कुसै, तहां नगर चंपापुर बसै ॥१४४१
शत्रु दवण राजा ता तणों, सो मो पिता मुवो दुःख घणों ।
कछुक दिवस में कीनो राज, विधना बहुरो करयो अकाज ॥१४४२
ऐसो योग आय कछु भयो, राज भार काकाकों दयो ।
पुरी उज्जनी पहुंचो जाय, है पुहपाल तहांको राय ॥१४४३
मोह देख दया तिह भई, महा मनोहर कन्या दई ।
मैनासुन्दरी नाम विचार, छोड़ी प्राण पियारी नार ॥१४४४
ताहि छाड आगे पग धरो, बीच पराक्रम बहुते करो ।
भेटो धवलसेठ परमान, तासो मोह बढ़ो अपमान ॥१४४५
हम हूं प्रोहण लिये चढ़ाय, पहुंते हँसद्वीपमें जाय ।
कनककेतु राजा अरि शल्ल, करे राज प्रगटा भुविमल्ल ॥१४४६

卐 卐 卐

मैं जिन भवन उघारो जाय, तहां राय भेटो निकुताय ।
ताके जियमें करुणा भई, रयणमंजूषा कन्या दई ॥१४४७
आगे चलो सो लीनी संग, मनवांछित सुख भयो अभंग ।
कर्म कथा कछु कही न जाय, सुखहीमें दुःख पहुँचो आय ॥१४४८
कारण पाय कछु लर परो, महासिन्धु मैंऊँ पुण करो ।
सिद्ध मंत्र मैं जपण लयो, अरु जिन नाम सहाई भयो ॥१४४९
भुजबल तिर आयो दुख जार, अब तू व्याही सुन वर नार ।
ऐसी मेरी कथा चरित्त, भामनी धरो दिढ समकित्त ॥१४५०

प्राणी दुरित दूर जब चहे, जो मन इच्छै सो फल लहे।
जो नर होय जिनेश्वर लीन, भूल न कबहू भाखे दीन ॥१४५१

मनमें श्रीजिनवर सुमिरन्त, भुजबल कर उछलो जु तरन्त।
दूजो और सुने मति कोय, मम उत्पत्ति लेहु जिय जोय ॥१४५२

卐 卐 卐

यह सुन ताहि महा सुख भयो, मनको विकलप न्यारो भयो।
भुञ्जे सुख सो प्रगट प्रवान, कोटीभटको करे बखान ॥१४५३

राजा बहुत करे सन्मान, रूपवन्त सो आहि सुजान।
सब दिन रहे रायके पास, कोटिक जन जीवें कर आस ॥१४५४

जाही पान दिवावे राव, ताही देय हिये धर भाव।
शत्रु मित्र ताकै इकसार, दया धर्म पारे अधिकार ॥१४५५

२९-धवलसेठका गुणमालाके पितासे मिलाप

ऐसो सुख बीतें दिन जाम, प्रोहण धवल आइयो ताम ।
कुंकुम द्वीप लगे ते आय, तहां सेठ उतर्यो विहसाय ॥१४५६॥
वणिवर गण कछु संगह भयो, मोती रतन थाल भर लयो ।
आनंद ते सो पहुँचो तहां, महाराज बैठो हो जहां ॥१४५७॥
आगे धरो थार शुभ सार, आगे ह्वै कर कियो जुहार ।
राजे बहुत कियो सनमान, आसन दे पूछो परधान ॥१४५८॥
कौन द्वीप तें आवण भयो, किम इह देश पांव तुम दयो ।
कहो बात वणिवर वरवीर, पुर पुरगाइन साहस धीर ॥१४५९॥

सेठ उवाच

तोहि देख मन उपज्यो चाव, भली करी अब धारे पाव ।
दीप अनेकन आवें जाहिं, हम दीपनको वरतो खाहिं ॥१४६०॥
आचे हंस द्वंपतें अबै, नाम तुम्हारो सुन करि जबै ।
देखत तुम्हें महा सुख भयो, मनको दुःख सगरो मिट गयो ॥१४६१॥
तासु वचन सुन तूठो राव, श्रीपाल ता जाण्यो भाव ।
तबै तम्बोल बहुत कर लए, आपन कुंवर सेठको दए ॥१४६२॥
देखत सेठ विकल भये गात, चल्यो प्रस्वेद न आवे बात ।
विदा मांग निज थान हि गयो, ताकै हिये सोच अति भयो ॥१४६३॥
मैं यह दियो सिन्धुमैं डार, जामैं कछ मछकी धार ।
तामैं तैं क्यों निकस्यो एह, यह मोकों भारी सन्देह ॥१४६४॥
रायपास किम प्रकट्यो आय, यह अचिरज जान्यो नहिं जाय ।
वह दुःख हिये व्याप्यो आय, कोई पूछ्यो वीर बुलाय ॥१४६५॥
को यह नृपकै आगे रहे, बीरा जाय देय सो लहे ।
कहे वीर तब सुनि हो साह, यह सागर जो अगम अथाह ॥१४६६॥

तामैं तैं तिरि आयो येह, राज सुता व्याही कर नेह।
श्रीपाल है याको नाम, सब ही को प्यारो सुखधाम ॥१४६७

卐 卐 卐

यह सुन सेठ विकल ह्वै गयो, मानो वज्र घाव सो भयो।
चिन्तैं मन ही मन विलखाय, मन्त्री लीने पासि बुलाय ॥१४६८
पूर्व पाप सेठ यों कहे, वणवर सुनों अन्तको लहे।
यह कोटीभट साहस धीर, अति गुणवन्त महाबल धीर ॥१४६९
दया निधान धर्मको कंद, जा देखत मन बढ़े आनंद।
कित मैं वह सागर डारियो, कितमैं गुन्हों तासको कियो ॥१४७०
बांधो पाप प्रकट भयो आय, को तापै तैं लेय बचाय।
कहां जाऊं भज कहूं न जोर, मैं वांको हूं पूरो चोर ॥१४७१
भयो मरणको कहे बढाय, कोऊ न करे है पाप सहाय।
वणिवर सो कछू करो उपाव, जिम वापें ते होए बचाव ॥१४७२

वणिवर उवाच

सोई करो सेठ यों कहे, जिम दुःख जाय अपनपो रहे।
सुनों सेठ तू कहू ठहराय, वाहीके शरणागत जाय ॥१४७३
वह तो दयावन्त गम्भीर, मारे नहीं तोहे वरवीर।
तेरो मान धरे अधिकाय, अवरन किम ही होय उपाय ॥१४७४
आरय गुण छाडे नहि सोय, तातैं कछू कुभाव न होय।
अवगुण कछू न मनमें धरे, वह तो सब हीको गुण करे ॥१४७५
मन्त्र हमारो आयो जिसो, तुम सो अवै प्रकाशो तिसो।
दुष्ट मन्त्री तब ही बोलियो, सुनों सेठ हम मन्त्र जो कियो ॥१४७६

卐 卐 卐

तुम जो दियो सिंधुमें डार, अर जाकी तुम इच्छी नार।
जाको इतो गुन्हों तुम कियो, सो तुमको छोडे किम जियो ॥१४७७

वणिज ऊचुः।

सुनो सेठ तुम रिस मत करो, बात हमारी सुन जिय धरो।
जातें भली होय सो करो, स्वामी बुरी बात परिहरो॥१४८८
मन्त्र हमारो आयो येह, कृपा करा सोउ सुन लेह।
नख शिख सुनके जियमें धरो, हमको मारमार मत करो॥१४८९
सुनो सेठ श्रीपाल नरिन्द, धर्म तरुवर करुणा कन्द।
सब सुलछन है सो आह, तासम कोउ औरन नाह॥१४९०
ताको सुनो पराक्रम सार, महाबली देखिये कुमार।
भ्रमत अकेलो और न साथ, वनमें सोवत हो सुन नाथ॥१४९१
बलि देवेको लाए चाहि, तुम आभार दियो सब ताहि।
जाके छुवे परोहण चले, कोठिनपै जे नेक न हले॥१४९२
लाख चोर मिल आए वरी, तुम देखत कीनी अपचरी।
हम भाजे सब मनमें डरे, कछूएक मूए कछू लर खरे॥१४८३
तुम तो बल कीना अति घनो, लोटा कर्म जब आपनो।
तब तुम कहा करो तिहवार, बांध तुमें ले चले गंवार॥१४९४

❀ ❀ ❀

कोपो तब कोटीभट वरी, तुम जानत हो अद्भुन करी।
एको कछू न आयुध लयो, परफुल्लित सो रणमें गयो॥१४९५
देखत ही सगरे भय भरे, आप बांध सब पाइन परे।
तुमको तिनपै लए छुड़ाय, तिनको निजघर गयो लिवाय॥१४९६
पंचामृत न्हाई जो नार, बहुत विनय कीनो अधिकार।
वस्त्राभूषण दिये अभंग, सोधो भलो लगायो अंग॥१४९७
दिये पानको कहे बढ़ाय, ते सब दीने घर पहुंचाय।
तिनहू एक अपूर्व कियो, सात परोहण भर धन दियो॥१४९८

जिनको मंदिर अगम अपार, वज्र कपाट लगे हैं द्वार।
छिनमें जाय उघारो सोय, प्रगट बात जाने सब कोय ॥१४९९
तहां भेट राजा सो भई, रयणमंजूषा ताको दई।
बहुत अर्थ धन पायो घनों, महिमा और कहां लों भनों ॥१५००
सो तुम दीनो सिन्धुमें डार, रयणमंजूषा ताकी नार।
ता तन तुम कुदृष्ट मन धरी, बुद्ध तुम्हारी विधना हरी ॥१५०१
ताको धर्म सहाई भयो, तुम जानत जैसो दुःख दयो।
कोटीभट सागर तिर गयो, राजाके घर प्रगट ही भयो ॥१५०२
कन्या व्याही बहु सुख लहो, आयो हो सागरमें बहो।
अब चित्त न सुनिये बैन, यह तुम देखी अपने नैन ॥१५०३

* * *

मानस देव न जानों जाय, धर्म सहाय करत है आय।
संकट बहुत रहे भरपूर, छिन ही भीतर डारे चूर ॥१५०४
धर्म सहाय अहो निशि रहे, दुखमें जाय तहां सुख लहे।
सेवा देव करें जा आय, तासों तेरो कहां बसाय ॥१५०५
वाको भलो किये फल होय, बुरो किये दुख पावे सोय।
याको कर्म फिरे या साथ, दया धर्म रहे जाके हाथ ॥१५०६
ताको जो कोई करे कुभाव, ताहीको उपजे अनुराव।
वाको सु दिन सवारे काज, मारण पठ्ये पावे राज ॥१५०७
ताको तुम कुदृष्ट मत करो, स्वामी हीन बात परिहरो।
अरु परपंच देहु छिटकाय, ताको वेग मिलो तुम जाय ॥१५०८
वह आगे तो आदर करे, प्रीति पुराणी जियमें धरे।
टेढी कछू न तुमसो कहे, तुम हम सबै साथ सुख लहे ॥१५०९

* * *

यह सुन सेठ विचारे तबैं, बिनसन हार होत नर जबै।
पहले मति ताको तज जाय, दूजो धर्म चले छिटकाय ॥१५१०
तीजा सत्य चले धुन सीस, पौरुष छीन लेय जगदीस।
महिमा ताके पास न रहे, मान ताहि तज मार्ग गहे ॥१५११
संयम शील तजे पुण ताहि, दया विवेक चले चित्त ताहि।
इतनो जबै पयानों करें, साहस धन पाछे परिहरें ॥१५१२
पहिले दुर्मति बैठे आंय, भेटे अपयश कण्ठ लगाय।
बहुरो ह्वै अदयासो प्रीति, बहुर असत्य करे वश जीति ॥१५१३
बहुरो कायर गुण मन बसै, बहुरो तामें पातिक धसै।
अनाचार ता तजै न साथ, पाछे दारिद पकरे हाथ ॥१५१४
ताहन क्यो हू छांडन कहे, नींदर ताहि गाढो कर गहे।
एको पल न देय छिटकाय, आवे नरक माहिं पहुँचाय ॥१५१५
विनसनहार सेठ त्यूं भयो, सुमति विवेक ताहि तज गयो।
भली न एको बात सुहाय, बुरी बातको लागो धाय ॥१५१६

* * *

जैसी दुष्ट जलौका होय, लगे पयोधरमें जिय जोय।
अमृत खीर तजे मति हीन, सोखे श्रोणित सदा अघ लीन ॥१५१७
चन्दन सोंधों धरिये आय, सबकों सुख-दायक महकाय।
मांखी हीन ताहि परिहरे, अति मलीन ऊपर मन धरे ॥१५१८
तैसे पापी सेठ अयान, गही बुराई हिये निधान।
वणिवर सबन बात यों कही, कछु न ताके मनमें रही ॥१५१९
मन्त्री दुष्टन कही बनाय, सोई बैठी मनमें आय।
पापी लीने पास बुलाय, बहुरो तैं पूछै विहसाय ॥१५२०
तुम तो मतो विचारो सार, सब काहूको होय उबार।

बणिवर सबै सयाणे कहैं, वाइ मिले ही सब सुख लहैं ॥१५२१
जाही तैं कछु नीके होय, तुम हू बात विचारो सोय।
कछु लाज मत जियमें धरो, भली होय सोई तुम करो ॥१५२२

दुष्टमंत्रिण ऊचुः

सुनहु सेठ यह तो उनमान, तुमहूँ ते को और सयान।
अपने जियमें देखो जोय, सोई करो सिद्ध जो होय ॥१५२३

सेठ उवाच

साहिब मंत्र करे धर मौन, तब मन्त्रीको पूछे कौन।
यह मैं सुनी न और उपाव, मन्त्री कहो सदीजे दाव ॥१५२४

दुष्ट मंत्री उवाच

सुनो सेठ जानो सब कोय, जासो कछु बुराई होय।
ताके वश जो परिये जाय, सो क्यों देय ताह छिटकाय ॥१५२५
मीठो खात जाय जो रोग, भामनि संग रहे जो जोग।
जो विष खाए रहैं पराण, वादि यतन कर मरे सुजाण ॥१५२६
वेश्या सेवत सुख जो होय, घृत निकसे जो सलिल विलोय।
घरमें रहे सांपफण धरे, और यतन काहेको करे ॥१५२७
तुम सों बात कहैं समझाय, जो परिपंचन बैरी जाय।
तो कित कीजे और उपाव, मतो हमारो हिये दिढाव ॥१५२८

३०-धवलसेठकर श्रीपालका भाण्ड विगोवा करवाना

सुनी सेठ जब सब निकुताय, तब तिह लीने भांड बुलाय ।
तिन सो कहो सबै व्योहार, कपट रूप सो भयो उदार ॥१५२९
टका लाख द्रय दिया बुलाय, पाछे बात कही समझाय ।
राजा आगे रहे कुमार, सायर तिर आयो श्रीपार ॥१५३०
जाति पात कुल लखे न कोय, राजा सुन्दर देखो सोय ।
अति रीझो तब कन्या दई, ताकी मति काहु हरि लई ॥१५३१
अब तुम जाति आपणी भनो, कोऊ कहो पुत्र मो तनो ।
कोऊ नाती कहिये चाह, कोऊ कहियो भ्राता आह ॥१५३२
ताकी बांह पकरियो जान, मत तुम करो रायको कान ।
अर तुम लावन जानो तिते, तुम तिह ठौर कीजियो तिते ॥१५३३
ज्यों त्यों ताहि आपनो करो, कछु शंक मत जियमें धरो ।
मो मन भायो हैगो जबै, रौर तुम्हारो हरिहों तबै ॥१५३४

यह सुन भांड सबै हरषिया, पहुँचे जाय राय परसिया ।
ताके आगे अवसर कियो, रीझो राव तबै तूठियो ॥१५३५
बहु धन देकर जंपै येह, श्रीपाल इन बीड़ा देह ।
कुवर हाथ उच्च कीयो जाम, हा हाकार करे सब ताम ॥१५३६
कोऊ कण्ठ लागियो धाय, कोऊ ताके पकरे पाय ।
काहू वांह गही अकुलाय, कोऊ मुख पंछे विहसाय ॥१५३७
कोऊ पूंछे उसको अंग, ताहि देख हर्षो सभसंग ।
कोऊ कहे धन्य भूपाल, याको जहां भयो प्रतिपाल ॥१५३८

कोऊ कहे पुत्र मो तनो, दइ थाइ सुख पायो घणो।
कोऊ वृद्ध कहे विहसाय, मेरो नाती सुन हो राय ॥१५३९
बहुत दिना को बिछरो येह, ताको अब भागो सन्देह।
धन्य यह वासर धन्य यह घरी, मिलो हमें सुत है यह वरी ॥१५४०

सुन कर राव मलिन अति भयो, उपजो कोप सतावन लयो।
कोटीभट नहीं करे सन्देह, मनमें कहे कर्म कछु येह ॥१५४१
अब ही देख लेय हूं तिसो, भावि होनहार है जिसो।
ऐसे कुवर विचारे भाव, मातंगण तब पूछे राव ॥१५४२
रे पापी किम कहो निरुत्त, वार वार भाषो अजुगत।
यह सुन्दर अर मीठी वात, तुम कुरूप अर हीने गात ॥१५४३
मेरे आगे करो वखान, तुम सो आहि कहा पहचान।
नीके कर नातो उच्चरो, मेरी कछू शंक मति करो ॥१५४४

ऐसी सुन जंपै इक नार, सुनो राय तुम कहो विचार।
इय सुत मोहि जोरवा भए, क्षीर पानने पोखन लए ॥१५४५
दोऊ भए सयाने जवै, भोजन कारण लरिए तवै।
इन अति क्रोध चित्तमें धरो, जाय महासागरमें परो ॥१५४६
याको मोह बहुत मो भयो, दूजो काल वश मर गयो।
तब मो शोक वियापो हियो, दिनदश पानी अन्न न कियो ॥१५४७
तिनके दुखन मरो भरतार, हूं पापनी जीऊं अधिकार।
धन्य तू राव प्रगट परवान, निन मोह दियो पुत्रको दान ॥१५४८
बहुत भूप मांगे जिय जोय, तो सम दूजो और न कोय।
काहू हय काहू गय घनो, काहू दाम न नाही गिणो ॥१५४९

काहू भोजन कबहु दियो, पुत्रदान नहि काहू दियो ।
तें चकबन्ध कियो चित चाहि, तेरी उपमा दीजे काहि ॥१५५०

प्रगटो यश को करे बखान, तो सम राजा और न आन ।
राणो सुनो वांच उच्चरो, कछु विवेक न जियमें धरो ॥१५५१

धिर धुन राय कोह मंडियो, इन मो निर्मल कुल भंडियो ।
महा दुष्ट यह पापी हीन, गुणमाला व्याही परवीन ॥१५५२

पुन हिये मुनिवचन संभार, चित्त चित्तवे ता रूप निहार ।
बहुतो भूप सोच यह करे, हीन पुरुष सागर किम तिरे ॥१५५३

मनमें कियो ऐसो विचार, परस्पर बूझे श्रीपार ।
निज कुल मोसों कहि परवान, को तू हमें चको न जान ॥१५५४

कोटीभट उवाच ।

सांची कहुं सुनो हो राय, यह परिग्रह यह है माय भाय ।
यह विरतन्त कहे है जिसो, मोको सुनो भयो है तिसो ॥१५५५
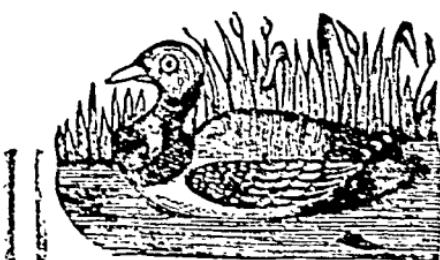
३१-राजाद्वारा श्रीपालको शूलीका हुक्म

यह सुन राय क्रोध अति भयो, चण्डारनको आयस दयो ।
मेरो डर जियमें मत करो, या पापीको शूली धरो ॥१५५६

बांधो तब चण्डाल निधाय, शूली देने चले लिवाय ।
श्रीपाल यह जियमें भणी, देखूँ गति कर्म हि तणी ॥१५५७

मुझो अशुभ कर्मको भाव, आन जनम नहि हुय मिलाव ।
सब ते वली कर्म गुरु कहे, आदि अन्त सबहीको दहे ॥१५५८

इन्द्रवज्रा छन्द ।

इक्ष्वाकुजातः सहि विश्वनाथो, इन्द्रादिदेवार्चितपादपद्मः ।
तथा नरासेवनसेवितोपि, न कर्मणः कोपि वलीसमर्थः ॥१५५९

चौपाई ।

खग नर जण गन्धर्व अर देव, ब्रह्मादिक सब जाकी सेव ।
आदि अन्त कीरति विस्तरी, कर्म बाहि नहि कोऊ वरी ॥१५६०

असुर यक्ष शंकरकी सेश, चक्रेश्वर शशि और दिनेश ।
ये न पांव आगे चलि धरें, कर्म करावे तैसे करें ॥१५६१

धाता सब ही पर परधान, कहा करे नर सूर सु जान ।
बुद्धि बल जाके कछु नहि होय, कर्म नचावे सो ही होय ॥१५६२

जो मैं अब इन सो बल करुं, तो सबको छिनमें संघरुं ।
विधाता मो कछु न बसाय, यह मन सोचे अरु विहसाय ॥१५६३

सब ते महाबला अधिकार, करता पाप न कछू उवार ।
इस ही जन्म भवै दुःख सहुं, जैसे कबहू फेरन लहुं ॥१५६४

मन ही मन सोचे धरधीर, कायर होय न नेक शरीर ।
कोऊ एक पहूँची तहां, गुणमाला निजमंदिर जहां ॥१५६५

❀ ❀ ❀

कर दर्पण लीने वर नार, नयनन काजल देत सवार।
मृगमद तिलक रचो तिह ठान, तास भेदको कहे वखान ॥१५६६
राय वेल चंवेली जुही, कुसम सुगन्धन वेणी गुही।
मोतिन मांग सवारी चंग, पाता वली कुँकुमके रंग ॥१५६७
दर्पणमें प्रतिविंब विहसाय, अति सुवासित वोल दिखाय।
सोधों बहुत मर्दियो अंग, अत्ति अनूप देखिये अभंग ॥१५६८
साजो मुक्ताफलको हार, रुचिर वर्णवति सवे सिंगार।
पहिरे अंग कसूमल चीर, मन्द मन्द तहां वहे समीर ॥१५६९
वढो प्रमोदन अंग सु माय, दर्पण मुख देखे विगसाय।
अति सुहाग मद वाढो जवै, एक कामिनी बोली तबै ॥१५७०
जाको तू श्रृङ्गार करन्त, जाको पलपल मग जोवन्त।
जा देखत सुख लहती नैन, ताहि ले गये शूली दैन ॥१५७१

* * *

भांडन आय विगोवो घनों, सवै कहें ये सुत मो तनो।
श्रीपाल भी लीनी मान, माता पिता लिये पहचाना ॥१५७२
ताते नृप कोपो चित चाहि, अब चण्डार मार हैं ताहि।
या सुन मूरछित भई कुमार, धरती पर नहि सकी संभार ॥१५७३
सखीयन जलसों छींटन लई, चेती तब सो वैठी भई।
अति चकित है चिते नैन, सूधी वात न आवे वैन ॥१५७४
शोकारूढी लेय उसास, पहुँची श्रीपालके पास।
जो देखे तो ठाडो धीर, अति निरभय सो हिये शरीर ॥१५७५

* * *

ताह देख गुणमाला वाल, मूर्छा धरणि पडी वेहाल।
चन्द्रमुखी अंवुज लोचनी, होय सचेत पीयसो भनी ॥१५७६
भो स्वामी कहिये कर नेह, कहा चरित्र कियो तुम येह।
मोसों अबै कहो सतभाव, कोतू आहि कुनके जाव ॥१५७७

कोटीभट उवाच

सुन हो त्रिया हमारी जात, भांड वंश मेरी उतपात ।
भांड पिता भांडन मो माय, बहुत कहा हूं कहूं बढ़ाय ॥१५७८

गुणमाला उवाच

पहले तुम मोसों उच्चरी, सोई सांची जियमें धरी ।
अब तो सबै भूल तो गई, अब तुम सब याही सो चई ॥१५७९
भो बालम यह झूठी जोय, हीन वंश किम तौसो होय ।
तू अति रूपवन्त गुण धाम, अर तेरो है उत्तम नाम ॥१९८०
अर तुम देखिये महाधर धीर, कोटीभट अति गहर गम्भीर ।
अर तो चित्त दयाको वास, अर तू जाने भोग विलास ॥१५८१
अब तुम कहो जिनेश्वर आन, सांची बात जु है परमान ।
तुम हू यह देखो जिय जोय, मध्यम कुल क्यों उत्तम होय ॥१५८२

शार्दूलविक्रीडित छन्द ।

या पुंसि देदीप्यमानसुभगे ह्यारोग्यता जायते ।
गम्भीरं भयवर्जितं गुणनिधं सन्तोपजातं चिरं ॥
विख्यातं शुभनामजातिमहिमा धैर्याद्युदारक्षमं ।
नेत्रानन्दकरो न भूमिपतिजो हीने कुले जायते ॥१५८३॥

चौपाई ।

जो कोउ अति सुन्दर होय, जाको रोग न व्यापै कोय ।
जाके होय न अरिको त्रास, जाके चित करुणाको वास ॥१५८४
जाको निर्भय होय शरीर, कोटीभट सो साहस धीर ।
कमला जाके सेवे पाय, कीर्ति दिग्दश रहे समाय ॥१५८५
जो मुख बोले अमृत वैन, जा देखत सुख पावें नैन ।
जाहि देख दुख भाजे दूर, सुखी रहे सब ही सुच पूर ॥१५८६

सो किम हीन वंश अवतरे, वात तुम्हारी किम जिय धरे ।
सांची वात कहो समझाय, नातर प्राण तजुं अकुलाय ॥१५८७
मो पै कछू न और उपाव, खण्डुं जीभ कहो सतभाव ।
यह सुन श्रीपाल अकुलान, है अबला मति हीन अयान ॥१५८८
याके और न दूजो कोय, मेरे सुख याहू सुख होय ।
मेरो कछु न कोउ करे, या अकुलाय प्राण परिहरे ॥१५८९

कोटीभट उवाच ।

सुन भामनि मैं कहूँ विचार, अपने मनको शोक निवार ।
सागर तीर थके जलजन्त, तहां जाय तू वेग तुरन्त ॥१५९०
तिनमें एक सुन्दरी आहि, पूछे देख नीके कर ताहि ।
रयणमंजूषा ताको नाम, जाने है मो कुल अर गाम ॥१५९१
जो कछु मोह चरित व्योहार, सव वह प्रगट करेगी सार ।
या सुन ताह भयो चित चाव, वाजे नीच न पाढे घाव ॥१५९२
साहस कर सो पहुँची तहां, सिंधु तीर परोहण जहां ।
ठाडी ह्वै मनमें विलखाय, लागी टेर देन अकुलाय ॥१५९३
जो कहूँ रयनमँजूषा नार, मोसो बोले चित्त विचार ।
मेरी दया कछु मन धरो, वेग देह मो उत्तर करो ॥१५९४

ऐसे शब्द कहे इन जवै, रयनमँजूषा सुनियो तवै ।
चमक उठी मनमें सन्देह, कारण कहा बुलावत येह ॥१५९५
सोचत सोचत सो चल गई, प्रोहण ऊपर ठाडी भई ।
अति दुर्वल देखियो शरीर, मैल जडित ता सोहै चीर ॥१५९६
रोवत नैन मलिन अति भए, अर कपोल अति मूरछित गए ।
मैलो वदन ऐसो मकरन्द, मानो श्याम बादलमें चन्द ॥१५९७
हीनी भाष महा दुःख भरी, नाह नाह जंपै सुन्दरी ।

गुणमाला वह बोली जबै, नमस्कार कर पूछी तबै ॥१५९८
हे स्वामिनि सुन मेरी बात, को है श्रीपालकी जात।
जासो मेरो सब दुःख जाय, तैसी कह तू सांच बनाय ॥१५९९

रयनमँजूषोवाच

हे त्रिय कौन दुःख है तोहि, किह कारण पूछत है मोहि।
सोई सांचो कह व्योहार, काहे ते यह दुःख अधिकार ॥१६००

गुणमालोवाच

हे स्वामिनि सुन कहौं विचार, सायर तिर आयो श्रीपार।
मेरे पिता ताहि मैं दई, कही मुनि सोई सो भई ॥१६०१
भोग करत बहु सुख भुजन्त, बहुत दिवस बीते विहसन्त।
अन्तर भयो कहानो जोय, तोसों कहुँ बात सुन सोय ॥१६०२
भांडन कीनो अवसर आय, सबन गहो कोटीभट धाय।
रोवें बहुत शोर ते करें, बारबार ऐसे उच्चरें ॥१६०३
यह तो वंश हमारे भयो, पूत पूत सब ही यों चयो।
राजाको दुःख उपजो तबैं, आयस भयो मार है अबैं ॥१६०४
तातें पूछन आई तोह, नाथ भीख दे सुन्दरि मोह।
कह तू मोसों कारण येह, जिय मेरो भाजे सन्देह ॥१६०५

❀ ❀ ❀

रयनमँजूषा सुनियो जाम, तासों बात पयासी ताम।
चालत वेग कहूँ मैं जहां, तेरो पिता राव है तहां ॥१६०६
बहुत बात कह भई उदास, पहुँची जाय रायके पास।
देखत राजा रहियो चाहि, रहसवन्त हो पूछे ताहि ॥१६०७
कह कह देवी तू सत भाव, श्रीपाल यह काको जाव।
नीके कर हूँ पूछो तोह, सगरो चरित्त सुनावो मोह ॥१६०८

३२—रयनमँजूषासे जाति पूछ श्रीपालको छोडना

रयनमँजूषोवाच

राजा बात सुनो दे कान, श्रीपाल गुण करुं वखान।
अंगदेश चम्पापुर थान, स्वर्ग लोक है ताह समान ॥१६०९
तहां अरिदवन राव अधिकार, ता सुत है श्रीपालकुमार।
पुरी उज्जैनी मालवो देश, ताहि प्रगट पहुपाल नरेश ॥१६१०
ताको यह जामाई भयो, मैनासुन्दरीको वर थयो।
अरु सुन हँसद्वीप सुविशाल, निवसे कनककेतु भूपाल ॥१६११
तिन मैं व्याह दई नर नाथ, चलियो धवलसेठके साथ।
तिन मो देख पाप इच्छयो, यह छल कर सायर डारियो ॥१६१२
पापी सेठ गयो मो पास, दुष्ट वचन बोलो उपहास।
तब जिनदेवी कियो सहाव, पापी वरजो दियो सजाव ॥१६१३
बांधो मारो अति दुःख दियो, बहु उपसर्ग नाशको कियो।
मोसो देवी कह्यो विरतन्त, सुन पुत्री तू मिल है कन्त ॥१६१४
तातैं सर्व सरेगो काज, महा सुख भुजेंगो राज।
अबलग प्राण रहे इस आप, अब यह कथा भई तुम पास ॥१६१५
गुणमाला मोसों कही जाय, तातें मैं आई अकुलाय।
देखत तुम्हें सोच अति भयो, दशवो हिस्सो शीलको गयो ॥१६१६
मनमें तात बराबर जान, तुमसो बात कही तज कान।
मेरी कछु चित्त मत धरो, तुमकों जो भावे सो करो ॥१६१७

रमनमंजूषाकी सुन बात, हरखो राव न मावे गात।
तत्क्षण श्रीपाल पै गयो, द्वय कर जोर मूढ विनयो ॥१६१८

मो कोटीभट साहस धीर, भो प्रभु दयावन्त गम्भीर ।
मो पर कृपा करो जियमान, हूँ पापी पापनकी खान ॥१६१९॥
हूं निकृष्ट विधना कित कियो, वे काम तुमको दुख दियो ।
बोलो श्रीपाल सुन राय, तोहि दोष कछू कहो न जाय ॥१६२०॥
पूर्व कर्म कमायो जिसो, भो नरनाथ भयो अब तिसो ।
एक बात यह नीकी चईं, भावी ही सो अब ही भई ॥१६२१॥
बहुत सुख उपजो जिय जोय, मोसों बहुर न सम्बन्ध होय ।
भावी बुरी गई मिट जाय, तुमें खोर दीजे अब काय ॥१६२२॥
यह पछितावा मो मन गयो, तुमको कछू विवेक न भयो ।
यह सोच मेरे मन घर्णो, कहां विवेक गयो तुम तणो ॥१६२३॥

शार्दूलविक्रीडित छन्द ।

किं विद्याधरवादिनादनिपुणोद्धारः कृतो धीर्यवान् ।
किं योगीश्वरकाननं च कथितं ध्यानं धृतं केवलं ॥
किं राज्यं सुरनाथतुल्यभवतो भूमंडले विद्यते ।
यच्चितै च विवेकहीनमनिशं दुःखं च पुंसोधिकं ॥१६२४॥

चौपाई ।

यह सुन राजा रहो लजाय, स्तुति करे अरु चित पिछताय ।
धन्य धन्य श्रीपाल सुजान, कोई पुरुष न तोह समान ॥१६२५॥
तब नृप स्तुति करी अधिकार, कछूक लाज मन कछू उदार ।
श्रीपाल मन हर्षित भयो, ताहि विहसके उत्तर दियो ॥१६२६॥
राजा कछू सोच मत करो, मेरी लाज हिये मत घरो ।
उत्तम औगुण गण परहरे, एको गुण घट अन्तर धरे ॥१६२७॥

उत्तमेक्षणिकः कोपो मध्यमेप्रहरद्वयं ।
अधमस्य अहोरात्रं नीचस्य मरणांतकं ॥१६२८॥

चौपाई (अर्थ)

उत्तम कोप एक पल करे, मध्यम पहर दोय जिय धरे ।
अधम अहो निशि मन चितवे, नीच मरण वेला जो ठवे ॥१६२९
राजा सुनो बात दे कान, नीके कर मैं कहूं बखान ।
पंडित वाद लेहु चित चाहि, सभा न उत्तर आवे जाहि ॥१६३०
कोकिल बिना वाद वन होय, कुल सो बाद सपूतन होय ।
गुणी वाद निगुर्णीके साथ, सम्पति वाद कृपणके हाथ ॥१६३१
रक्षक विना वाद सब सार, दीसे वाद शील बिन नार ।
सरवरवाद कमल बिन जान, कमलवाद अलि भ्रमें न आन ॥१६३२
पुरुष वाद भाषे ते डरे, सूर वाद अरितैं भय करे ।
राग वाद दुःख हरे न नित्त, राजा वाद विवेक न चित्त ॥१६३३

श्रीपाल यों भाषी जाम, राजा सीष नवायो ताम ।
आतुर ह्वै आयो हरषाय, कोटीभट गज लियो चढाय ॥१६३४
पंच शब्द बाजे अतिसार, पट्टन शोभा करी अपार ।
ठौर ठौर रमणीक सुथान, दीसे सो सुरलोक समान ॥१६३५
सब ही नगर बधावो भयो, श्रीपाल निज मंदिर गयो ।
हेम कुम्भ सो जल भर नहाय, अपने आसन बैठो आय ॥१६३६
दुहू नार तब बन्धो नाह, हर्षित आंसू बहे प्रवाह ।
रयनमंजूषा अर गुणमाल, देखी श्रीपाल दो बाल ॥१६३७
हर्षित होय अंक भर लई, शील धुरन्धर द्वय वरनई ।
अति सुख भयो मनमें अशेष, भामन भई उरवशी भेष ॥१६३८

श्रीपाल सुख कियो विशाल, सुरपति सम सोहै तिह काल ।
पे सुख मैं ऐसो निवसन्त, कीयो कोप भूपाल तुरन्त ॥१६३९

पठिये सूर करो मति संघ, लावो पापी धवले बन्ध ।
ये सुन सेवक धार सबैं, प्रोहण भीतर पैठे तबैं ॥१६४०
लहुरे बडे जिते पाइया, नृप पै बुरे भेष लाइया ।
धवल बांध मारो बहु सोय, नृप आगे मुख रहियो गोय ॥१६४१

चार बार यों कहे नरिंद, या पापीको करो निकन्द ।
काहू पै मत दया करेहु, वित्त समान सब ही दुःख देहु ॥१६४२
अरु लीनो श्रीपाल बुलाय, ताही बात कही समझाय ।
यह तुमको दुःख दियो अपार, देख सुलंपट बांधो वार ॥१६४३
जिह विधि कुछ तुम मोसों भनों, त्योंही या दुःख दीजे घनों ।
यह सुन कोटीभट उच्चरै, द्वयकर जोर वीनती करैं ॥१६४४
भो राजा छांडो कर नेह, धर्मतात है मेरो येह ।
इन मोको ज्यो औगुण कियो, सोई मोकों गुण परणयो ॥१६४५
जो यह सिन्धु न देतो डार, किम लहतो गुणमाला नार ।
यह सुन राय कोप छांडियो, महा हर्ष मनमें मांडियो ॥१६४६

शत्रु दवण सुत चित्त विचार, अपने हाथ निहार निहार ।
धवल सेठके बन्धन तोर, अरु वणिवर सम दीने छोर ॥१६४७
निज मंदिर सो गयो लिवाय, पंचामृत ज्योणार जिमाय ।
धवल सेठ सों द्वय कर जोर, लाग्यो स्तुति जु करण बहोरा ॥१६४८
तबपसाय सुख पायो घणों, तू तो धर्मतात मो तणों ।
तो पसायमें प्रगटो भयो, दुःख दारिद्र मेरो सब गयो ॥१६४९
यह सुन सेठ रहो मुरझाय, गल्यो गर्व मनमें पछिताय ।
महा उसास एक तब लियो, निकरे प्राण हियो फट गयो ॥१६५०
नरक सातवें पहुँचो सोय, सहे दुःख जहां अति भय होय ।

प्रथम सन्धि पूरण भई, मूल देख भाषा वरणई ॥१६५१

छन्द त्रिभङ्गी ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम् ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लकृतम् ।
गुणमाला परणी सब सुख करणी, मातंगनि उपसर्ग कियं ।
सो उपसन्नं नृपसु प्रसन्नं, धवल सेठ उर फाट गयं
द्वयनारी संजुत्तं जिणसुमिरंतं, निवसंत भूपालघरम् ॥ १६५२ ॥

चौपाई ।

धवल सेठको फाट्यो हियो, ताको दुःख कोटीभट कियो ।
बहुरो सो सेठनी पै गयो, कहे बात सो विलखो भयो ॥१६५३
माताजी तुम दुःख मति करो, धीरज तन अपने जिय धरो ।
यह जैसी ही विधि निरमई, भावी होनहार सो भई ॥१६५४
अब तुम मोकूं आयस देह, सोई करूं तजो संदेह ।
यहां रहो तो सेवा करुं, जो घर जाय तो आदर करुं ॥१६५५
अर सब दर्व तुमें हि दयो, अपना शुद्ध करो तुम हियो ।
कछु शंक मति करो शरीर, शीलवंत है गुण गंभीर ॥१६५६

सेठानी उवाच

भो सुत करुणा करवर वीर, धन्य धन्य पुण्यवंत गंभीर ।
भली भई पापी मर गयो, पहुंचो नरक वसेरो भयो ॥१६५७
अरु तुम आयस देहु अभंग, पहुंचुं घरे भलो हैं संग ।
वणीवर सबे रहे गह पाय, कोटीभट आयो पहुंचाय ॥१६५८
तिह पुर रहे पुण्य अधिकार, देश देश प्रगटो यश सार ।
बहु सन्मान करे ता राव, भुंजे भोग महा सुख चाव ॥१६५९

सोवो दियो जितो परमान, कवि परिमल्ल न सके वखान ।
नए महल दीने करवाय, तहां भोग भुँजे बहु राय ॥१६८१
कछुक दिवस गए सुख जहां, एक पुरुष आयो अरु तहां ।
तब सोयू वेल्यो विहसाय, स्वामी सुनो बात चित लाय ॥१६८२
कुङ्कुम पट्टन मही वखान, ताकी शोभा नगरन आन ।
कञ्चन रयन भरित अधिकार, घर घर गावें मंगल चार ॥१६८३

अति रमणीक मनोहर सोय, मानो इन्द्रपुरी सम होय ।
ताको भूप नाम यशसेन, बलकर इन्द्र रूप करि मैन ॥१६८४
दुर्जन दल जीतन प्रचण्ड, भुजबल भीम महा बलि मण्ड ।
राजनीत पार अधिकार, ताकी कीरति अति विस्तार ॥१७८५
चौरासी सुन्दरी ता गेह, जेठी गुणमाला जस रेह ।
रूपवन्त सब लक्षण सार, ताके सुन्दर पांच कुमार ॥१६८६
स्वर्णविम्ब गुणविम्ब अर जेह, जित शत कर्ण पंच सुन एह ।
सोरहसै कंचन मय रवण, अक्षरसम, देखिये रवण ॥१६८७
तिनमें पुत्री आठ प्रधान, लक्षण वन्त सबै गुण जान ।
कहैं समस्या पूरे जोय, चन्द्रमुखी ते व्याहे सोय ॥१६८८
या मही मंडलमें परवान, कोऊ बात न सकि है जान ।
तुम आगछो चलो कुमार, परणो तिनैं रूपकी सार ॥१६८९

शीघ्र ही तहां चाल्यो वरवीर, तिह पुर जाय पहूँच्यो धीर ।
नृप जस सेठ कियो सनमान, निज मंदिर ले गयो सयान ॥१६९०
अति हुल्हास जिय कहत न बने, कियो महोछव घर आपने ।
ता छिन ते आई सुख मान, देखत ही मोही शुभ जान ॥१६९१

बैठी आय समीपह जाम, श्रीपाल ते पूछी ताम।
मनमें बसे समस्या जिसी, मेरे आगे भाषो तिसी ॥१६९२
तब शृँगार गोरी उच्चरी, सुणो धीर मन इच्छा करी।

शृङ्गारगौर्युवाच

जहं साहस तह सिद्धि ॥ १६९३ ॥

कोटीभट उवाच

दोहा।

सत शरीरा आय तौ दई, आय तिय बुद्धि।
कंत सहायन छांडिए जह, साहस तह सिद्धि ॥१६९४॥
सुवर्ण देव्युवाच, गोपे खन्तह सब्ब।

कोटीभट उवाच।

धम्मण विलसोषणनि, कृपण है संचय दब्ब।
जूवा रायपलेवणो, गोपे खन्तह सब्ब ॥१६९५॥
पौलोमीदेव्युवाच, ते पंचायण सीह।

कोटीभट उवाच

शील विहूणा जेवि नर, तिनकी देह मलीन।
ते चारित्ता निर्मला, ते पंचायण सीह ॥१६९६॥
सुहागगौर्युवाच, तसु काचरा सुमिठ।

कोटीभट उवाच

रयणायर थोडो चवे, दादर कुवे बईठ।
जिह नालेर न चाखिया, तसु काचरा सुमीठ ॥१६९७॥
सोमकलोवाच, काम पिवाऊँ खीर।

कोटीभट उवाच

रावण विद्या साधियो, दश मुख एक शरीर ।
माई संसे पडि रही, काय पिआऊँ खीर ॥१६९८॥
शशिरेखा उवाच, सो मैं कहू न दिठ ।

कोटीभट उवाच

सातो सायर हूँ फिरो, जम्बूद्वीप पईठ ।
शांत पराई ना करे, सो मैं कहू न दीठ ॥१६९९॥
संपदादेव्युवाच, काई विठियो तेण ।

कोटीभट उवाच

कुन्ती जाए पंच सुत, पंचो पंच सयेण ।
गन्धारी सो जाइया, काय विठियो तेण ॥१७००॥
पद्मावती देव्युवाच, सोत सुकाय करेय ।

कोटीभट उवाच

सत्ता जासु च उगणो, पावली परणेय ।
अक्षर पास वइठडी, सा तुम काय करेय ॥१७०१॥

चौपाई ।

पूरी आठ समस्या जवैं, सव कुटुम्ब आनन्दों तवैं ।
शुभ दिन सोधो मंडप छयो, पंच शब्द तहां मंगल भयो ॥१७०२
बाजे तहां वाजित्र अपार, व्याही सोरहसै श्रीपार ।
सोवो दियो अति अविकार, हय गय चमर छत्र भंडार ॥१७०३
लागो सुख भुञ्जत तिहं ठाय, वहुतक दिवस वीते ते जाय ।
कोटीभट विनयो यह राव, देह विदा हमको घर जाव ॥१७०४

रहसवन्त हो पहुँचो तहां, निवसे नौसे सुन्दरी जहां ।
तब राजा बोलो वरवीर, दुर्जन भंजन साहस धीर ॥१७०५

सुन सुन कोटीभट कुलचन्द, महाबली करुणाके कन्द ।
तू तो पुण्यवंत गुणवंत, हम सेवक तू होहु महंत ॥१७०६
देह छत्र सिर पर शुभ सार, रैयत सवै सेवे दरबार ।
तब श्रीपाल कहे हो राय, मैं तुम दास सेय हों पाय ॥१७०७
मोकूं आयस देय तुरंत, सोई करुं राय शुभ संत ।
मैं इहठां सुख पायो घणो, प्रगटो विभव कहां लो भणो ॥१७०८
दीजे अब आयस नरनाह, चलें तुरत मनमें उत्साह ।
मोसे दास तुम्हारे घने, मोह राख जो मन आपने ॥१७०९
तब राजा भाषे शुभ चित्त, सुन कोटीभट मेरे मित्त ।
तो सम हितू न दूजो कोय, तोह तजे कैसे सुख होय ॥१७१०

कछू दिवस रहिये यह ठौर, बहुत कहा कहिये कछू और ।
कोटीभट यह सुनियो जाम, लियो मौन नहि बोलो ताम ॥१७११
कछू दया उपजी अति गात, विहसो तज गोनेकी बात ।
सोरहसे सुन्दरी गुणाल, तिनमें आठ महा सुखमाल ॥१७१२
रहे रयन दिन तिनके संग, सुर सम नेह भुंजे बहु रंग ।
निश दिन गेह मंडमें रहे, पुण्य पयोधरको सुख लहे ॥१७१३
बैठें नारी चहुंधा घेर, लोचन आनंदे मुख हेर ।
तिनमें सो दीसे मकरंद, मानों शरद उड़गणमें चन्द ॥१७१४
क्रीडित गए बहुत दिन जाम, बहुरो नृप सो विनयो ताम ।
अब नृप आपन कृपा करेह, रहसवंत होय आयस देह ॥१७१५

सुनके तबै नवायो सीस, मुखकर कछून कहो महीस ।
तब मन पायो चलो कुमार, नृपको नमस्कार कर सार ॥१७१६

कछु सेन नृप दीनी संग, बाजे पंच शब्द धुन चंग ।
मनमें हर्ष बढ़ा अधिकार, सोरहसै संजुक्त उदार ॥१७१७
बहुत बातको कहे बढाय, कंचनपुर तहां पहुंचो जाय ।
वज्रसेन राजा भेटियो, कछू दिवस ताको सुख दियो ॥१७१८

卐 卐 卐

बहुरो नृप तैं आयस लियो, त्रियगण सहत पयाणों कियो ।
पुन पुंडरि देसका कन्न, दोय सहस ब्याही योवन्न ॥१७१९
पुनुमें बार देशकी नार, परणो शतको कहे विचार ।
तिन अंगनको अति सुख दियो, आगे बहुरपयानो कियो ॥१७२०
तब सो पहुंचो देश तिलंग, एक सहस ब्याही वरचंग ।
पुन सा पुण्यवंत रंजाय, पहुंचो दल पट्टण सुख पाय ॥१७२१
रयणमंजूषा अर गुणमाल, मेट्यो आय राय भूपाल ।
भुंजे सुख भोग परवान, पाले सिद्धचक्र विधि तान ॥१७२२
मुनिवर मान धरे अधिकार, दुखियनका कीजे प्रतिपार ।
एक रैंण सेवत सुख पाय, चिता ताहि भई पुनि आय ॥१७२३

२५-श्रीपालका राणियों सहित उज्जैनीको चलना

मैनासुन्दरीके दिन अवैं, कछुयक रहे गए अरु सवै ।
जो हूँ चलो न अपयश पाय, तो वह सुन्दरी मोतैं जाय ॥१७२४
जा पसाय दुःख दारिद गयो, जा पसाय हूँ प्रगट्यो भयो ।
जापसाय व्रत पायो सार, यह परलोक सवारण हार ॥१७२५
जा प्रसाद श्री पाई एन, महा दुःख पावत है तेन ।
जो पै अब न जाऊँ हिथ वार, तोहू ताहि न देखो सार ॥१७२६
या चित ताहि भयो विहान, राजा प्रति विनयो सुजान ।
भो नरपति रायनके राज, हम घर जाहि तुरत ही साज ॥१७२७

यह सुणके राणे दुःख लयो, भो कुमार तैं अजुगत कहयो ।
तू यह राजभार सहु लेहू, सेव करूँ मैं आयस देहू ॥१७२८
या सुण कुमर रहे विहसात, भो नृप पुण्यवन्त सुण वात ।
तो पसाय सुख भुँज्यो घणों, अर यह विभो कहां लो भणों ॥१७२९
अब हम ऊपर कृपा करेहू, आपण विदा गुसांई देहू ।
ऐसो वचन राय जब सुणों, अति दुःख लहियो सीस तब धुणों ॥१७३०
हठ राखे उपजे विस्माय, मन ही मन चिंते वहराय ।
कौन उपाय रहे यह वार, राखन हेत श्रीपार कुमार ॥१७३१
ताकों फिर उत्तर नहि दियो, मन धर ठौर महलमें गयो ।
राणी सों यह प्रगटा वात, अति दुख भयो परसीनों गात ॥१७३२

पुन राणी बोली शुभ सार, सुणहु राय सब विधि व्योहार ।
कन्या ब्याह दई कर साज, सो परनई न तासो काज ॥१७३३
जो अब कीजे कोटि उपाय, एको छिन राखी नही जाय ।
नाना विधि पकवान अपार, अर मुक्ताफल जे शुभ सार ॥१७३४

चढै जिनेश्वर आगैं जवें, ते पर होय पलकमें सर्वे ।
यही वात देखो जिय जोय, त्यों निज ते कन्या पर होय ॥१७३५

यासुन राव विचारियो भाव, मनकों सव छांडयो विसभाव ।
कछु दिवस वीते सुख भयो, वहुरो श्रीपाल वीनयो ॥१७३६

विनय वचन कहके अधिकार, प्रणमति वहु कीनी श्रीपार ।
राजाको मन पायों जवें, शत्रु दवण सुन चलियों तवें ॥१७३७

卐 卐 卐

चलतां राव उठो विहसंत, एक हजार दिए गजदंत ।
चार सहस्र सव दिये तुरंग, दिए छत्र चामर दोय चंग ॥१७३८

दियो धन तिह अगम अपार, कवि परिमल्ल न जाने सार ।
वस्त्राभरण दिये शुभ घणे, जिन सों नग निर्मोलिक वणे ॥१७३९

आपण तिलक करो नरनाह, सव नगरी मिट गयो उछाह ।
मंजूष. गुणमाला कण, वहु आभरण दिए सोवण ॥१७४०

वहु दिर इसे चण्डोर, जिन्हें लगे मुक्ताफल जोर ।
अन्तेवर अति देख्यां जिसो, नीकें कर सनमान्यो तिसो ॥१७४१

राणीको अति उमगो हियो, कण्ठालम्ब सुता सों कियो ।
वार वार कहे विलखाय, विधिकी कथा न वरणी जाय ॥१७४२

कित दश मास गर्भ ये धरी, कित मेरे कन्या अवतरी ।
कै मैं प्रीति निरन्तर ठई, हा पुत्री परदेसण भई ॥१७४३

वार वार कहे दय छोह, वहुरो कित देखोगी तोह ।
मनकी मोहनि प्राण पियार, दर्शन दुर्लभ हुई कुमार ॥१७४४

卐 卐 卐

यह कह कण्ठ लगी अकुलाय, पुत्री तव रोई वहु भाय ।
कंपत अधर न आवे वात, पुत्री शिथिल भई अति गात ॥१७४५

वचन तातरे दई असीस, बाबुल जीवो कोडि वरीस ।
भ्रातनकी जोड़ी बहु बढो, शुभकी कला दिन ही दिन चढो ॥१७४६
धर्म वेलि परसरो यू भणौं, सदा सुहाग रहो तो तणौं ।
निवसो सदा शील सो नेह, कहै सुता जननी सुन एह ॥१७४७
तब राणी बोली भर नैन, गलै खाखरे मीठे वैण ।
सुन पुत्री तू कुल आचार, ते मति पुत्री विसरहि सार ॥१७४८
पिय आयस मति भूलो चित्त, सासू सेव कीजियो नित्त ।
निवसो सदा शीलको भार, बढो सासरो और सोसार ॥१७४९
करो राज महि ऊपरि सन्त, चिर जीवो कोटीभट कंत ।
सदा नेह निवसो पिय संग, धर्म बुद्ध रहियो वर चंग ॥१७५०
बहु विभूति बाढो तुम गेह, कबहू मलिन होय मति देह ।
कर हू राज तुम इन्द्र समान, मही मण्डल फिरो तुम आन ॥१७५१
शील संयुक्त भोगवो भोग, मेरी यह असीस तुम जोग ।
लोचन दुहु वहे परवाह, कण्ठा लम्बन मूकी धाह ॥१७५२
बहुरो राणी अति बिलखाय, रयण मञ्जूषा भेटी धाय ।
अर आभरण मनोहर जिते, आपण राणी दीने तिते ॥१७५३

❀ ❀ ❀

बिछुरत अति दुःख पायो घणों, ताकी कथा कहां लौ गिणों ।
कोटी भट चलियो ले जोग, करें रुदन नगरीके लोग ॥१७५४
बार बार राव विलखाय, कहे सुनो कोटीभट राय ।
यह विनती मेरी है तोय, मनमैं मति भूले तू मोय ॥१७५५
विनती यही कही कर जोर, कबहू दीजे दरस बहोर ।
पूर्व शुभ प्रकट्यो हौ मोहि, तातें दरश भयो हो तोहि ॥१७५६
अबसौ बहुरि जिन है गयो, दारुण पाप सहाई भयो ।
कहां करुं विधिको निरमाण, तोसौं सज्जन करै पयाण ॥१७५७

तब बोल्यो श्रीपाल कुमार, भो नृप तुम सम कौन उदार।
तुम मोको सुख दियो अपार, तुम तैं प्रकट भयो संसार ॥१७५८
कछु दिवस सुख पायो घणो, अबलो पियो भाग तो तणो।
घटो पुण्य कछु कही न जाय, छूटे राय तुम्हारे पाय ॥१७५९
भरि अंक भेटयो भूपाल, कोटीभट चलियो अरिसाल।
ढुरे चमर शिर दीनो छत्त, श्रीपाल भयो राव महत्त ॥१७६०
चतुर रंग दल चाल्यो परचण्ड, उडी धूल छायो सुरखण्ड।
भयो कहराउ गयो लुभमान, अति गंभीर वाजे नीसान ॥१७६१

वस्तु छन्द।

नीसाण वज्यो सेण साज्यो हले वांसिगि राउ।
रैण उडी आकाश पूरो वहै नाही वाउ॥
हय खुरनिखुंदहि धरणि रुंवहि कसमस्यो जु कुरंभ।
गय घंट वाजणि मतंग गाजहि प्रवल दल आरंभ॥
कियो पयाणो भूपतिको ऊनता इन्द्रि समान।
कहे कवि परिमल्ल प्रकटे देश देश हि आन ॥१७६२

चौपाई।

जो सब सेन प्रकट कर कहूँ, बढे कथा कछू अन्त न लहूँ।
बहुत बातको कहै वढाय, सोरठ देश पहुंचो जाय ॥१६६३
सनमुख आय मिलो ता राव, बहु आदर कीनो धर भाव।
कन्या गण शत पंच सुभाव, जानें व्याह दई वह राव ॥१७६४
राजा सो बहु नेह उपाय, चालो मरहठ पहुंनो आय।
कन्या वरी पंचसौ तहां, विरम्यों दिवस द्वियक नर जहां ॥१७६५
फुनि गुजरात गयो जैकार, कन्या वरी तहां सैचार।
फुनि वैराठ गयो वरणई, चन्द्रमुखी द्वय सै परणई ॥१७६६

और राय बहु सेवा लिए, सब नरपाल घेरि वशि किए।
जे नृप चक्रेसुर ही समान, ते सेवक कीने परवान ॥१७६७
चलियो महा बहुत सुख पाय, पुर उज्जैनी पहुँचो आय।
वेढ़ो नगर घेरि चहुँपास, ठौर ठौर दल परो विकास ॥१७६८
गहर शब्द बाजें नीसान, प्रलयकाल घन गर्ज समान।
तहां अन्तेवर उतरो सर्व, देखत जान इन्द्रको गर्व ॥१७६९
लागी होण रसोई जहां, ईंधन नीर न पूगै वहां।
प्रगटो धूम लग्यो आकाश, पठियो दूत मानो हरि पास ॥१७७०
दिन दश रह्यो अम्बपुरि ताल, अति भयभीत भये दिग्पाल।
अर वसुधासम रहियो मांड, वनचर जीव गए थल छांड ॥१७७१

अन्धकार तिह अवसर भयो, मानों स्वर्ग सुर आथयो।
हय हींसैं गज करें पुकार, प्रगटो शोर नगरमें सार ॥१७७२
मुखवाणी सुनिये नहि कान, सैन नहीं बोलैं अकुलान।
व्यापारी मंत्री परधान, सब जकि रहे गए अवधान ॥१७७३
सब ही नगर भयो कहराव, सबै कहै भयो उतपाव।
पर चक्री नृप कही न जाय, सिरपर वैरी पहुँचो आय ॥१७७४
लही सुद्धि पहुपाल नरेश, तब मनमैं दुःख भयो अशेष।
मंत्री बोल लिए तिह पास, भाषै तिनसों चित्त उदास ॥१७७५
कछु मंत्र तुम करो विचार, प्रलय पाश किम होय उबार।
मंत्री मंत्र करें थकि रहो, फुरत नहीं राजासे कहो ॥१७७६
काहूके मन कछु उपाव, कोऊ कछू कहै धर भाव।
उसरा उसर करत दिन गयो, भई रयण दिनकर आथयो ॥१७७७

३६-श्रीपालका माता और मैनासुंदरीसे मिलाप

तब श्रीपाल विचारो भाव, बहुत सु चिंत भयो यह राव।
को जानैं शुभ दिन कब होय, कबधो नृपमिल है जिय जोय॥१७७८
प्रात होत ही सब गुण भरी, दीक्षा ग्रहण करे सुन्दरी।
या विचार ऊठयो वरवीर, पछिम रयन अकेलो धीर॥१७७९
तीनकोट नाषे तिह वार, गयो गेहको लेय न सार।
द्वारे सो ठाढ़ो है रहो, सुन्दरी कुन्दप्रभा सों कहो॥१७८०
पुत्र तुम्हारे साहस धीर, अजो न आयो गुण गम्भीर।
अब मोपै न सहारो जाय, नरभव जात अकारथ माय॥१७८१
अबतो हूं सब सुख परिहरुं, सुप्रभात जिन दीक्षा धरूँ।
नाहक मोह इतने दिन भए, बारा बरस अकारथ गए॥१७८२
निश दिन ते सेये तो चरण, अब मो भोर जिनेश्वर शरण।
कुन्दप्रभा सुनके गह भरी, तब तिन एक बात उचरी॥१७८३

ॐ ॐ ॐ

धीरो मन कर पुत्री आज, दिन दोय बीते कर हैं काज।
हम तुम दोऊ दीक्षा लेह, दुःख जलांजल पानी देह॥१७८४
सुन सुन्दरि कहे बिलखाय, तुम तो अजुगति कहत हो माय।
अब जो मन मेरो थिर रहो, नाथ वियोग महा दुःख सहो॥१७८५
अब मोपै क्षण रहो न जाय, निश्चय शरण जिनेश्वर पाय।
काहू कही न पियकी बात, तातैं दुःख व्यापो अति गात॥१७८६
कै ताको मारग भुल गियो, कै काहू कामनि वश कियो।
कै फुणि मन कर वंछी नार, मैं जियते डारी जु विसार॥१७८७
तातैं खरो चित्त अकुलाय, रात दिवस मो कछु न सुहाय।
बहुत दुःख मैं किससे कहूँ, सुप्रभात जिन दीक्षा लहूँ॥१७८८

अडिल छन्द ।

अब जो हो पिय नाम हियेमें आवतो ।
तातै दुर्जन काम न मोह सतावतो ॥
अवै गया वह भूल बढ़ो दुःख किम सहुं ।
जो जिनशरण न जाऊं तो विरहानल दहुं ॥
बीते द्वादश वर्ष सुध नहि पाइयो ।
अब जो आशा लुब्ध चित्त समझाइयो ॥
मोकूं तो अब दुख बखानों सो भयो ।
एक न मिलियो कन्त अर दूजो तप गयो ॥१७८९

दोहा ।

पसरी या संसारमें, आशा पास अपार ।
प्राणी बन्धे न छूटहीं, पावें दुःख अधिकार ॥१७९०

गाथा ।

आसा पिसाच गहियं जीवो पावइ दारूणं दुक्खं ।
आसा जोणि नरुत्तं तेणिरुत्ताप सह्य दुक्खाइं ॥१७९१॥

चौपाई ।

अब जो हूँ आशा वश रही, दुःख पापी विरहानल दही ।
दुहूं पवारे भयो विगार, काहू भांति न पाऊं पार ॥१७९२
यह दुःख मोको भयो अधिकार, मोते गयो महातप सार ।
पियको तो दुःख कछू न मोह, ताते माता विनऊं तोह ॥१७९३
जाते दुःख सब मिटे कलेश, सुप्रभात ही सेवुं जिनेश ।
दुर्गति मेटन शुभ गति करण, आदि अन्त जीवनको शरण ॥१७९४

कुन्दप्रभोवाच

सुन सुन पुत्री मेरी बात, कायर भूल होहु मत गात।
दया हेत दिन दो थिति मांड, हिये विचार देख हठ छांड ॥१७९५
तेरो प्रीतम यह भरतार, मैं दश मास धरो उर धार।
क्यों मैं दरस देय जो आय, होय निशल्य सल्ल सब जाय ॥१७९६
सुन्दरि मनमें देख विचार, दिन दोय रहे मिटे सब गार।
अब जो हम तुम दीक्षा धरें, पुरजन लोग घेर सब करें ॥१७९७
कोटीभट जो पहुँचे आय, सूनों घर देखे पछिताय।
अति दुःख लहे चहुधा चाहि, सम्पति बढी दिखावे काहि ॥१७९८

मैनासुन्दर्युवाच

माता सुनो धर्मको भाव, अब यह वेर भयो वेराव।
आसा पास काट गति मोह, निर्मल भई बुद्ध तज कोह ॥१७९९
पियको हेत अबै जो रहुं, तो यह वेर महा दुख लहुं।
माता तुम हू मोह छिटकाय, दोऊ सेवे जिनवर पाय ॥१८००
तुम तो हो जननी ता तनी, देखो सुत विभूति जो घनी।
मोसी ते दासी ता गेह, है हैं बहु स्वरूप गुण गेह ॥१८०१
अब जो रहुं धर्म छिटकाय, हूं हुं मानहीन सुन माय।
यह सुन श्रीपाल भयो छोह, उमगो हियो बढो अति मोह ॥१८०२

* * *

तब सो बोल्यो कही विचार, हे सुन्दरि यह द्वार उघार।
शब्द सुनत उठी विहसंत, उदघाटे जु कपाट तुरंत ॥१८०३
भीतर कुँवर गयो विहसाय, नमस्कार कर वंदी माय।
तिन देखो सुत नैण पसारि, मनमें हर्ष कहै विचारि ॥१८०४

दई असीस रंजि कै चित्त, सुख सौं लछि भुञ्जयो नित्त।
श्रीपाल देखी सुन्दरी, दुर्बल दीन और गद्द भरी ॥१८०५
तब सोगयो सेज बिहसाय, मैनासुन्दरी पकरे पाय।
तब कोटीभटको सुख होय, कण्ठलाय आलम्बो सोय ॥१८०६

卐 卐 卐

भयो सुख उमग्यो तब हियो, मैना सुन्दरि पूछन लियो।
कहो कन्त अब मोसौं बात, कुशल क्षेम नीकै हो गात ॥१८०७
धन्य यह वासुर धन्य यह घरी, तुम पिय देख नैननि भरी।
मोसौं बोल निवाहयो साख, तुम घर आये पायो लाख ॥१८०८
तब श्रीपाल कहै सुन नारि, तोसौं कहौं बात मन हारि।
सुन्दरि कछु शोच मति करै, बहुत विभो ल्यायो जी धरै ॥१८०९
चतुरंग दल अगम अपार, पायो सिद्धचक्र फल सार।
कुन्दप्रभा अर सुन्दर नारि, दहूले गयो कटकमंझारि ॥१८१०
जननी को सिंहासन दियो, सुन्दरि ता तरि ही वैसियो।
सकल लोक वन्दे सब आय, दई असीस तब वैठे जाय ॥१८११
श्रीपाल तब मन बिहसाय, सब अन्तेवर लिए बुलाय।
कहो मंजूषा सों दुख हरण, मो जननी यह वन्दो चरण ॥१८१२

卐 卐 卐

मैनासुन्दरी पहिली नार, यह पसाय रिद्ध पाई सार।
आठ सहस आई रंजाय, सब ही गहे वासूके पाय ॥१८१३
पहले रयणमजूषा बाल, ता पीछे आई गुणमाल।
बहुरो चित्ररेख सों आय, रम्भा जावंती फुनि धाय ॥१८१४
चौथै वज्रसेनकी धिया, लागी पाय सबही हर्षिया।
सौरहसै जस सैनि कुमारि, नमस्कार चरणनको कारि ॥१८१५

और जु हैं भामा अणिवार, लागी पाय रूप इकसार ।
बहुरो लगो दिखावन नाथ, मैनासुन्दरी लीनी साथ ॥१८१६
हय गय वाहन दासी दास, रतननके बहु पुंज सुहास ।
अपनों विभो निहार निहार, सबैं दिखायो बाह पसार ॥१८१७

घट बांधो मैनाके सीस, सब ही ऊपर कीनी ईश ।
प्रथम हि मंजूषा गुणमाल, अवर त्रिया जे रूप विशाल ॥१८१८
सबन चरण पर सेवे ता तने, शोभा कछु कहत नहि बने ।
मैनासुन्दरी अति विहसाय, रोमांचित सो अंग न माय ॥१८१९
तिह वेरां दीसे सो तिसी, इन्द्र गेह इन्द्राणी जिसी ।
किम कर कहूँ सरस अति बणी, मानो कामदेवको धणी ॥१८२०
श्रीपाल उठि ठाढ़ो भयो, द्वय कर जोरि सु यौं वीनयो ।
सुन सुन्दरी मैं कहूँ सु भाव, जो कछु है सो तोसि पसाव ॥१८२१
चतुरंग दल अवर ए नारि, अवर विभूति सु देख निहारि ।
यह प्रसाद तेरो है सर्व, मैं तो वही पुरुष नहीं गर्व ॥१८२२

मैनासुन्दरी बोली तबै, मेरो वचन सुनो पिय अबै ।
तुम कोटीभट साहस धीर, पुण्यवन्त अरु गुण गम्भीर ॥१८२३
कमला दासी सेवै पाय, रही कीर्ति दिग दश छाय ।
जा पर कृपा तुम्हारी होय, मन वांछित सुख पावे सोय ॥१८२४
अरु जो भयो सबैं मो काज, एक वचन मो दीजे आज ।
मेरो पिता कर्म पर भणो, मान भंग कीजे ता तणो ॥१८२५
कामरि पहरि कुहारि कंधि, कटि कोपीनां डोरी बन्धि ।
ऐसी विधि जब मिली है तोय, तब ही सुख उपजेगो मोय ॥१८२६

यह सुन कोटीभट जक रहो, सुन्दरि तैं अजुगत यह कहो।
तेरो पिता कियो गुण मोय, तासों इसी बात किम होय ॥१८२७
कन्या रतन महा गुण भरी, कोढ़ीकों दीनी सुन्दरी।
जिसदिन सबै हितु परिहरो, तिह दिन इस सहाव मो करो ॥१८२८
तातें मो करवों यों नाहि, मेरे इसो न कोउ जग मांहि।
तब सुन्दरि बोली सुविचार, दोष रूप नहि कहो पुकार ॥१८२९
याकै नहि धर्म परतीत, जातै नहि न्याय अर नीत।
तातें तनक दिखावो मर्म, तो या मन आवै जिन धर्म ॥१८३०
यह सुन कोटीभट हरषियो, त्रिया वचन मनमें परखियो।
यह सुन दीनो दूत पठाए, तासों कही बात समझाय ॥१८३१
ऐसे भेष मिलो निकुताय, नातरि देश मारि हों आय।
यह सुन दूत पहुँचो तहां, सिंह द्वार रायको जहां ॥१८३२॥
प्रतिहारी पूछो व्योहार, पुण ले गयो जहां नरपार।
वार वार कीनो परनाम, तब पहुपाल कीयो सनमान ॥१८३३
दियो वहसन्त बोल उठाय, पूछे राव ताहि सन भाय।
कह कह दूत हिये धर भाव, कुण आयो है यह तो राव ॥१८३४
कवण देश किन्ह नगरजु गेह, नीके कर कह मन धर नेह।
बोल्यो दूत तवें शुभ सार, भो नृप मत पूछो व्योहार ॥१८३५
दल बल पूरो अति भीम वाउ, या सम दूजो और न राउ।
महिमण्डलाके हैं नृप जिते, चरण कमल सेवत हैं तिते ॥१८३६
खग वर धर अगन अपार, सेवा करत न जानो पार।
अवर भेद मैं वरणूं सर्व, मानस तासों करे न गर्व ॥१८३७
नगर विध्वंसत निकस्यो आय, तू नृप मिल शँका छटकाय।
अपनो दल बल छाडो देव, पांव पियादो मिल करी सेव ॥१८३८

पहरो कम्बल कण्ठ कुठार, सिर पर धर लकरीको भार ।
यह विधि गहो रायके पाय, नातर नगर विध्वंसै आय ॥१८३९.

卐 卐 卐

मारे बहुत वंदि बहु करै, कुल बल सहित तोहि संघरै ।
सुन पहुपाल क्रोध अति भयो, मारौ मारौ सब सों चयो ॥१८४०.
बड़े बोल बोलत परचण्ड, या पापीके करो शत खण्ड ।
दुष्ट धीठ शंका नहीं करै, बार बार बुरी उच्चरै ॥१८४१.
या ऊपर अति अदया करो, यह पापीको सूरी धरो ।
तत्क्षण किंकर पहुंचे आय, दूत मार बांध्यो अकुलाय ॥१८४२.

卐 卐 卐

तब मन्त्री बोले कर जोर, स्वामी तुम लागत है खोर ।
भो नृप चूड़ामणि पहुपाल, दूत न मारन जाय भोवाल ॥१८४३.
अरु यह परचक्री परचंड, जाके दल हालत ब्रह्मंड ।
याहि मिले नहि दोष विचार, लीजे अपणो देश उबार ॥१८४४.
यह परदेशी निकस्यो आय, ज्योंही कहै मिलौ त्यों जाय ।
यह सुन राजा उपशम भयो, तबैं दूत तिन छोर जो दियो ॥१८४५.
तासों वचन कहो निकुलाय, राजा सों यों कहियो जाय ।
जो तुम आयस दीनो मोही, त्यों हि आय मिलंगो तोहि ॥१८४६
यह सुन दूत पहुंचो तहां, कोटीभट बैठो हो जहां ।
लाग्यो कहन सुनो हो राय, तुम ज्यों कहो मिले त्यों आय ॥१८४७.

卐 卐 卐

कछु न गर्व कियो वरवीर, अबै आवत सुनियो धरधीर ।
यह सुन श्रीपाल विलषाय, मैंना सों जंपै परजाय ॥१८४८
तैंसी कही बात समझाय, जैसी दूत कही है आय ।
सुन्दरि याकों दीजे दान, जिन यूं कहो कियो परवान ॥१८४९.

तब आयस दीनो विहसाय, भावे तुम्हें करो सो जाय।
यह सुन शत्रु दवन सुत बात, दूत बुलायो फूल्यो गात ॥१८५०
तासों कहो सबै व्योहार, जाय राय सो ऊचरो सार।
कछु शंक मत जियमें धरो, रोस आपणों सब पर हरो ॥१८५१
हय गय दल बल सौं विहसाय, राजहि मिलो चित्त छिटकाय।
यह सुन दूत पहुंचो तहां, नृप पहुपाल सचिन्त्यो जहां ॥१८५२
नमस्कार कर बोलो तबैं, नृप पहुपाल सुनो तुम अबैं।
जो कछू दल बल है तुम सेश, मिलो समेतह कहो नरेश ।१८५३
यह सुन राव आनंदित भयो, बहुत पसाव ताछको दयो।
लीनी संग सेन अनिवार, वरणत कथा होय विस्तार ॥१८५४
यह इत तैं मतंग चढि जाउ, वह उततें हस्ती चढआउ।
श्रीपाल इह देष्यो जाम, भयो पयादो उतरो ताम ॥१८५५
तब वह भयो पयादो राव, दोऊ मिले चित्त धर भाव।
परस परस उपज्यो अति नेह, पहुपाल उपज्यो संदेह ॥१८५६
ता तन गहो मुहा मुह चाहि, नैकपिछान सकि नही ताहि।

卐 卐 卐

तब श्रीपाल कहे सुन राय, नीके देख मोही निकुताय ॥१८५७
तब पहुपाल कहै कर जोर, तुम स्वामी लीनो चित्त चोर।
तातैं समझ न परि है मोहि, कहां जानि अवलोंको तोहि ॥१८५८
तब श्रीपाल हस्यो सुन बात, उपज्यो बहुत मेह सुन गात।
सुन पहुपाल राय पहिचान, हूं तो तोहि जवाई जान ॥१८५९
मैनासुन्दरीको वर कंत, तुमको आय मिल्यो शुभ संत।
बारा बरस दिशंतर गयो, तो प्रसाद फल ऐसो भयो ॥१८६०

यह सुन वहुरो उठियो राव, कंठा लग्ग कियो धर भाव।
दूहूराय आंसू भरे लए, नाना विधि रोमांचित भए॥१८६१
भेरि तूर बाजैं अनिवार, नगर लोक हरखो तिहवार।
श्रीपाल पहुपाल सुहास, पहुंचे मैनासुन्दरी पास॥१८६२
विनती करै राय बिलषाय, द्वय कर जोरे सीस नवाय।
भो पुत्री सब ही गुण जान, शील धुरंधर सुख निधान॥१८६३
तू अति दयावन्त जिय जोय, तो सम और न दूजी कोय।
मैं तेरो देख्यो अब कर्म, अरु आरा धित जिणवर धर्म॥१८६४
मैं पापी तो अविनय करी, अविनय सौं तूं अति दुःख भरी।
यह सुन सुन्दरि लूठी अंग, चलो आप अन्तेवर संग॥१८६५

हर्षित ह्वै पहुपाल नरेश, पट्टन शोभा करी अशेष।
पाटम्बर छाए बाजार, रोपे तोरण वन्दरवार॥१८६६
बाजे तहां बाजै अधिकार, भेरी मृदंग तूर सहनार।
अर अति भई शंख गुञ्जार, अर निशान बाजे अनिवार॥१८६७
राजा हर्षित कियो अति मान, याचक जन दीनो बहु दान।
होत उछाह नगरी मो तबैं, लग परस्पर जंपैं नबै॥१८६८
देखो पुण्य तनो परभाव, आयो श्रीपाल यह राव।
ल्यायो विभव की बहु ल्याहि, पूर्ण है सब ही गुण जाहि॥१८६९
शील धुरन्धर सुख निवान, जो सम और न दूजी जान।
बहु विभूति लाये अधिकार, सेवक बहुत किये अनिवार॥१८७०

बहु विभूति है इन्द्रह तनी, सो हम पै नहि जाय है गिनी।
जय जय शब्द भयो तिह काल, पुर प्रवेश कीनो श्रीपाल॥१८७१

आठ सहस अन्तेवर संग, भेटे तबैं सात सै अंग ।
बारम्बार रहे उर लाय, निज मन्दिर सो पहुँचो जाय ॥१८७२
कंचन कलशन निर्मल नीर, न्हायो निर्मल कियो शरीर ।
बैठो सिंहासन परि धाय, सुख भुंजे दुःख गयो विलाय ॥१८७३
विलसै श्रीपाल शुभ चरै, काम भोग मन वंछित करै ।
राज रीत पालै अधिकार, आठ सहस भोगवै नार ॥१८७४
अंग सात सै राखे मान, याचिक जनको देवे दान ।
आठवीं संधि पूरण भई, मूल देख भाषा वरणई ॥१८७५

छन्द त्रिभंगी ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणं ।
बुध जन मन रंजन पातिग गंजन, सिद्धचक्र विधि दुःखहरणं ॥
त्रिभुवनसुखकारण भवजल तारण, चौपई बंध परिमल्लकृतं ।
सब रोरविनास्यो सुखपयास्यो, आठ सहस सुन्दरी वरियं ॥
महिमंडल जानों सब नर मान्यो, सुजन वखान्यों दुःख हरियं ।
हय गय रथ सारं अगण अपारं, बहु विभूति परि सिद्धिमयं ॥
मारव बहु देशं फिर परदेशं, पुर उज्जैणि राज कियं ॥१८७६॥

३७-श्रीपालका चंपापुर जाना ।

चौपाई ।

भुंजे सुख श्रीपाल असेश, करै नेह पहुपाल नरेश ।
एक दिवस मनमें सन्देह, कोटीभट जी सोचे एह ॥१८७७
अतुल लच्छि पाई मैं घणी, भुगतूं जाय भूम आपनी ।
कहां करो ता सुत सौं काज, जो नहि वहै पिता को राज ॥१८७८
जिह न सुजस महि मंडल कर्यो, ताको गर्भ उदर किनगिर्यो ।
यह चिंतन जिनवर संभार्यो, पंचपरम गुरु जियमें धार्यो ॥१८७९
गुण गम्भीर अरिदवण दरसाल, पहुँचो तहां जहां पहुपाल ।
विनती करी जोर दूय हाथ, हमको विदा देह नरनाथ ॥१८८०
तुम प्रसाद निज-पाटन जांहि, कृपा तुमारी राज कराहि ।
यह सुन राव कहै विरसाय, अनुगत बात कही तुम आय ॥१८८१
जो तुम राज भूख है देव, करो राज मैं करिहों सेव ।
ऐसी सुन श्रीपाल कहाय, मेरी बात सुनो हो राय ॥१८८२

तुम मोसों तो ऐसो कियो, कन्या रयण अमोलक दियो ।
जा प्रसाद इतनौं फल भयो, तुम सो आप देखि ही लयो ॥१८८३
तुम सब बात जोग हो देव, मो से दास घणे हैं सेव ।
तुम सम और न दूजो राव, जाके मनमें केवल भाव ॥१८८४
मेरे मन यह धोखा भर्यो, तुम प्रसाद दल पायो घणों ।
अब जो राज पिताको लहूं, तो महिमण्डलमें जस लहुं ॥१८८५
तातैं विदा देहु नर नाथ, आप सेन कछु दीजे साथ ।
तब पहुपालने आयस दयो, दलबल सहित सो गोहण भयो ॥१८८६
कोटीभट दल साजन कह्यो, चल्यो आप मन में सुख लह्यो ।

मैनासुन्दरी है परधान, आठ सहस अन्ते वर आन ॥१८८७
ते चलिया सब चढि चंडोर, जिणैं लगे मुकताहल जोर ।
विच विच नग लागे अति घणें, सो तो कछू कहित ना बणें ॥१८८८
गज अंबारं में वछु भई, कछु सुखासण में चढ़ लई ।
वछु इक चली पालकी साज, लाल पटम्बर छाई गाज ॥१८८९
अग्रभाग मैनासुन्दरी, चढ़ चण्डोर चली गुणभरी ।
पीछे रयणमंजूषा वाल, ता पीछैं सुन्दरी गुणमाल ॥१८९०
पीछैं आठ सहस जे आन, चली जाय अपसरा समान ।
बहुत बातको कहे वढ़ाय, देखत गर्व इन्द्रको जाय ॥१८९१
चलो सेन दे अगण अपार, हय गय वाहन लहे न सार ।
अबर सुभट बहु चलिया साथ, आप आपने आयुध हाथ ॥१८९२

दोहा ।

बहुत भूप संग्रह भये, दियो दण्ड बहुमाल ।
कोलाहल होवत भयो, चलो राव श्रीपाल ॥१८९३

वस्तु छन्द ।

श्रीपाल चलो मेरु हलो जागो वासक सेश ।
गजघण्ट गाजहि प्रबल साजहि भजे अरि तज देश ॥
निसान बाजो सैन साजो गिण्यो कापै जाय ।
कलमले दश दिक्पाल कंपे थाहरे बहु राय ॥
गगन उड आकाश छायो लुपे गयो तब भान ।
खल भलो भुवलोक अति ही शब्द सुनिये न कान ॥१८९४

दोहा ।

अन्धकार प्रकटो तहां, जुरो सेन गम्भीर ।
और कही दशउं दिशा, तूट गयो तृण नीर ॥ १८९५

चौपाई ।

कषम षाइ कूरम कलमल्यो, काष सों कलो डेरा परयो ।
वहु गिरिवर नाखन्त परवान, वन थल नदी सरोवर थान ॥१८९६
झाडे वहु पाटण परदेश, और बहुत वष किये नरेश ।
वहु दिन मैं को कहै बढ़ाय, चम्पापुर सो पहुँचो जाय ॥१८९७
परयो जु सैन नगर चौफेर, देखत पुर शंक्य तिह वेर ।
ज्यों चक्रेश विजय कर आय, घेरो कामदेव पुर जाय ॥१८९८
कपिवंशा नृप तीने साथ, ज्यों लंका घेरी रघुनाथ ।
ज्यों सागरके चहुवा पार, त्यों दल दीसै दिष्ट पसार ॥१८९९
डेरा सघन दीन अनिवार, अरुण श्वेत अरु श्याम अपार ।
हरित जंगाल जरद अधिकार, ज्यों वादर पावस पयसार । १९००
हय हींसन देखिए सु ठाम, गज गाजैं घन गरज समान ।
नगरी मांहि शोर अति भयो, मानों सुख सवैं भज गयो ॥१९०१
सुख सब चल्यो अगण अपार, हय गय वाहण लहै नसार ।
अवर सुभट वहु चलिया सोय, आप आपने आयुध जोय ॥१९०२
सर्व लोग यह कहैं विहाल, आयो अनचिन्तो यह काल ।
याको दल देखियो अशेष, मानों परयो भरत चक्रेश ॥१९०३
काहू देखत इसा निहार, जो परलयसे लेय उवार ।
तव यह वात कही श्रीपार, अव हि चलिये नगर मझार ॥१९०४
निरविकार मन साहस धीर, कछू न भेद लहो वरवीर ।
यह सुन मंत्री बोले तवैं, सुनै राय हम विनवैं अवै ॥१९०५

❀　　❀　　❀

आगैं होय न मिले जो आय, कछू गर्व तहि करेवै राय ।
प्रथम दूत पठवो तुम तहां, वीरदवण राजा है जहां ॥१९०६

नाम तुम्हारो प्रगटे जाय, मन सूधो तो मिल है आय।
जोलौं बात नहि लहिए राज, तोलौं कहा बिगारो काज ॥१९०७
जो आयस मानैं तुम तणों, देत राज सुख मानैं घणों।
मिलै आय छांडै अभिमान, तो विरुद्ध कीजे किन ठाम ॥१९०८
श्रीपाल भाषो चरसंत, दूत बुलायो कह्यो तुरन्त।
तासों कही बात समझाय, यों कह वीरदवण सो जाय ॥१९०९
भो स्वामी श्रीपाल नरेश, आयो परिगह बहुत अशेश।
शीघ्र ही ताको देवो राज, वेग मिलो ज्यों सबरै काज ॥१९१०

अरु तुम ताकै तात समान, अब न काहू भाखूं आन।
यह सुन दूत पहूँचो तहां, सिंहद्वार रायको जहां ॥१९११
प्रतिहारी सो भाषी जाय, श्रीपाल रायनको राय।
नगर निकट मेल्यो अधिकार, आयो कहन बात हूं सार ॥१९१२
प्रतिहारी यह सुनियो जाम, वीरदवण सो विनयो ताम।
सुनके वीरदवण विहसियो, दूत आपने ढिग बोलियो ॥१९१३
देखत नमस्कार तिह करो, बहु सनमान तासको धरो।
श्रीपाल रायनको राय, नगर निकट मेल्यो अधिकाय ॥१९१७
आयो कहन बात हूं सार, सो सुन राय बात सोधार।
दे तंबोल अरु पूछी बात, सुख है श्रीपालके गात ॥१९१५

दूत उवाच

सुन हो नाथ राय श्रीपाल, जो दुर्जन जनको क्षय काल।
जो कछु पहले हो तनु रोग, सोउ गयो मिटो सब सोग ॥१९१६
व्याही आठ सहस वरनार, दीसे सुर अपसर उनहार।
चतुरंग दल अगण अशेष, सेवा जाकी बहुत नरेश ॥१९१७

सेवक हंसद्वीप नरपाल, दल पाटणको नृप भूपाल ।
ता सुत चित्त विचित्त गुणाल, जाके परिगह बहुत विशाल ॥१९१८
ते आयसकारी हैं सर्व, ता सम भूपन अवर न गर्व ।
कुङ्कम पाटणी नीको ठाव, राणो वज्रसेन है नाव ॥१९१९
जिन भूपन पै लीनो दण्ड, सोहैं साथ महा परचण्ड ।
मारवारिको सेवाराव, दूजो पाण्ड देश को आव ॥१९२०
तीजो सोरठ तनो भूपाल, चौथो मरहठ को नरपाल ।
गुजरात को है राणो सेव, खग खटतर बहुतक देव ॥१९२१
जा सब नाम वरण कैं कहुँ, दिवस तीस लौ अन्त न लहुँ ।
ता पटुतर दूजो नहि आन, दीसत है चकवै समान ॥१९२२
सुनो वृतान्त कहूँ मैं सर्व, मानस ताको करे न गर्व ।
पुर पामें जो मिलियो आय, तुम सो आयस कहो बढ़ाय ॥१९२३
करो आपने मनमें नेह, राज हमारो हमको देह ।
अरु तुम तात बराबर माहि, दूजी अवर न सोहै तोहि ॥१९२४

सुनियों वीरदवण यह जाम, दूत शरीर सो बोलो ताम ।
सुन हु ढीठ ऐसी क्यों होय, मांगो राज न पावे कोय ॥१९२५
जा राजाको पिता मारिए, बन्धवको विष दे टारिए ।
मित्रह मारग होय न छोह, जाकों गुरुके कीजो द्रोह ॥१९२६
जाकों अपने तजिए प्रान, सो किम छाड्यो जाय निदान ।
मेरे जाणे हीण है राव, जिन यों कहि पठो घर भाव ॥१९२७
विन भुजबल विन खड़ग प्रहार, विन रण जुरे सु करे अखार ।
जो लौं येह कर्म नहि होय, तोलौं राज न पावे कोय ॥१९२८
अवर सुनहु रे दूत अयान, पहली कथा कहुं परवान ।
जाको भरत चक्र वरवीर, देश निकासे अपने वीर ॥१९२९

राज हि काज बिभीषण बन्ध, मरवायो रावण मद अन्ध।
राज काज बहु दुख भरे, कौरव पांडव सो लड़ मरे ॥१९३०

सो किम मोपै दीनो जाय, ऐसी बात न मोहि सुहाय।
यह सुन दूत कहो कर सेव, ऐसी बात न कहिए देव ॥१९३१
है श्रीपाल राव परचण्ड, लीयो सब रायन पै दण्ड।
तासौं गर्व न कीजे जान, देहु राज अर सेवा मान ॥१९३२
यह सुन वीरदवण पर जरो, तासौं कोप वचन उच्चरो।
कितो कहै श्रीपाल कुमार, जाणैं कहां युद्ध व्योहार ॥१९३३
मेरे बल को इन्द्र न चन्द्र, मेरे बल को सुर न फणिंद।
नर वापुर कितनेक सर्व, कितेक विद्याधर गन्धर्व ॥१९३४
कहां आपणौं बल हौं भणौं, श्रीपाल बालक मो तणौं।
तासौं कहां युद्ध मैं करुं, छिनक मांहि कोटि संघरुं ॥१९३५

यह सुण दूत कहै हो राय, मनको गरव देय छिटकाय।
श्रीपाल रायनको राय, इन्द्र समान जास परभाय ॥१९३६
जिते भूप महिमण्डल तणें, सैन असंख्य अतुलको गिणें।
जिनके तोसे पायक घनें, महिमा कछु कहत नहीं बनें ॥१९३७
गर्व छांडि सब डारत पाय, तुम छौ कवण बात मैं राय।
जो वन जीव होंय अनिवार, रयपण गज की एक अपार ॥१९३८
जो दन्ती बल जुरे हजार, भाजेके हरि करे गुञ्जार।
जो जुरि आवैं कोटिक स्वान, एक तरक करे क्षयमान ॥१९३९
बहुते होय भुजंगनि यंक, मारहि मोर करै नहि शंक।
तोसे जुरें कोटि नर नाहि, मारै श्रीपाल छिन माहि ॥१९४०

वीरदवण यह सुनियो जबैं, मारण दूत कह्यो तिन तबैं।
दुःख दे याको निग्रह करो, वेगै खाल काटि मुष मरो ॥१९५३
बार बार मो निन्दा करै, जिय मैं कछु न शंका धरै।
यह सुन मंत्रिन बिनियो राव, है दूतनको यही सुभाव ॥१९५४
कारड़ी वात कहें तज शंक, ए मारिये न राय मयंक।
धन्य ए दूत सुनो हो राय, इनको साहस कह्यो न जाय ॥१९५५
मन चिंतवै स्वामीको काज, दुःखमैं परें छांडि सुख साज।
आपणे नृपको जस उचरें, पर नृपकी अति निंदा करैं ॥१९५६
दलवल विभौहीन कर गिणे, यह अति शूर कहत नहि बणे।
इनके अवगुण सब परिहरो, स्वामी हेत मन भीतर धरो ॥१९५७
इनको दान दीजिये इसो, अपने नृप सो भाषे तिसो।
सदा राज जिनके कुल भयो, तिन दूतनको अति सुख दयो ॥१९५८
तो तुम हू मही पर यश लेहु, या भावि सोई सुख देह।
मारे दूत हैं है दोष, अर नृप कबहु न पावै मोष ॥१९५९

यह बच सुना भूप ने जबै, वाल दूत सो कहियो तबै।
यह कह श्रीपाल सा जाय, मोसों जुरो झुझ तुम आय ॥१९६०
जाको दई मया कर देह, ताको राज मार सो लेह।
बहु सनमान तास को करो, बहुत दान दे दारिद्र हरो ॥१९६१
तब ही दूत राय को नयो, बहुरो कछू न उत्तर दयो।
मन विलखानो पहुँचो तहां, कोटीभट हो बैठो जहां ॥१९६२
कर प्रणाम कहे सो जान, स्वामी सुनो करो परवान।
वीरदमण बल भाषे इसो, सुर अरु असुर न बोले तिसो ॥१९६३
बहुत कहा मैं कहूँ बढाय, कहे जुरो संग्राम हि आय।
आपन दई लूठि जा देय, सोई राज मान वह लेय ॥१९६४

४०-श्रीपालका चाचा वीरदमनसे युद्ध

कोटीभट यह सुनियो जाम, क्रोध रूप है उठियो ताम।
उपजो कोप बहुत पर जरों, मानहूं वैसांतर घृत परो ॥१९६५
भाषे मार मार तिह वार, हय गय साज लेय हथियार।
जो संग्राम भिडे हम धाय, जैसे जीवत एक न जाय ॥१९६६
यह कहत गज ऊपर चढो, कर ले खड्ग चालो रिष बढो।
ता देखत ही सवैं झूझार, धाये काल रूप तिह वार ॥१९६७
हय पाखर गय पाखर परी, जे गज वेल लोह बहु जरी।
तिन की शोभा अवर न आन, ते चिमके विजुरी समान ॥१९६८
तिन पर साज चढे असवार, मानो सब इन्द्र इकसार।
पैदल चलियो अगम अपार, लिये सवै हथियार सुसार ॥१९६९
खड्ग कटारी अरु तरवार, बरछी सांग लई पटतार।
फरी गुरैणी गोफण घणी, कुन्तन सेल जाय नहीं गिणी ॥१९७०
चक्र गदा कैयक ले चले, कैयक सूर शकति ले भले।
वाकु हवाई गोला जन्त, तोप मदार को जाने अन्त ॥१९७१
बहुतक लिये और हथियार, तिन को कछु न जानों सार।
नख शिख मंडे सवैं जन लेहू, स्वामी काज भरकाए छेहू ॥१९७२
अरु वाजित्र वाजे अनिवार, तूर मृदंग भेरि सहनार।
मानो मेर वजे करनार, अरु अति भई शंख गुञ्जार ॥१९७३
अरु तहां वाजे गहर नीसान, प्रलयकाल घन गर्ज समान।
हलो मेरु वासिक खल भरो, दिक्पालन मन संशय परो ॥१९७४
कौतूहल को सुरपति गाज, देखत है ऐरावत साज।
कविपरिमल्ल वरणन जो कहे, वरष एकलो अन्त न लहे ॥१९७५

उमगो श्रीपाल जब अंग, वीर सातसै ताके संग।
मार मार कर उठियो धाय, पुरके सन्मुख रुपियो आय ॥१९७६

यह सुध वीरदवण जब लही, क्रोधही सैन्य पलाणन कही।
साजो सूर धरो जिय लाज, आय भिरे स्वामीके काज ॥१९७७

यह सुन सूर कोह अति भए, घर घर साज सवन ही ठए।
घर घर पियसों जंपें नार, मनकी इच्छा कहें संभार ॥१९७८

कोऊ त्रिय मांगे यह दान, गिलयो कन्त जनम तुम आन।
कोऊ कहें दुहूं भुज तणों, दरसा जो पिय तम आपणों ॥१९७९
कोऊ सीख देय कुलधाम, झूझ हार मत आवो धाम।
बहुत वरष जो खायो माल, स्वामी काज अब करो हलाल ॥१९८०

कोऊ भयमती कहवे नार, भजियो पिय जो जानों हार।
एक कहे मुतियनकी मार, अरु पाटम्बर चीर अपार ॥१९८१
गजमस्तक शोभाको वर्णो, भजै फोज तो लीजो घर्णो।
एक कहे कौतुक देखियो, आय परें तब ही झूझियों ॥१९८२

काहू कछू काहू कछू चयो, घर घर सूर वचन सुन लयो।
आप आप त्रियको मन राष, चले कोपते जय जय भाष ॥१९८३
हय खुररेण उरी गज वहे, गहर शब्द बाजे चहुँ घहे।
जुरी फौजको करे वखान, दुहूँनके बाजे नीसान ॥१९८४

इत ते श्रीपाल परचण्ड, उत तैं वीरदवण बलिवण्ड।
दोऊ फौज जुरी इकसार, वर्णन कोउ न पावे पार ॥१९८५
दुहूँके चित क्रोध अति भरो, दुहून मार मार उच्चरो।
यह सुन सूर उठे गल गाज, लगे जूझ कारण घर साज ॥१९८६

गज सो गज रोपो कर कोह, हय सो हय लागे कर छोह ।
रथ सो रथ जोरे अधिकार, पायक सो पायक अनिवार ॥१९८७
एक हि एक झूझ अति होय, ऐसो झूझ न कर है कोय ।
बाजो सारंग भयो कहराव, दिनकर लुपो वहे नहीं वाव ॥१९८८
अन्धकार बाढो असमान, काहू शब्द न सुनिये कान ।
कोऊ काहू न देखो छाह, मार हि मार होय रण माह ॥१९८९
इन्द्र आदि सब अलख अमेव, देखत सबै तमासो देव ।
महाबली योधा संघरे, बहुतक रूँड मुँह धड पडे ॥१९९०
मंत्रन मंत्र विचारो तबै, कहें परस्पर कीजे अबै ।
यह तो इनके घरको राज, झूझन सूर नहीं कछु काज ॥१९९१
भिडें परस्पर दोऊ जने, जा जीते ता राज हि भने ।
मन्त्री दुहू विचारी जिसी, निज निज नृप सो भाषी तिसी ॥१९९२
मानी दुहू राज सुख लहो, वीरदवण तब ऐसे कहो ।
आवो हम तुम भिरें पचार, जाको राज लेय सो मार ॥१९९३
यह वचन कोटिभट सुनो, सुगुणमान यों मनमें गुणो ।
वीरदवण भाषा शुभ चई, यह पुन बात भली अति भई ॥१९९४
सुन श्रीपाल फूलियो गात, बोले वीरदवण सुन बात ।
अज हूँ जा तूँ रहूँ, बचाय, राज परायो दे छिटकाय ॥१९९५
मैं तोहे पिना बराबर गिनुं, कहा आपने हाथ ही हनुं ।
सुन कर वीरदवण रिस करी, मनमें कोप बात उचरी ॥१९९६
श्रीपाल तूँ अजो कुमार, जानत नहीं झूझ व्यवहार ।
जब रण झूझिय तहे चित्त चाहि, काको पिता पूनको काहि ॥१९९७
मैं तू पहले हि बरजियो, मानी नहीं आय गरजियो ।
अबके डर पै कहां सिराय, मो पै तू किम जीवत जाय ॥१९९८

यह सुन कोटीभट रिस भयो, ताहि कोप कर उत्तर दियो।
वीरदवण देखो जिय जाय, तो सम अवर न मूर्ख काय ॥१९९९
पर रमणी सो मांडो आर, परवश होय जो काढे गार।
पराधीन जो भोजन लहे, ज्ञान हीन जो तनको दहे ॥२०००
परधन ऊपर सुख व्योहरे, विषहर सों मित्रताई करे।
भामनको जो करे विसार, वैरी भय वस करे उल्हास ॥२००१
सुरत कथा सब ही सो कहे, संपति मय जो परवश रहे।
वित बिन देन कहे जो दान, गणिकाके संग राखे प्राण ॥२००२
सत्य जो रहे कुशीले संग, शुभ मति रहे जो पीके भंग।
पद पद पंडित मारे गाल, मान सरोवर तजे मराल ॥२००३
वेश्या होय लाज मन धरे, जूआ खेल सांच उच्चरे।
पर विभव पाय ललचाय, मूरख इनतें अति पछिताय ॥२००४
यह सुन वीरदवण क्षितराज, सीस नवायो उपजी लाज।
बहुधा चित्त रोस अति भयो, दुहू कोप करे धनु कर ल्यो ॥२००५
ज्यूं बाहुबलि भरत चक्रेश, दुहूंने कीनो झूझ अशेश।
जैसे जिन रतिपति सो लरो, ज्यूं लछमन रावणसों भिरो ॥२००६
जैसे भीम भिरो गज दन्त, जरासिन्ध सो कमलाकन्त।
ज्यूँ अर्जुन अर करण झूझार, तैसे वीरदवण श्रीपार ॥२००७
धन हर चक्र खड्ग तलवार, गदा शक्ति दुहू लई पचार।
मुदगर कांत ल्यो परतार, दुहूँ बराबर आई हार ॥२००८
तब पे कोप चढ़े दोऊ राय, भिडे मल्ल जो दोऊ धाय।
बांधक बाथ करे दोऊ वीर, लौटे परे गिरे दोऊ धीर ॥२००९
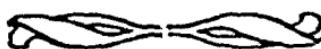
४१-वीरदवनको जीत श्रीपालका राज करना

ऐसे बहुत वेर जब भई, श्रीपालको अति रिस चई ।
ताके दोनों पकरे पाय, अति आतुर है लयो उठाय ॥२०१०
धरती पटकन लागो जवै, जय जयकार कियो सुर तवै ।
कुसममाला नाखी ता गरे, इन्द्र आदि सब यों उच्चरें ॥२०११
तू तो दयावन्त है राय, या मूरखको दे छिटकाय ।
यह सुन छाड दियो हरषाय, लागो कहन बात विहसाय ॥२०१२

वीरदवण उवाच

तेरो पुत्र राज ले घनो, मैं परखो वल अब तो तनों ।
सब जगमें जाकी परशंस, तोसे चहियें हों इस वंश ॥२०१३
वीरदवण यह भणियो जाम, श्रीपाल सुन विहसो ताम ।
लागो कहन बात सुन तात, तोको धरी सीककिन घात ॥२०१४
कित ते जननी मारी भार, अपजस मही पर लहो अपार ।
अज हों छाड गेहको काम, ले जिनदीक्षा अरु जिननाम ॥२०१५

वीरदवण उवाच

सुनहु कवर मो जुग तो येह, तुमको राज देहूं कर नेह ।
बहुरो दीक्षा लेहुं जाय, भव सुख सयल देहु छिटकाय ॥२०१६
यह सुन श्रीपाल सुख भयो, चावरंग दल संगह लयो ।
भेरी मृदंग तूर सहनाय, जय जय शब्द भयो अनिवार ॥२०१७
विरदावली बोले बहु भट्ट, याचक दीजे हय गय पट्ट ।
अति आनन्द भयो तिह काल, पुर प्रवेश कीनों श्रीपाल ॥२०१८

卐 卐 卐

घर घर सब ही मंगल भयो, हरषित गेह पिताके गयो ।
तहां सिंहासन रतन जरो, कंचनको राजत है खरो ॥२०१९

कंचन कुम्भ खीर जल नहाय, हरषित ता बैठो जाय।
आपन वीरदवण नर ईस, बांधो पट्ट कोटीभट सीस ॥२०२०
कियो तिलक आपन कर साज, जय जय भाष दियो तब राज।
नारी गावें मंगलचार, राज तबै बैठो श्रीपार ॥२०२१

वीरदवण उवाच

सुन हो श्रीपाल धरधीर, राज लक्ष भुञ्जो वरवीर।
दुःखित जन कीजो प्रतिपाल, याचक जनको दीजो माल ॥२०२२
परजाको प्रतिपाल करेहु, काहू भूल दुःख मति देहु।
तब उदास भयो मन काय, परिगह सकल दियो छिटकाय ॥२०२३
नगर लोगमें बहू सुख भयो, वीरदवण दीक्षा मन छयो।
घर पट्टणपुर पट्टन सर्व, छिनमें छाड दियो तिन गर्व ॥२०२४

श्रीपाल सो क्षमा क्षमाय, सो वन माही पहुँचो जाय।
तहां जिनवरको लीनो नाम, वस्त्राभरण उतारो ताम ॥२०२५
पंच मुष्टि सिर लोचन करो, राग द्वेष दोऊ परिहरो।
पंच महाव्रत मांडे सार, विषय कषाय सकल तिन डार ॥२०२६
तेरह विधि चारित्र पालंत, एकाकी गिरि वन निवसन्त।
मास दिवसमें भोजन करे, आठ वीस गुण पोषण घरे ॥२०२७
चेतन पद तिन लीनो चाहि, केवलज्ञान ऊपजो ताहि।
बहुत धर्मको कियो प्रकाश, आठ कर्मको कीनो नाश ॥२०२८
तन परिहर सो मुकत हि गयो, निर्भय अलख अगोचर भयो।
नवमो संधि पूरण भई, मूल देख भाषा वरणई ॥२०२९

दोहा ।

राज सुख कीरत अचल, होय मिटे सब खल्ल ।
मुकति जाय याके सो नर, पुण्य करे परिमल्ल ॥२०३०

छन्द त्रिभङ्गी ।

इति श्रीपालचरित्रे महापुराणे, भव्य संग मंगलकरणम् ।
बुधजन मनरंजन पातक गंजन, सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुखकारण भवजल तारण, चौपईबंध परिमल्लकृतम् ।
सह राज विछंडो भव भ्रम खंडो, वीरदवण सो मुकति गयं ।
श्रीपाल नरेसो महापरमेसो, चंपापुर सो राज कियं ॥२०३१॥

चौपाई ।

वीरदवण सो मुकतिह गयो, परम सिद्ध सिद्धालय भयो ।
श्रीपाल भुंजे बहुराज, सिद्धचक्रको फल शुभ साज ॥२०३२
सर्व जीवकी रक्षा करे, पुण्य भाव सब जियमें धरे ।
मनमें परिग्रह संख्या धरी, अवर विभूति सबै परहरी ॥२०३३
आठ सहस्र अंतेवर संग, बीस सहस हाथी मय मंग ।
बीस लाख राखिया तुरंग, सोलह लाख सु रथ बाचंग ॥२०३४
पट्टन संख्या कही न जाय, बहुत रिद्धिको कहे बढाय ।
संख्या सकल बरणके कहूं, कहत कथा कछु अन्त न लहूं ॥२०३५

दोहा ।

अशुभ कर्म भयो दूर सब, शुभ प्रगटियो अखण्ड ।
राज करे विलसे विभव, श्रीपाल बलिवंड ॥२०३६
कीनो यश भुवलोकमें, दुर्जनको डर सल्ल ।
सकल जीव रक्षा करण, श्रीपाल सुविमल्ल ॥२०३७

चौपाई ।

सत्य राज्य पाले धर धीर, दुष्ट जनन मर्दन वरवीर ।
दयावन्त नहि ताहि समान, कोऊ मेट न सकहि आन ॥२०३८
एक छत्र सो भयो नरेश, जाके परिग्रह बहुत अशेश ।
द्वीपन ते नृप आये साथ, बहु सुख दे सबको नरनाथ ॥२०३९
तिन सो नेह कियो सनमान, मानें श्रीपालकी आन ।
सेवक ह्वै अपने घर गये, अति निर्भय सब ही ते भये ॥२०४०
भरत चक्रधर पाली जिसी, राजनीति पाली है तिसी ।
जिनवर चरण लाइयो चित्त, अतुल सुख सो भुञ्जे नित्त ॥२०४१
यह विधि राज करे नरनाह, सब ही जन मन भयो उछाह ।
दीन दुखित जन पोषे प्रान, कोटि टका नित दीजे दान ॥२०४२
बहुत दिवस यों बीते जाम, रह्यो गर्भ सुन्दरीके ठाम ।
मैनासुन्दरीके मन चाव, भयो दोहरा निर्भय भाव ॥२०४३

❀ ❀ ❀

दान पुण्य पर राखे चित्त, आराधे जिन नाम पवित्त ।
पुण्य दोहरा उपजो इसो, श्रीपाल सब पुरियो तिसो ॥२०४४
पूरे भये जबैं दश मास, जिन गुण गावत सुख विलास ।
भयो पुत्र सब लक्षण सार, कुल शशी हर उगियो जुकुमार ॥२०४५
सब कुटुम्ब आनन्दित भयो, अतुल द्रव्य याचकजन दयो ।
कह्यो जातिसी सब सुख धाम, है धनपाल ही याको नाम ॥२०४६
महीपाल ता पीछे भयो, तीजो पुत्र देवरथ जयो ।
चौथो भयो महारथवरो, चार पुत्र मैनासुन्दरी ॥२०४७
मंजूषा जाये सुत सात, दुर्जन भंजन जिनके गात ।
पांचपुत्र जाये गुणमाल, अति वलिष्ठ अरु गुण ही विशाल ॥२०४८

सब सुन्दरिन सुत उर धरे, एक एक थे गुण आगरे ।
कोटीभट सब सुत वरणए, बारा सहस्र आठसे भए ॥२०४९
बाढ़ें दिन दिन सर्वे कुमार, और ही रूप और व्यवहार ।
मंडलेश श्रीपाल नरिंद, दीसे मानों दूसरो इंद ॥२०५०

दोहा ।

जातें ऐसो फल भयो, मिठो अशुभ सब कर्म ।
यह जान नरलोकमें, पाले जिनवर धर्म ॥२०५१

चौपाई ।

धर्म एक त्रिभुवनमें सार, धर्म कुरीति विनाशन हार ।
धर्म एक सब सुखको कन्द, धर्म एक भंज हि दुख दण्ड ॥२०५२
धर्म पसाय सुरग पद जुरे, धर्म पसाय सहाई करे ।
धर्म पसाय चमर सिर ढुरे, धर्म पसाय छत्र सिर धरे ॥२०५३
धर्म पसाय रूप अधिकार, धर्म पसाय सेवें नर नार ।
धर्म पसाय सुयश विस्तरें, धर्म धर्म पसाय सकल अघ टरें ॥२०५४
धर्म पसाय शोभित नर होय, धर्म पसाय जाय गद जोय ।
धर्म पसाय मिले वर नार, शशिवदनी रम्भा उनहार ॥२०५५
अमृत वदनी सुखकी धाम, शील धुरन्धर सेवें काम ।
धर्म पसाय होय सुत घणे, जिनकी शोभा कहत न वणे ॥२०५६

❀ ❀ ❀

धर्म पसाय सेज सुख वसे, धर्म पसाय काल नहि डसे ।
धर्म पसाय न वैरी लरें, धर्म पसाय छेद नहि छरें ॥२०५७
धर्म पसाय सिंह वश होय, धर्म पसाय जाय गद सोय ।
धर्म पसाय ज्वाला न जरे, जो प्राणी आतुर हो परे ॥२०५८
धर्म पसाय रोग मिट जाय, धर्म पसाय परे सब पाय ।
धर्म पसाय न मूसे चोर, धर्म पसाय न व्यापे घोर ॥२०५९

धर्म पसाय होय जल पार, नदी सरोवर सागर वार ।
धर्म पसाय न ह्वै है घाव, धर्म पसाय मिटे खलभाव ॥२०६०
धर्म पसाय देव वश रहे, धर्म पसाय भली सब कहे ।
धर्म पसाय उच्चाट न लगे, धर्म पसाय देख रिपु भगे ॥२०६१

धर्म पसाय सुजस सभ लहे, धर्म पसाय शोक सब वहे ।
धर्म पसाय मोह मंद होय, माया मोह निवारे सोय ॥२०६२
धर्म पसाय देय बहु दान, धर्म पसाय मिटे अवसान ।
धर्म पसाय पंचव्रत धरे, भवके दुःख सगरे परिहरे ॥२०६३
धर्म पसाय होय शुभ चित्त, आराधित जिननाम पवित्त ।
धर्म पसाय कर्मको नाश, धर्म पसाय ज्ञान परकाश ॥२०६४
धर्म पसाय बहुत को वहे, प्राणी मुक्ति वधूवर लहे ।
इंद्र आदि सब सेवें पाय, बहुरि न भवमें आवे जाय ॥२०६५

दोहा ।

प्राणी सुनो चरित्र सब, अरु देखो जिय जोय ।
धर्म हितू संसारमें, जातें शिव पद होय ॥२०६६

चौपाई ।

एक ही दिन श्रीपाल नरेश, बैठो सिंहासन अलवेश ।
वाम अंग मैनासुन्दरी, रूपवन्त सब ही गुण भरी ॥२०६७
दुरें चमर सोहे सिर छत्त, हर्षित नित्त महा शुभ चित्त ।
आगे नाटक नचें अपार, गीत विनोद होय अधिकार ॥२०६८
बुधजन भाषें महापुराण, सुनिये ताको अर्थ बखाण ।
कस्तूरी चोवा अरु मेद, कपूरादि वासके भेद ॥२०६९
कुङ्कुम सो मरदें सब अंग, चहुंवा फैला बास अभंग ।
इस विध आसन बैठो जाम । वनमाली सिर नायो ताम ॥२०७०

ऐसे भाषो प्रण कर सेव, भो भूपति चूडामणि देव ।
ये फल फूल छहूँ ऋतु तणे, जिनकी शोभा कहत न वणे ॥२०७१

उपवन सब प्रफुल्लित भयो, देखत दुःख मेरो सब गयो ।
अब आगमन भयो मुनि तणों, ता शोभा कैसे कर भणों ॥२०७२

यह सुन श्रीपाल तूठियो, सिंहासन तें उठ हर्षियो ।
सात पैंड उतरो तब सोय, परोक्ष नयो मनमें सुख होय ॥२०७३
वस्त्राभरण उतारे सवै, वनमालीको दीने तवै ।
फुनि वैठो रायनको राव, सेन समारण उपजो चाव ॥२०७४

अति उदार ताको चित्त भयो, बहु द्रव्य वनपाल हि दयो ।
आनन्द भेरी दिवाई तवै, नगर लोक तिन लीनो सवै ॥२०७५

चवरंग दल चालो अभंग, अंतेवर सब लीनो संग ।
ते प्रफुल्लित चले विशाल, जिन गुण गावत आछी वाल २०७६

करे संग सब मंगलाचार, वहु परिगह चलियो अधिकार ।
पंथ न सूझे छिपियो भान, श्रीपाल मनमें रंजान ॥२०७७

ऐसे दल सों पहुँचो तहां, उपवन महामनोहर जहां ।
कुसमित कुसम वृक्ष अधिकार, जह तह वास लेत अलिमार ॥२०७८

मन्दपवन अति शीतल वहे, अति सुवास मनको दुःख दहे ।
कछूक द्रुम मौरे कछू हरे, कछू रूख फूले कछु फरे ॥२०७९

ऋतु वसन्त सोहत वन जिसो, मुनिवर पुण्य भयो सो तिसो ।
द्रुमअशोक सुन्दर ता माहि, ताकी अतिसुन्दरशुभ छांहि ॥२०८०

सब सुख कर श्रीपाल है दीठ, ताको लागो मन को ईठ ।
ता तर शुद्ध चित्त दुःख हंत, मुनिवर वैठो महा महंत ॥२०८१

देखो श्रीपाल परमेश, मनमें उपजो सुख अशेश।
एक परमपद जाने सोय, चेतन गुण आराधे जोय ॥२०८२
राग द्वेष न जाके चित्त, संयम केवल पाले नित्त।
तीन गुप्त पालन परमथ, रत्न त्रय धारण समरथ ॥२०८३
तीन शल्ल मेटन शिवकन्त, ज्ञान धरण जग वल्लभ सन्त।
भव जल तारण तरण जिहाज, पंच महाव्रत धर मुनिराज ॥२०८४
मकरध्वज खण्डो धर भाव, छहों द्रव्य भाषन गुणराव।
आठ कर्म माया मद हरण, आठ सिद्ध गुण धारण धरण ॥२०८५
नव विधि ब्रह्मचर्य प्रतिपाल, दशलक्षण गुण धरण दयाल।
एकादश प्रतिमा जीय जाहि, द्वादशांग भाषन जो आहि ॥२०८६
तेरा विधि चारित्र प्रमान, पाले जो व्रत धरण सुजान।
देखत उपजे हर्ष विशाल, ऐसो मुनि वन्दो श्रीपाल ॥२०८७
तीन प्रदक्षिणा दीनी ताय, नमस्कार कर लागो पाय।
आपन अंतेवर परवान, नगर लोक संयुक्त समान ॥२०८८

बैठो ताहि चरणके पास, अति आनन्दित भयो उल्लास।
सबने मिल स्तुति कीनी जबै, धर्म वृद्धि मुनि दीनी तबै ॥२०८९
बहुरो नमस्कार कर राव, पूछन लागो मन धर भाव।
भो मुनिवर करुणा वरवीर, कहो धर्म विधि गुण गम्भीर ॥२०९०
जातें जामन मरण न होय, जाते भय न शरीर है कोय।
दुर्गति पंथ निवारण हार, ऐसो धर्म कहो शुभधार ॥२०९१

मुनीश्वर उवाच

यह सुन मुनि जंपै शुभकन्द, सुनो राय निज कुलके चन्द।
धर्म विधि मैं भाषूं तिसी, श्री जिन आपन भाषी जिसी ॥२०९२

बडो धर्म दशलक्षण जान, गुण अनन्त किम कहुँ बखान ।
अरु सम्यक् दर्शन शुभ जोय, धर्म मूल है प्रथम हि सोय ॥२०९३

अतुल लच्छ समकित तें सर्व, समकित तें लहिये बहु दर्व ।
समकित तें तीर्थंकर होय, समकित ते अनन्त गुण जोय ॥२०९४

समकित सर्व दोष दुःख नाश, समकित सब हि सुखको वास ।
समकित विन दुःख वाढै तबे, समकित विन भवभव दुःख सवे ॥२०९५

समकित गुण जाके मन आय, सब ही गुण आलम्बें ताय ।
जप तप संयम व्रत अरु पुण्य, समकित एक बिना सब शून्य ॥२०९६
अर तू सुन श्रावक व्रत राय, संक्षेप हि मैं कहूं समझाय ।
मन वच काय विशुद्धो चित्त, जीव हि भय नहि दीजे मित्त ॥२०९७
थावर विन कारण टारिये, प्रथम अणुव्रत यह पारिये ।
सांचो मुख सांचो जिय रहे, मिथ्या वचन भूल नहि कहे ॥२०९८
अलियो बोल वोलिये जवैं, जीव विरोध न उवरे तवैं ।
पुर पट्टण मारगमें जाय, परधन दृष्टि परे जो आय ॥२०९९
लेय अदत्त न उत्तम लोय, तृण हि तणे सम देखे जोय ।
कबहूं न चोर संग जाइए, ताको हरा न धन लाइए ॥२१००
परदारा न देखिये नैन, माता बहन सम बोले वैन ।
हय गय रथ अर दासी दास, वस्त्राभरण और घर वास ॥२१०१
गाय भैंस अरु खेत वखान, इन संख्या कीजिये परवान ।
पंच अणुव्रत कहे निरधार, और दया गुण जियमें धार ॥२१०२

दोहा ।

जो को पारे भाव धर, सुख भुञ्जे नर सोय ।
भव दुःख सकल निकन्दके, मुकति श्रीफल होय ॥२१०३

चौपाई ।

पुन ते गुणव्रत सुन हो राय, दिश अरु विदिश ग्रामको जाय ।
इनकी संख्या लेहु जोय, एक प्रथम गुण जानो सोय ॥२१०४
हीन म्लेच्छ बसत हैं जहां, कबहू भूल न जइये तहां ।
पुण्य प्रभाव जहां नहि होय, जहां विवेकी लोग न कोय ॥२१०५
नखी मंजार स्वान जीव जिते, भोजन ऊपर तजिये तिते ।
सण अरु लोह लाखअरु राल, महूत्र मैंन तिलकी भड़साल ॥२१०६

यह उद्यम सब ही गुण हीन, अरु इन दण्डन लेय पत्रीन ।
प्रथम ही जिन चैत्यालय जाय, तब उद्यम आरम्भो आय ॥२१०७
कै प्रतिमा पूजे निज गेह, तब भोजन सो पाले देह ।
उत्तर दिश सन्मुख शुभ थान, पालिङ्क शयन करे नर जान ॥२१०८
कीजे सामायिक त्रिकाल, मूल मन्त्र जपिये जु विशाल ।
राग द्वेष दीजे छिटकाय, पंच परम गुरु चित्त गुणाय ॥२१०९
संयम तरुवर बैठे छांहि, शुभ भावना धरे मन मांहि ।
तिह आसन मांडे दृढ़ सार, पौन जहां न लहे पैसार ॥२११०
एक मासमें पंचहु वार. कीजे व्रत मन शुद्ध विचार ।
वस्त्राभरण रत्न अरु धाम, पान सुगन्ध भोग जे राम ॥२१११
इंद्रिय पोषनके जो भाय, इनकी संख्या कीजे राय ।
ऐसी विधिसे बाढै धर्म, नाशे सकल पाप अरि कर्म ॥२११२

मुनि आर्जिका श्रावक बहु वास, अरु जे रोग लीने जन पास ।
चार प्रकार दान जो देय, मन वंछित फल सो यह लेय ॥२११३
द्वारा पेषण करै निहार, जोलौं दोय पहिर परचार ।
करे सोध घर भीतर जोय, सोई जानो श्रावक लोय ॥२११४

सर्व जीव करुणा राखिये, अमृत बोल सब सो भाषिये।
जबलों अपनो वछु वसाय, जीव विराधित लेय छुडाय ॥२११५

निशल्य मरण कर भ्रमें विदेह, काल पाय पावे शिव गेह।
यह बारह व्रत विधि प्रकार, या संसार माहि हैं सार ॥२११६

कहे मुनिन्द सुनो श्रीपार, इतने धर्म बढे अनिवार।
हरषो नृप यह सुनियो जबै, पणविके मुनि पूछो तबै ॥२११८

दोहा।

ज्ञान दिवाकर परम गुरु, गुण रत्नाकर जान।
मोह भवांतर हैं जिसे, तैसे कहो बखान ॥२११८

चौपाई।

कवन कर्म कर कोढी भयो, क्यों मैं सिद्धचक्र व्रत लयो।
किम मैं परो समुद्रह जाय, किमकर जल तिरयो निकुराय ॥२११९
कौन कर्म स्वामी मो तणों, भांड विगोवो कीनो घणों।
कौन कर्म ते मिटियो सोय, यह संशय मेरे मन होय ॥२१२०

मुनीश्वर उवाच

यह सुन मुनिश्वर बोले तवै, सुन श्रीपाल कर्म निज सबै।
भरतक्षेत्र सब सुख निधान, जिसमें कोट गांव परवान ॥२१२१
जामें रत्नसंचयपुर जान, वन उपवन कर शोभित मान।
तहां श्रीकण्ठराव बलिवंड, विद्याधर सो है परचंड ॥२१२२
विद्या जाने अति चतुरंग, कुल जल रुह सारंग अभंग।
तसु भामा श्रीमती सुजान, सब अन्तेवरमें परवान ॥२१२३
अह निश पिय मन रंजन करण, रूपवंत शोभित मन हरण।
जैनधर्म पालन परवीन, पात्र है दान भक्ति अति लीन ॥२१२४

अन्य दिवस नृप ताहि समान, गयो जिनमंदिर मन कल्याण।
महा मुनीश्वर वंद्य जाय, पुन ता ढिग बैठो सुख पाय ॥२१२५

मुनि सुप्रसन्न भयो तिह वार, लागो भाषण धर्म विचार।
पुण्य पाप जैसो फल होय, कह्यो प्रगट राजा सों सोय ॥२१२६
सुन नृप मनमें हरषो जान, जैसो मुनिवर कह्यो वखान।
आनन्दो राजा घर गयो, जैनधर्म पालो सुख भयो ॥२१२७
बहुरी अशुभ उदय भयो आय, श्रावक व्रत दीने छिटकाय।
यौवन मद श्रीमद भयो राव, भयो विकल्पको कहे बढाव ॥२१२८
मिथ्या कर्म उदय भयो आय, सेवे मिथ्या गुरुके पाय।
कब हू जैन पंथ नहि जाय, मिथ्या ज्ञान सुने चित्त लाय ॥२१२९
एक दिवस सातसै अंग, वन क्रीडा पहुँचो ले संग।
मुनिवर एक देखियो इसो, जाने चेतन गुण है जिसो ॥२१३०

सहे परीषह बाईस सार, मलिन देह क्षीणी अधिकार।
हिम पटलन मो रहियो छाय, रवि आकार न वरणी जाय ॥२१३१
ध्यानारूढ शुद्ध मन धीर, देख योग ठाढो गम्भीर।
ताहि देख तिन असुगन कियो, कोढी कोढी जंपन लिये ॥२१३२
सायरमें डरवायो सोय, जाको मन चल नेकन होय।
पुन करुणा मन उपजी आय, दलमें तें निकसायो धाय ॥२१३३
कछू पाप ता वेधो गयो, निज मंदिर सो आवत भयो।
अन्य दिवस वन गयो तुरन्त, देखो तिन मुनिवर आवंत ॥२१३४
परम तत्व जाने मुनिराव, राग द्वेष छांडो धर भाव।
धीरवीर तप क्षीणो अंग, भरो धूलसों दीसो अंग ॥२१३५

रत्नत्रय व्रत धार चित्त, मास एक दिन हार निमित्त।
आवत सो जो नगर मझार, देख राव दुःख कियो अपार ॥२१३६
बोल्यो मुनिवर सो तिह बार, तैं कित खोई लाज गंवार।
नांगो भयो फिरत बेकाज, काया मैली अति बेसाज ॥२१३७
मार मार कर उठियो ताहि, असि वरले सिर काटो याहि।
यह उपसर्ग तासकों करो, बारम्बार भ्रष्ट उचरो ॥२१३८
अति उपहास कियो ता तणो. कविजन कहे कहां लो भणो।
बहुरो कृपावंत अति भयो, ताहि बरज आगे चल गयो ॥२१३९
महा पाप सो बांधो गयो, कोऊ श्रीमती सों यह कह्यो।
अजुगत बात करत तुम कंत, मुनि निन्दत डोलत विहसंत ॥२१४०
कबहू जलमें देत डराय, भांति भांति उपसर्ग कराय।
यह सुन राणी विलखी भई, यह बात मन सोचन लई ॥२१४१
कौन पाप यह करत गँवार, जानत नहीं धर्म व्यवहार।
महा कुसंगति मोको भई, हा विधि कर्म कहा गति भई ॥२१४२

दोहा।

यह चिन्तत राणी हिये, मलिन भई बिलखाय।
निन्दा अपनी करत सो, पौढ रही मुरझाय ॥२१४३

चौपाई।

राजा आय गयो तिहवार, पहुँचो सो राणी ढिगसार।
देखे तो तिय बिलषी आहि, लागो सकुचत पूछन ताहि ॥२१४४
प्राणपियारी हे वरनार, कारण कहा सो कहो विचार।
हँसे न बोले रही मुरझाय, राणी कथा विरतन्त सुनाय ॥२१४५
बोली एक चेटका तबै, राजा बात सुनो या अबै।
तुम श्रावक व्रत दीनो छांड, तुम मुनिवर निन्दे मन मांड ॥२१४६

अरु जलमें दीने डरवाय, कर उपसर्ग अरु लिये कढाय ।
काहू कहो राणी सो आय, तातें पौढ रही मुरझाय ॥२१४७
यह सुन राव सलज्जित भयो, अपनी चूक जान परणयो ।
बारबार जंपै है त्रिया, मैं पापी अकर्म सब किया ॥२१४८
मोतें अशुभ उदय भयो आय, सेये मिथ्यागुरुके पाय ।
ताकी सीख नीके सुन लई, हमरी सुमति कुमति अतिभई ॥२१४९

मैं पापी पातिकको मूर, मैं गुणहीन महा जड कूर ।
मैं अभिमान महामद भरो, देखत अन्धकूपमें परो ॥२१५०
तोसों कहा कहूँ मैं भाख, नरक पंथसे ले मुहि राख ।
राणी वचन सुने ये जवें, दयावन्त है बोली तवें ॥२१५१
स्वामी तुम अजुगत सब करी, धर्म कथा मनसे विस्सरी ।
मुनिवरको तुम अतिदुःख दियो, धर्म अधर्म भेद नहीं कियो ॥२१५२
अब तुम सुनो धर्मकी रीति, बहुत भाव मन राखा प्रीति ।
जिनशासन व्रत निन्दे जोय, भवमें चहुँ गति भ्रम है सोय ॥२१५३
जो पापी निन्दे बहुभाय, सो निश्चय कर नरक हि जाय ।
पंच प्रकारसे देखे दुःख, किंचित् कबहू न पावे सुख ॥२१५४

सो प्राणी पीडिये दुखाय, कांपित शूली दीजे जाय ।
पुन खलमें धरिये सोय, मूलमेट जव ताको होय ॥२१५५
बहुरी उपजे ताहि शरीर, बहु दुःख पावे प्राणी कीर ।
खंडासन तन तोरे मार, निन्दे ताहि देय दुःख मार ॥२१५६
गाल रांग ताको मुख भरे, कुन्दघाल मुह ऊँचो करे ।
दह दहंत सो पुतरी लाय, भेटावे गिर कंठ लगाय ॥२१५७

परतिय रमण लेह सुख येह, भोग करो यासों कर नेह।
कछु जीव मत करहु संताप, सो कहि जान कियो तें पाप ॥२१५८
तैं जिनवर मेटो नहि डरो, तैं परधन हरष है हरो।
तैं मुनिवर निन्दे अनिवार, विन कारण दुःख दिये अपार ॥२१५९
तैं परिहरो शीलवन्त जान, तूं केवल पापनकी खान।
यह दुःख भुञ्ज जाहि संसार, कर हि धर्म सुख इच्छ गवार ॥२१६०

卐 卐 卐

सुन स्वामी नरकी दुःख इसो, तासों मैं जु पयासो जिसो।
फेर भाव कछु पुण्य उपाय, मुनि पै जिनवर व्रत ले जाय ॥२१६१
यह सुन राजा त्रिय वच मान, पहुँचो जाय जिनेश्वर थान।
तहां मुनीश्वर देखो धीर, सुखकी निधि अरु गुणह गम्भीर ॥२१६२
ज्ञान धरण मन शुद्ध उदार, वन्दे चरण कमल युग सार।
जपै राव जोर दुय हाथ, मैं पापी अति सुन हा नाथ ॥२१६३
वहुत पाप मैं कियो अविचार, नरक परत तुम लेह उवार।
धर्म पयास पंच व्रत धरण, अव हूँ आयो तेरे शरण ॥२१६४

卐 卐 卐

यह सुन मुनिवर भयो दयाल, सिद्धचक्र व्रत ले भूपाल।
सुनतें होय पापको छेद, ताकी युक्ति सुनो यह भेद ॥२१६५

卐 卐 卐

कार्तिक फागुन मास असाढ, श्वेतपक्ष सव सुखको वाढ।
अष्ट दिवस उपवास करेय, वसु विधि सिद्धचक्र पूजेय ॥२१६६
अन्तह निश जागरण करेय, दान सुपात्रइ सो पुन देय।
वसु दिन शीलव्रत पारिए, भेदाभेद चित्त धारिए ॥२१६७
फुन उद्यापन कर वर भाव, करे प्रतिष्ठा आठ वनाव।
अथवा शांतिक वहुविधि करे, श्री जिन पूज करे भव हरे ॥२१६८

अजिका साडी दीजे दान, पुस्तक दीजे मुनिवर मान।
भृङ्गार तार वर दीजे इते, आठ प्रमाण कहे हैं जिते ॥२१६९
श्री गणधर भाखो व्रत येह, करे सुख भुञ्जे शिव गेह।
यह सुन राव जिनेश्वर वन्द, त्रिय संजुत्त गृह गयो अनन्द ॥२१७०
गह्यो व्रत मन वच अरु काय, पूजे सिद्धचक्र सुखदाय।
तीन धार सो दे परवान, जनम जरा नाशन सुख खान ॥२१७१

कुंकुम अरु कपूर वरगार, चन्दन पूज करे सु निहार।
अरु अखण्ड अक्षत बहु लेय, उज्जल पुंज मनोहर देय ॥२१७२
अरु केवरो केतकी माल, चम्बेली अरु वेल गुलाल।
चम्पक जुही मालती सार, अति सुगन्ध अम्बुज मंदार ॥२१७३
नाना विधिके पहुप अपार, पूजे भर अंजुरि शुभ सार।
षट् रस नैवेद्य शुभ जोय, बहु पकवान चढवे सोय ॥२१७४
दीपक पूर धरे पर-जार, बहु कृष्णागर खेवें वार।
नाना विधि फल पूजे भाव, जल गन्धाक्षत पुष्प बनाव ॥२१७५
नैवेद्य दीपक अरु धूप, सुन्दर फल तहां धरे अनूप।
देय अर्घ पूजे शुभ चित्त, सिद्ध यंत्र आराधे नित ॥२१७६
पुन उद्यापन कर धर भाव, करो प्रतिष्ठा धर्म सहाव।
अन्त अवस्था आई जबै, सन्यासह तन छाडा तबै ॥२१७७

दोहा।

दिव्य देह सुर्गा भयो, भुंजो सुख अधिकार।
आयु भुक्ति चय आइयो, सो तू है श्रीपार ॥२१७८

चौपाई।

सुन श्रीमती अणुव्रत पाल, पहुंची स्वर्ग देह नज नार।
तहां ते चय आई गुणभरी, सो ये है मैनासुन्दरी ॥२१७९

अरु ये देख घातवे अंग, पूर्व मित्र जु रहे ते संग।
मुनिवरको तैं कुष्टी कह्यो, तातैं कुष्ट रोग तैं लह्यो ॥२१८०
तैं मुनि जल बोडन उच्चरो, तातें तू सागरमें परो।
दयावन्त व्है काढो सार, ताहीसे तैं पायो पार ॥२१८१
जो तैं भ्रष्ट भ्रष्ट सो चयो, तातैं भांड विगोवा भयो।
असिवर सो मुनिमारण कह्यो, तातें त्राच महा तैं लह्यो ॥२१८२
पूर्व भवांतर सुनियो राय, सुख दुःख यह भरम छिटकाय।
यह सुन मुनि वन्दो श्रीपार, व्रत आचरो सुख अधिकार ॥२१८३

आदि अन्त पूर्व भव शरण, दुःख विनाशन शुभगतिकरण।
वारम्बार नवायो शीस, घर आपने गयो नर ईस ॥२१८४
सिद्धचक्र आराधे चित्त, जैनधर्म प्रतिपाले नित्त।
पुत्र कलत्त मित्र सव ठान, करे राज चक्रेश समान ॥२१८५
इच्छत काम भोग रस लेय, मैनासुन्दरी मान धरेय।
नाटक नचें गीतध्वनि होय, सत्य राज पारे नृप सोय ॥२१८६
दुर्जन वश कीने वलिवण्ड, दुष्टन जन देवे वहु दण्ड।
आठ सहस्र सुन्दरि भोगवे, जा प्रताप महीमण्डल नवे ॥२१८७
वांचे वुधजन काव्य पुराण, दिन दिन सुनिये अर्थ वखाण।
इन्द्र तुल्य सुख जाय न गिणो, महाराज सवही विधि वणो ॥२१८८

वहुत काल गयो यह रीत, वसुधा सकल करी वश जीत।
गज गुँजरे महा मदमन्त, हय हींसे देखिये अनन्त ॥२१८९
सेवें पाय वहु नरपाल, नित प्रति आवें सरस रसाल।
गुणियन राखे वहु दरवार, पावें हय गय विभव अपार ॥२१९०
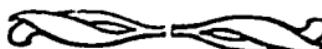
४२-श्रीपालका दीक्षा ले तप करना ।

एक हि दिन आसन विहसन्त, चहुँ ओर राजा जोवन्त ।
उलकापात भयो अतिजाम, देखत ही चित्त चेतो ताम ॥२१९१
जो चितत यह गयो विलाय, त्योंही मो विभूति सब जाय ।
राज्य भोग धन यौवन गर्व, ऐसे ही मो जै हैं सर्व ॥२१९२
यह मनमें चिन्तवे नरेश, सो उदास मन भयो अशेश ।
धन्यपाल सुत लियो बुलाय, कहे राज ले सब सुखदाय ॥२१९३
सत्य राज पालो धर धीर, हम निज काज सवारें वीर ।
यह सुन विलखो भयो कुमार, यह वचन तुम कहो असार ॥२१९४
बालपने सुख सवयं नहि जान, हयसुख गयसुख लियो न मान ।
होय निचित न कीयो भंग, राज भार मैं नाहीं जोग ॥२१९५

तुम बिन राज्य न मोपै होय, महा दुःखको दीखे जोय ।
तासों राव कहे सुन धीर, कुल मारग प्रगटो वरवीर ॥२१९६
पुत्र न गहे पिताको राज, कहां सरो तिन जाये काज ।
जो सुत पिता सुख नहिं देय, अरु कुटुम्बको भार न लेय ॥२१९७
अरु जे कुल कलंक नहि हरे, ते सुन मही भार अवतरे ।
तूं तो सब लायक गुण धार, तुरत हि लेहू राज्यको भार ॥२१९८
यह सुन कुवर विचारो चित्त, राज भार तब लियो पवित्त ।
राय हरषित सुतको सुख चाहि, राजपट्ट सिर बांधो ताह ॥२१९९
कहे राय सुन कुँवर सुजान, नीके सीख लेहू प्रमान ।
शील भार जा अबहिं बन्ध, पर रमणी देखो मत अन्ध ॥२२००
मिथ्यादर्श न देखे जाय, लोचन सफल सुदर्शन पाय ।
विषय राग कबहू नहि सुने, मिथ्या कथा न मनमें गुणे ॥२२०

अरु कबहू न सुने पर पीर, सोई श्रवण सफल सुन वीर ।
नाना विधिके पुष्प अपार, जिनकी अति सुवास अधिकार ॥२२०२

तिन तें प्रमुदित होय सुचित्त, नासा सफल जानिये मित्त ।
कबहूं हीन बात नहि चवे, कहे न गुण अपने मुख कवे ॥२२०३

स्वाद प्रमाद न माने जोय, रसना सफल मानिये सोय ।
सुरत संग नहीं वंछे चित्त, इन्द्रिय सफल महा शुभ चित्त ॥२२०४
दयाभाव मनमें राखिये, मधुर वैन सब सो भाषिये ।
न्याय पंथ पेलिये न जान, तजिये नहीं धर्मकी वान ॥२२०५

सुख रखिये मायाके पास, पुण्यवन्त सो रहे उदास ।
पिशुन बात सुनिये नहि कान, पाप वैन भाषे नहि जान ॥२२०६
पर उपकार कीजिए प्रीति, वंछे सांच राजकी रीति ।
चहुक सीख दीनी अधिकार, आपन वन पग धारो सार ॥२२०७

वन गछत जानियो नरेश, धायो पुरजन सकल अशेष ।
कोउ रुदन करे विलषाय, कोउ विहसे अति सुख पाय ॥२२०८
कोउ कहे बुरो अति भई, चम्पापुरकी शोभा गई ।
दयावन्त सब सुखको धाम, रूपवन्त मानों सुर काम ॥२२०९

महाबली भुजबल उनहार, दल अरु विभव चक्रवे चार ।
राज रीति रघुवंशी राम, महिमण्डलमें जाको नाम ॥२२१०
जाके राज सबै सुख लहैं, कबहूं दुःख दारिद्र न गहैं ।
जाके राज दान सब दए, कबहू मान हीन नहीं भए ॥२२११
जाके राज आठ मदमते, जाके राज भोग रस रते ।
जाके निबहो कुल आचार, मामनी धरे शीलको भार ॥२२१२

जाके राज न मूसे चोर, जाके राज न व्यापै खोर ।
जाके राज बढो परिवार, दुःखी दीन जनको आधार ॥२२१३
ताकी कथा कहे सब कोय, ऐसो भयो न दूजो होय ।
यह गुण सुमिरे अरु ललचाय, नर नारी घर घर पछताय । २२१४

मैनासुन्दरी दीक्षा काज, चाली तुरत छांड सुन राज ।
आठ सहस्र भामन जे आन, तेउ संग भई परवान ॥२२१५
सकल परिग्रह सुख छिटकाय, चाली श्रीपालकी माय ।
अरु जे पुरवासी नरनार, दीक्षा कारण चले विचार ॥२२१६
कोटीभट बन पहुंचो जबैं, महामुनीश्वर देखो तबैं ।
बंदो ज्ञान धरण परमेश, लागो स्तुति जु करण नरेश ॥२२१७
जय भविजन जल रुहके भान, जय दुर्गति वारण परवान ।
जय जय शिवरमणी गल हार, जय जय रत्नत्रय तन धार ।२२१८

विषय भवन चूरण गजदन्त, जय जय गुण रत्नाकर संत ।
जयजय राग दोष दुख हरण, जयभवजलनिधि तारणतरण ॥२२१९
जयजय मोह मार खग राज, जयजय कल्पतरु सुख साज ।
जयजय कोह दवानल नीर, जयजय निर्नाशन भवभीर ॥२२२०
जयजय मोह पाश हत वीर, जयजय मुनि कुँजर वरधीर ।
जयजय आठ कर्म कुल नाश, जयजय केवलज्ञान प्रकाश ॥२२२१
जयजय व्रत भूषण मुनिराय, जयजय सुरनर सेवत पाय ।
जयजय क्षमावन्त शुभ कंद, जयजय प्रभु नाशन भवफंद ॥२२२२

दोहा ।

भो गुणसागर परम गुरु, शरणे आइयो तोहि ।
या संसार समुद्र तें, बूडत राखो मोहि ॥२२२३

चौपाई ।

मोकों व्रत दीजे शुभ सार, जो चहुंगति दुःख छेदनहार ।
सुनकर मुनिवर जंपे येह, धन्य तू जिस यह कीनों नेह ॥२२२४
वहुरो तू अब दुःख न सहे, जामण मरण सबै ही दहे ।
यह सुन श्रीपाल जिय धरो, क्षमा क्षिमंतर सब सो करो ॥२२२५
मित्र भाव सब सो परकाश, राग रोष दोऊ जिय नाश ।
फुन सेहर मणि भूषण सीस, छिन महि ताहि उतारो ईस ॥२२२६
कञ्चन कुण्डल दीने डार, सगरे वस्त्राभरण उतार ।
पंच महा व्रत पर चित्त दियो, पंचमुष्टि सिर लोचन कियो ॥२२२७
बाह्य अभ्यंतर शुध सो भयो, अति निग्रंथ भयो ग्रन्थ गयो ।
जोद्दा सब सुख सेवन जान, तिन दिक्षा लीनी परवान ॥२२२८

ॐ ॐ ॐ

कुन्दप्रभा राणी शुभ चित्त, होय अर्जिका भई पवित्त ।
मैनासुन्दरी सब सुख करण, तिन दीक्षा लीनी जिनशरण ॥२२२९
वस्त्राभरण भोग सब सर्व, छिनमें छाड दीयो तिह गर्व ।
रयणमंजूषा अरु गुणमाल, तिन हूं दीक्षा लई गुणाल ॥२२३०
चित्ररेख पुहमा परधान, अर जे अंतेवर कछू आन ।
दीक्षा सबन लई धर भाव, मायाको सब तजो उपाव ॥२२३१
अवर जे हुते सातसे अंग, दीक्षा तिन हूं लई अभंग ।
जे कछू राजा मित्र हैं और, दीक्षा सबन लई तिह ठौर ॥२२३२
तब श्रीपाल भ्रमें वन गाय, महा मुनीश्वर भयो सुभाय ।
चाले महाव्रतकी छाह, इन्द्रिय वन डारो छिन माहि ॥२२३३
दिढ चारित्त धरो जिय जोय, आठ वीस गुण पाले सोय ।
निज पद अराधे गुण राव, भ्रमें अकेलो चित्त सुभाव ॥२२३४
देय योग वन भीतर जाय, बहुत सहे उपसर्ग सुहाय ।

धरे ध्यान अति धीरो चित्त, ठाढा मानो मेरु पवित्त ॥२२३५.

卐 卐 卐

मास एक दिन लेय अहार, सहे परीसह बाईस सार ।
पावस ऋतु द्रुम तल सो रहे, ग्रीषम ऋतु गिरिपर दुख सहे ॥२२३६
शीतकाल सागरके तीर, योग देय दुःख सहे शरीर ।
बहुत भई अति क्षीणी देह, छाडे सबै सुख भव नेह ॥२२३७.
हित पटल तन छायो ताहि, सहे दुःख हिये जानत नाहि ।
एक ध्यान ठाडो सो रहे, कोऊ ताको भेद न लहे ॥२२३८.
कोऊ कहे चित्र निर्मयो, काहू ने पाषाणको चयो ।
कोऊ कहे काठकी देह, मन वच क्रम ऐसो थिर नेह ॥२२३९.
वनचर जीव न भय मन धरें, तासों देह घसे सुख करें ।
पंछी बैठे अरु उड जाय, ताकी संक न कछू कराय ॥ २२४०.

卐 卐 卐

हंस तूलकी सेजा वीर, जाहि सोवतो साहस धीर ।
गिरिकन्दरन शयन सो करे, कछू न दुःख मन आपन धरे ॥२२४१.
जो चलतो बहु दलबल साज, गय ऊपर जो चढतो गाज ।
क्षणहि सुखासन चढतो राव, मही पर कबहू न देतो पाव ॥ २२४२.
भ्रमें उघारे पांय न सोय, ताके चित्त महासुख होय ।
छत्रछांह चलतो दिन रात, रहतो सदा सुखमें गात ॥२२४३
ताके सिर पर ग्रीषम भान, महातपै को करे बखान ।
बरषा शीत परे असरार, सहे दुःख वनमें अधिकार ॥२२४४.
कृष्णागर बहु कुँकुम गार, चरचत तन निहार निहार ।
सो तुषार छायो ता देह, तब तैं अब यासो अति नेह ॥२२४५.
आठ सहस्र त्रिय रमतो जोय, सहे परीषा बाईस सोय ।
मन वच काय विचारे चित्त, जाने एक शत्रु अर मित्त ॥२२४६.

४३-श्रीपालका केवलज्ञान पाय मुक्ति जाना

दोहा ।

तप करता मन शुद्ध वर, कियो कर्मको नाश ।
ताको उपजो विमलपद, केवलज्ञान पयाश ॥२२४७

चौपाई ।

आसन कंपे देवन तनें, आये सुर सब जय जय भनें ।
धनपति निर्मायो शुभ थान, गन्धकुटि रचियो परधान ॥२२४८
कंचन मणि रतनन सा जरी, अति रमणीक विराजे खरी ।
उभय चमर दीनो सिर छत्र, चौसंगह वंदिया महत्र ॥२२४९
तीन प्रदक्षिणा दे सुर राव, लागो करन स्तुति धर भाव ।
जय जय अ ठकर्म निरदलन, जय जय प्रभु त्रिभुवनके शरन ॥२२५०
जय जय श्रीमंडल परमेश, जय जय मुनिगण व्रत उपदेश ।
सिद्धचक्र फल पावन देव, जय सुर नर असुर कृत सेव ॥२२५१
जन्म जरा मृति नाशनहार, जय मिथ्यातम खंडन सार ।
जय जय शुभफल चाखन कीर, जयजय प्रभु नाशनभवपीर ॥२२५२
जय जय काम कुंज हिम पूर, जय जय अघतम नाशन शूर ।
जय जय पंचमहाव्रत धरण, जय जय मोहवली वलहरण ॥२२५३
जय जय कोहसिंह हत वीर, जय जय धर्म धुरन्धर धीर ।
जय जय चौगयकंद निकंद, जय जय जग भंजन दुहदंद ॥२२५४
जय जय अरि जीतन शुभसंत, जय जय मुकति वधू रकंत ।
जय जय चरण धराधर शेष, जय जय भासुर मनहर भेष ॥२२५५
जय जय ज्ञान कोष मुनिराय, जय जय त्रिभुवन जीव सहाय ।
जय जय सम्यक्दर्शन शूर, जय जय मंह मही रुह चूर ॥२२५६

यहविधि स्तुति करी अनिवार, इन्द्र आदि सुर नए अपार ।
पणविवि सुरलोकां गए सवें, निज थानह मुनि बैठो तवें ॥२२५७॥
लोकालोक पयासो सोय, निर्मल वाणी ताकी होय ।
भव्य जीव प्रतिबोधे जैन, मिथ्या तिमिर विनाशो तेन ॥२२५८॥

सिद्धचक्र व्रत प्रगट ही करो, राग द्वेष सब ही परिहरो ।
धर्माधर्म प्रकाशन संत, भाषो जिन व्यवहार महंत ॥२२५९॥
कछुयक काल व्यतीतो जवें, कर्म घातिया चूरे सवें ।
फुनि श्रीपाल विमलपद गयो, अजरा अमर सिद्धसो भयो ॥२२६०॥

आठ महागुण पाई सिद्धि, परमानंद लही नव निधि ।
जन्म जरा तिन चूरो मरण, सो भयो स्वामी त्रिभुवन शरण ॥२२६१॥

❀ ❀ ❀

सुर नर गण गन्धर्व धर भाव, आराधैं मनमें कर चाव ।
दशवीं संधि पूरण भई, मूल देख भाषा वरणई ॥२२६२॥

दोहा ।

सिद्धचक्र व्रत प्रगट कर, पंच महाव्रत मांड ।
श्रीपाल मुकतिह गयो, भवदुःख सयल विछांड ॥ २२६३॥

छन्द त्रिभङ्गी ।

इति श्रीपाल चरित्रे महापुराणे भव्य संग मंगलकरणं ।
बुधजनमनरंजन पातकगंजन सिद्धचक्र विधि दुखहरणम् ॥
त्रिभुवन सुख कारण भवजल तारण चोपई बंध परिमल्ल कृतं ।
बहु राजहि कीनो जग जस लीनो बहु विभूतिको कर्ण कहं ॥
बहु सहसवी नारी बहु सुखकारी बहु नंदन बहु सुख लहं ।
पुरपाटण संचं परिग्रह गंछं पंच महाव्रतधार लयं ॥
शुभज्ञान उपायो त्रिभुवन गायो कोटीभट सो मुक्तिगयं ॥२२६४॥

चौपाई।

अरु मैनासुन्दरी व्रत लीन, करे महातप तन अति क्षीन।
सहे परीषा कहीय न जाय, नाना विधिको कहे बनाय ॥२२६५
कंचन वर्ण देह अवतरी, कुंकुम मंडित तिह पल घरी।
कामातुर रहती पिय संग, सो वन वसे सहे दुःख भँग ॥२२६६
अति सुवास कुंकुम रस गार, भूषत ही पत्रावली नार।
सरद महल रहती सुखवास, कुसम सेज सोवती उल्लास ॥२२६७
दीप जोति दहतिही जाहि, सुख लहती रतननकी छाहि।
मंदपवन वहती दिन रात, कुसमनकी वीजनी सुहात ॥२२६८
आप आयवो सिरे सुजान, दासी सेवत ही दिनमान।
मही वसन पहरती शरीर, पड़ती तहां स्वेदकी नीर ॥२२६९
अंजन मंजन भूषण साज, तन भूषण धरती पिय काज।
अंबुज दल रहती कर लिये, रहती पद पालिक पर दिये ॥२२७०
खाती अति सुगन्ध वनसार, सोभी तप करती अतिभार।
सो ठाढो गिरि पर सुकमाल, सिरपर तपै भान तिहूकाल ॥२२७१
भूपर भूल न धरती पाव, कोमल कमल नयन अधिकाव।
दासी लावती पोहपकी माल, अतिशरीर कोमल मन भाव ॥ २२७२
सिद्ध वरत उत यहकी वार, महि ऊपर सुवती शुभ सार।
तब पग देती मनो रसाल, श्याम वरण छिप तो वहुमाल ॥ २२७३

यह विधि जिन चैत्यालय जाय, मुनि वन्दती सयल सुख पाय।
अव सो वन मारग पग धरे, ग्रीषम ऋतु धरता पर जरे ॥२२७४
सरद सोम सम वदन विगास, यों मन करती पोष उपास।
ग्रीष्म महल माहि परभात, हो तो मलिन शीतको गात ॥ २२७५

हिम पलटन कर छायो सोय, पांडुरवरण कहे सब कोय ।
यह विधि कष्ट सहे वरनार, नाना विधिको कहे विचार ॥२२७६
संन्यास हि तन तजो शरीर, स्त्री परयाय उच्छेदो धीर ।
अच्युत स्वर्ग देव भयो तेह, अपचर कोटी भई ता गेह ॥२२७७
बाईस सागर आयु प्रमाण, विलसे सुखको कहे वखाण ।
बहुरो चय जय है शिव थान, ह्वै है सो परमेस प्रमान ॥२२७८
कुंदप्रभा राणी शुभ चित्त, उसही विधि तप करती नित्त ।
तन छ ड़ो सन्यास ही जोय, वैही स्वर्ग भयो सुर सोय ॥२२७९
रयनमंजूषा तप अति करो, पहुंची स्वर्ग महा सुख धरो ।
करो महातप और जे नार, शुभगति सबको भई विचार ॥२२८०

❀ ❀ ❀

यह श्री सिद्धचक्र फल सार, जो भव दुःख विनाशन हार ।
सब ही जीवनको है शरण, जन्म जरा नाशन शुभ करण ॥२२८१
भो मगधेश सुनो धर भाव, यह श्री सिद्धचक्र व्रत ध्याव ।
ऐसी विधि श्रेणिक नरपार, गणधर पै सुनियो शुभ सार ॥२२८२
मनमें गहो व्रत धर भाव, नाना विधि मन उपजो चाव ।
करे राज सो इन्द्र समान, कीरति महीमण्डल परवान ॥२२८३
मन वच क्रम बन्दो जिन नाह, पहुंचो नगरी बधो उछाह ।
हय गय रथ अरु दासी दास, अतुल लछ अरु भोगविलास ॥२२८४

दोहा ।

भुंजो सुख संसारको, श्रीपाल इन्द्र समान ।
सिद्धचक्र विधि पालकर, पहुंचो मुक्ति विलान ॥२२८५

चौपाई ।

अरु नरनारी उत्तम लोय, सिद्धचक्र आराधै कोय ।
मनको भरम देय छिटकाय, पूजे जंत्र हि थिर मन लाय ॥२२८६

तन्मध्ये श्रीनामसाहिधपने भूलोकवरविघते
तद्राज्यं सुरनाथ तुल्यगदितं तत्केन संवण्यते ॥२२९७॥
मत सजल्हर जात कुशलो नाम्नाचन्द्रो नयं
तत्पुत्रो गुरुरामदास विपुलो भुक्तंतु भोग्यं तदा।
तत्सूनुः कुलदीपवस्तुप्रगट नामासकरणा शुभं।
तत्पुत्रः परमल्लधर्म सदनं ग्रन्थौ हितेन क्रियते ॥

चौपाई।

गोपागिर गढ उत्तम थान, शूरवीर जह राजा मान।
ता आगे चन्दन चौधरी, कीरती सब जगमें विस्तरी ॥२२९९
जाति बरैया गुणह गम्भीर, अति प्रताप कुल रंजन धीर।
ता सुत रामदास परवान, ता सुत अस्ति महासुर ज्ञान ॥२३००
तास कुल मण्डन 'परिमल्ल', बसे आगरामें अरि सल्ल।
ता सम बुद्धिहीन नहि आन, तिन सुनियो श्रीपाल पुरान ॥२३०१
ताकी छाह कछु मति भई, यह श्रीपाल कथा वरणई।
नवरस मिश्रित गुणह निधान, ताको चौपाई कियो बखान ॥२३०२
होय अशुद्ध जहां पद हान, फेर सवारो कवियन जान।
बारबार जंपू कर जोर, बुधजन मोह देहु मत खोर ॥२३०३

बन्दूं जिनशासनको धर्म, जा पसाय नाशै अधर्म।
बन्दूं गुरु जे गुणके मूर, जिनसे होय ज्ञानको पूर ॥२३०४
बन्दूं शारदा जो जिन भनी, जातें सुमति होय अति घनी।
बन्दूं मुनिवर जे गुण धर्म, नवरस महिमा उदित कर्म ॥२३०५
बन्दूं सज्जन कुल सुख धाम, बन्दूं धर्म बुद्धि वरनाम।
जयवन्तो अकबर सुलतान, महिमा सागर महा सुजान ॥२३०६
जाके हृदय दयाको वास, जीवन कबहू देय न त्रास।
तामें एक अपूर्व रीति, सुरभी सो अति राखै प्रीति ॥

सुखसे जल पीवे तृण खांय, अपने मारग आवें जांय ।
तिनकी शंक सिंह मन धरे, अकबरके आयस तें डरे ॥२३०८
नृप अनेक सेवें दरबार, दुःखी दीन जनको आधार ।
सुखी भए जिन सेये पाय, विमुख भए दुःख लहैं अघाय ॥२३०९
परनारी परधन अति आहि, तिन पर कोऊ चक्षु न चाहि ।
सत्य राज महि मण्डल तेज, सुरपति हूं थे अधिक मजेज ॥२३१०

जाके नये ताके वर नये, विक्रम भोज सबै छिप गये ।
बसो नगर आगरो थान, जम्बूद्वीपमें प्रगट प्रधान ॥२३११
चहुंधा वन उपवन अति बने, नाना भांति महीरुह घने ।
अति उतंग गिरवर सम गेह, कंचनमय अति मंडित तेह ॥२३१२
अति रमणीक सुहट्ट बाजार, बसे तहां बहु संग अपार ।
तिनके विभव अन्तको लहै, दरशन दारिद मारग गहै ॥२३१३
जीव दया पाले दुख हरे, अशुभ बोल कबहूं न उच्चरे ।
आप आपने वित सब सुखी, कर्म्म योग शक्ति नर दुखी ॥२३१४

तहां कथा यह पूरण भई, कवि परिमल्ल अर्थ ले कई ।
अल्प बुद्धि मैं कियो बखान, फेरि सवारो गुनियन जान ॥२३१५
थिर मन कथा सुने जो कोय, मन वांछित फल पावे सोय ।
अरु जो पढे पढावे कहे, ताके पोते अशुभ न रहे ॥२३१६
अरु जो नर नारी व्रत करे, सो चहुंगतिको भरमन हरे ।
भव्यनको उपदेश बताय, निहचै सो नर मुक्ति हि जाय ॥२३१७

॥ इति श्रीपालचरित्र सम्पूर्णम् ॥